सत्यमेव जयते

गतिविधि मार्गदर्शिका

2018 और 2019

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस

मुख्य विषय

स्वच्छ, हरित और स्वस्थ राष्ट्र हेतु विज्ञान, तकनीक और नवाचार

राविप्रौसंप NCSTC

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्

का एक कार्यक्रम

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् का एक कार्यक्रम
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार

मुख्य विषय :

स्वच्छ, हरित एवं स्वस्थ राष्ट्र हेतु विज्ञान तकनीक एवं नवाचार

गतिविधि मार्गदर्शिका 2018 और 2019

उत्प्रेरण एवं सहयोग :

रविप्रौसंप NCSTC

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्,
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार
टेक्नोलॉजी भवन, न्यू मेहरॉली रोड, नई दिल्ली-110 016
टेली० : 011-26535564/226590251

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस-गतिविधि मार्गदर्शिका : राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, टेक्नोलॉजी भवन, न्यू मेहरौली रोड, नई दिल्ली-1100016 द्वारा प्रकाशित

सदस्य सूची : पुनरावलोकन तथा प्रलेखन

राष्ट्रीय अकादमिक समिति सदस्य :

श्री रघुनाथ टी०पी०
डॉ० पुलीन बिहारी चक्रवर्ती
डॉ० गीथा स्वामीनाथन
डॉ० ललित शर्मा
श्री जयन्त कुमार शर्मा
प्रो० ई० कुन्हीकृष्णन
ई० यू० एन० रविकुमार
श्रीमती दुन्यक आदो
श्री संदीप भट्टाचार्य

आमंत्रित सदस्य :

डॉ० अरुप कुमार मिश्रा
डॉ० जयदीप बरूआ
ई० विभूति रंजन भट्टाचार्य
सुश्री मानोशी गोस्वामी
श्री हिजाम मालम एच० सिंहा

राष्ट्रीय कार्यक्रम समन्वयक : ई० सुजीत बैनर्जी

इस पुस्तिका में संकलित सामग्री का उपयोग राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (छैब्ब्) विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार को आभार रेखांकित करते हुए स्वतंत्र तरीके से किया जा सकता है ।

मुद्रण एवं प्रबंधन :

असम विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद् (ASTEC)

विज्ञान भवन, जी० एस० रोड, गुवाहाटी-781 005

प्रस्तावना

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस (NCSC) बच्चों को महत्वपूर्ण सामाजिक समस्याओं के ऊपर सोचने का अवसर प्रदान करती है, कारण ढूँढ़ने के लिए प्रेरित करती है तथा विज्ञान-विधि अपना कर, हल ढूँढ़ने का मंच देती है। इस प्रक्रिया में नजदीक से केन्द्रित अवलोकन, संबंधित सवाल करना, विभिन्न संभव रास्ते से आगे बढ़ना तथा सर्वश्रेष्ठ हल पर पहुँचना है–इस रास्ते के प्रयोग का खाका बनाना, क्षेत्रीय अवलोकन, शोध एवं नवाचारी विचार प्रमुख अंग हैं। NCSC खोज प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करती है तथा नवाचार के साथ 'खुद करके सीखो' प्रक्रिया अपनाते हुए विज्ञान विधि का उपयोग स्थानीय क्षेत्र में करने पर बल देती है।

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (NCSTC) का लक्ष्य है कि खास कर बच्चों में विज्ञान एवं तकनीक को फैलाया जाय तथा परियोजना गतिविधि आधारित सीखने की प्रक्रिया को 'याद करने' की प्रणाली की जगह पर पुनर्स्थापित किया जाय। क्योंकि यह विधि महत्वपूर्ण तरीके से सोचने की शक्ति बढ़ाती है तथा प्रक्रियाओं पर प्रश्न खड़ा करने का अवसर देती है, जिससे ज्ञान की सीढ़ी दर सीढ़ी आत्मसात् किया जा सके तथा नये क्षेत्रों में ज्ञान बढ़ाया जा सके, जिससे विज्ञान के उच्चतम स्तर तक वे पहुँच पाये।

पिछले वर्षों में गतिविधि मार्गदर्शिका दो भागों में छपती थी जिसमें भाग-1 में साधारण कार्यक्रम निर्देश रहते थे। मुख्य विषय एवं उपविषय भाग-2 में रहते थे। पर हमारी सोच है कि चूंकि कार्यक्रम निर्देश में ज्यादा बदलाव नहीं रहता है, अतः इन्हें अलग-अलग पुस्तिका में प्रकाशित किया जाय।

इस पुस्तिका का केन्द्र बिन्दु वर्ष 2018 एवं 2019 के लिए मुख्य विषय एवं उपविषय **"स्वच्छ, हरित एवं स्वस्थ राष्ट्र हेतु विज्ञान तकनीक एवं नवाचार"** है। NCSC कार्यक्रम ने एक बार पुनः यह स्थापित किया है कि हम समय से आगे निकल रहे हैं तथा हमेशा हम विज्ञान एवं तकनीक के नाभिक-क्षेत्र को सामने रखते हैं, जिसमें टिकाऊ विकास के लक्ष्यों (SDG's) के परिप्रेक्ष्य में हम क्या-क्या कर पायेंगे, यह महत्वपूर्ण सिद्ध होगा।

मुझे विश्वास है कि बाल वैज्ञानिक, मार्गदर्शक शिक्षक, विशिष्ट वैज्ञानिक एवं अन्य सभी जो इस कार्यक्रम के सहभागी हैं उनके लिए यह पुस्तिका न सिर्फ आनेवाली बाल विज्ञान काँग्रेस (CSC) के लिए वरन भविष्य के लिए भी एक अच्छी स्रोत सामग्री एवं संदर्भ मार्गदर्शक का कार्य करेगी।

नई दिल्ली।

दिनांक-5 मार्च, 2018

(डॉ० चन्दरमोहन)

वैज्ञानिक 'G' / अध्यक्ष (NCSTC) एवं परामर्शी

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार

पुस्तिका के बारे में

बाल विज्ञान कांग्रेस (CSC) जिसकी शुरुआत 1993 में हुई थी, NCSTC–DST, भारत सरकार का प्रमुख कार्यक्रम रहा है तथा 2017 में यह रजत जयंती मना चुका है। यह एक समावेशी कार्यक्रम है जिसमें 10–17 वर्ष के बच्चे चाहे वे विद्यालय के छात्र हों या नहीं हों भाग ले सकते हैं। विभिन्न परिप्रेक्ष्य के सभी भू–सांस्कृतिक, भाषा से जुड़े बच्चे देश के दिव्यांग बच्चों को साथ लेकर वे इस कार्यक्रम के प्रतिभागी हो सकते हैं।

पिछले वर्षों में CSC कार्यक्रम विभिन्न विषयों पर केन्द्रित किया गया है जैसे–पर्यावरण, पोषण, भारत को स्वच्छ बनाये, जल संसाधन, जैवविविधता, भूमि संसाधन, ऊर्जा, मौसम एवं जलवायु जो कि 20 वर्षों से अधिक के कार्यकाल से जुड़ा था, सफल हुआ है तथा बाल वैज्ञानिकों के नवाचारी विचारों को लेकर परियोजनाओं के माध्यम से स्थानीय क्षेत्र की समस्याओं को लेकर आगे बढ़ता ही गया है।

प्रस्तुत गतिविधि मार्गदर्शक पुस्तिका – जिसका उपयोग NCSC–2018 एवं 2019 में हम करेंगे - राष्ट्रीय अकादमिक समिति द्वारा तैयार की गई है - राष्ट्रीय अकादमिक समिति का निर्माण NCSC के अकादमिक अंग की देख–रेख करने हेतु हुआ है तथा अहमदाबाद में संपन्न राष्ट्रीय ब्रेनस्टार्मिंग कार्यशाला (15–17 जून, 2017) तथा गुवाहाटी में संपन्न (13–16 फरवरी, 2018) उप समिति की गतिविधि के द्वारा अंतिम रूप दिया गया है, जहाँ अकादमिक समिति के सदस्यों के अलावा विशेष आमन्त्रित सदस्य भी उपस्थित थे।

मुख्य विषय एवं उपविषय समयाचीन है क्योंकि वे टिकाऊ विकास के लक्ष्यों (Sustainable Development Goals) पर केन्द्रित हैं तथा भारत सरकार इस प्रकार के कार्यक्रमों को विशेष महत्व दे रही है।

नई दिल्ली

दिनांक–5 मार्च, 2018

ई० सुजीत बैनर्जी

वैज्ञानिक श्श्ए एनसीएसटीसी–डी०एस०टी०, भारत सरकार

राष्ट्रीय कार्यक्रम समन्वयक, NCSC

धन्यवाद ज्ञापन

राष्ट्रीय अकादमिक समिति (जिसकी बैठक जून 2017 में अहमदाबाद में हुई थी) एवं कार्यकारी समूह, जो कार्यक्रम का खाका एवं मार्गदर्शक बिन्दु को अंतिम रूप देने के लिए गुवाहाटी में फरवरी 2018 में मिले थे–इनके ओर से मैं धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ। मैं NCSTC-DST, भारत सरकार को धन्यवाद देता हूँ कि वे इस पुस्तिका के प्रकाशन हेतु सहमत हुए तथा एक अलग से पुस्तिका उनके लिए भी बनी है जो इस कार्यक्रम के सहभागी हैं।

मैं डॉ० चन्दरमोहन, अध्यक्ष, NCSTC–DST, भारत सरकार का आभारी हूँ, कि उन्होंने राष्ट्रीय अकादमिक समिति में अपनी आस्था जताई है। वे NCSC कार्यक्रम के निदेशक रहे हैं तथा इस कार्यक्रम को सही रूप में राष्ट्रीय, ऐतिहासिक एवं लोकव्यापी कार्यक्रम बनाने में मदद की है। मैं ई० सुजीत बैनर्जी, कार्यक्रम के राष्ट्रीय समन्वयक का आभार प्रकट करता हूँ कि उन्होंने इसे सहायता एवं दिशा-निर्देशन प्रदान की है। वे हमारे लिए समूह लीडर से ज्यादा मित्रवत हैं तथा उनके सहयोग का प्रलेखन कर रहा हूँ।

मैं इस अवसर पर GUJCOST के सदस्य सचिव डॉ० नरोत्तम साहू एवं उनकी टीम का शुक्रिया अदा करता हूँ क्योंकि उन्होंने NAC के जून 2017 में संपन्न राष्ट्रीय ब्रेनस्टार्मिंग कार्यशाला की मेजबानी की तथा ASTEC, गुवाहाटी, विशेष कर इसके निदेशक, डॉ० अरुप कुमार मिश्रा, डॉ० जयदीप बरुआ, कार्यकारी अध्यक्ष, पर्यावरण विभाग एवं इनकी पूरी टीम का शुक्रगुजार हूँ, क्योंकि इन दोनों के सहयोग के बिना इतने कम समय की सूचना पर यह संपूर्ण कार्य संभव नहीं था।

अंत में मैं अपने सहभागी, राष्ट्रीय अकादमिक समिति एवं उप-समिति के सदस्यों तथा आमंत्रित सदस्यों डिजाइन समूह के सदस्यों का शुक्रगुजार हूँ जिन्होंने रात-रात भर जाग कर भी इस कार्य को पूरा किया है।

दिनांक-5 मार्च, 2018
स्थान-पुडुचेरी।

रघुनाथ टी०पी०
सभापति
राष्ट्रीय अकादमिक समिति, NCSC

हिन्दी संस्करण

आमुख

राबाविका-2018 एवं 2019 के लिए गतिविधि मार्गदर्शिका (मूल अंगरेजी भाषा) का हिंदी संस्करण सायंस फॉर सोसाइटी, बिहार (राज्य के विज्ञान कर्मियों, विज्ञान संचारक, शिक्षक, विश्वविद्यालयों के शोधार्थी का स्वयंसेवी संगठन) से जुड़े वैज्ञानिकों, संचार कर्मियों के द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

हम राष्ट्रीय अकादमिक समिति, राबाविका एवं असम विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद् के आभारी हैं कि सोसाइटी को यह कार्य संपादित करने का अवसर प्रदान किया गया है। हमारी कोशिश रही है कि मूल अंगरेजी के उद्धरणों का सरल शब्दावली में भाव-पूर्ण रूपांतरण कर पायें जिससे बाल-वैज्ञानिकों को समझने में आसानी हो तथा हम पाठक वर्ग के सुझाव एवं टिप्पणियों की आकांक्षा रखते हैं जिससे आने वाले वर्षों में हम यह कार्य कुशलता पूर्वक कर पायें। इस संस्करण में संदर्भ सामग्री एवं परिशिष्ट को मूल भाषा में ही रखा गया है।

रूपांतरण संपादन-समूह

प्रो० एस.पी.वर्मा, अध्यक्ष, भूतपूर्व प्रोफेसर, पटना विश्वविद्यालय

डॉ० एन. पी. राय, भूतपूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, बिहार विश्वविद्यालय

डॉ० एस.के.पी.सिन्हा, भूतपूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, भागलपुर विश्वविद्यालय

डॉ० कुमारी निमिषा, लेक्चरर, उच्च शिक्षा विभाग, बिहार सरकार

डॉ० विनय कुमार, कोषाध्यक्ष, रसायन विभाग, पटना विश्वविद्यालय

श्री उमेश कुमार, कार्यकारी सचिव

श्री दीपक कुमार, कम्प्यूटर-सेवाकर्मी

पटना - 5 मई, 2018

संपर्क सूत्र-
साइंस फॉर सोसाइटी, बिहार

संपादन-समूह
साइंस फॉर सोसाइटी, बिहार
रसायन विभाग, सायंस कॉलेज,
पटना विश्वविद्यालय, पटना-800 005
<sfsbihar@yahoo.com>
Tel. 0612-2673343 / 9661886543

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस (NCSC)

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस (जिला स्तर तथा राज्य स्तर पर बाल विज्ञान काँग्रेस) एक ऐसा मंच है जो बच्चों को सूक्ष्म स्तर पर छोटी-छोटी शोध गतिविधियाँ करने का अवसर देता है। इस कार्यक्रम की नींव मध्य प्रदेश में एक NGO ग्वालियर साइंस सेन्टर द्वारा डाली गई थी। बाद में इस कार्यक्रम को राष्ट्रीय स्तर तक फैलाने के लिए, इसे राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (NCSTC), विज्ञान एवं तकनीकी विभाग (DST), भारत सरकार ने अपना लिया। राष्ट्रीय आयोजक के रूप में प्रारम्भ में इसे NCSTC–Network (सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाएँ जो विज्ञान के संचार एवम् प्रसार के लिए काम कर रही हैं) द्वारा समन्वित किया गया। सन् 2014 से इस कार्यक्रम का आयोजन, NCSTC, DST द्वारा राष्ट्रीय शैक्षिक समिति (National Academic Committee) के सहयोग तथा दिशा-निर्देशों के अनुसार हो रहा है। राष्ट्रीय शैक्षिक समिति, NCSTC, DST, भारत सरकार द्वारा गठित अनुभवी शैक्षिक स्रोत व्यक्तियों का मुख्य समूह है।

एक समय था, जब राष्ट्र के अधिकतर विज्ञान संचारकों का समूह विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिए भारत जन विज्ञान जत्था (1987) तथा भारत जन ज्ञान विज्ञान जत्था (1992) जैसे कार्यक्रमों में लिप्त था। उसी समय यह महसूस किया गया कि जनमानस में विज्ञान के प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए इस तरह के व्यापक कार्यक्रमों की निरंतरता बनी रहनी चाहिए। अतः सन् 1993 में राष्ट्रीय कार्यक्रम के रूप में बाल विज्ञान काँग्रेस का शुभारंभ किया गया। इस कार्यक्रम के पीछे की उम्मीद है कि यह बच्चों अभिभावकों तथा शिक्षकों में वैज्ञानिक चेतना का विकास, वैज्ञानिक जागरूकता को बढ़ाना तथा बच्चों के बीच में वैज्ञानिक तरीकों की समझ को बढ़ायेगा, जिससे लंबे समय में समाज को काफी अधिक फायदा पहुँचाएगा। इसलिए 1993 से CSC का यह कार्यक्रम सफलतापूर्वक संचालित किया जा रहा है।

NCSC के पच्चीस वर्षों में पहली बार हमलोग कार्यक्रम के दिशानिर्देशों की एक अलग पुस्तिका तथा एक अलग गतिविधि मार्गदर्शिका प्रकाशित कर रहे हैं जो सिर्फ दो सालों तक के लिए निर्धारित मुख्य विषय तथा उपविषयों से संबंधित है। यह गतिविधि मार्गदर्शिका वर्ष 2018 तथा 2019 के लिए निर्धारित विशिष्ट मुख्य विषय–"स्वच्छ, हरित और स्वस्थ राष्ट्र हेतु विज्ञान, तकनीक और नवाचार" है। राष्ट्रीय कार्यक्रम निदेशक की सहमति से NAC की उपसमिति ने एक प्रतीक चिन्ह (logo) की अवधारणा बनाई तथा अंतिम रूप दिया है, जिसका उपयोग इन वर्षों में सभी हितधारकों द्वारा किया जा सकता है। NCSC का यह प्रतीक चिन्ह इसे अगले स्तर तक पहुँचाता है और यह कार्यक्रम भारत सरकार का एक प्रमुख कार्यक्रम बन गया है। यह अद्वितीय प्रतीक चिन्ह मुख्य विषय को विशेष पहचान दे रहा है।

SCIENCE, TECHNOLOGY AND INNOVATION FOR A
CLEAN, GREEN AND HEALTHY NATION

सदस्य : राष्ट्रीय अकादमिक समिति

स डॉ० पुलिन बी० चक्रवर्ती
स श्री जयंत कुमार शर्मा
स श्री संदीप भट्टाचार्या
स डॉ० गीथा स्वामीनाथन
स डॉ० ललित शर्मा
स ई० यू०एन० रविकुमार
स प्रो० ई० कुन्हीकृष्णन
स डॉ० प्रतिभा जौली
स डॉ० संजीत सिंह
स डॉ० दिव्या बंसल
स डॉ० मेघा सकलानी
स डॉ० सुनील दूबे
स सुश्री दुन्यक आदो
स डॉ० के० श्रीनिवास
स डॉ० गिरीश कुमार
स डॉ० अनिल कोठारी
स डॉ० अपूर्व बार्वे
स डॉ० मेघा शलील भट्ट

अनुक्रमणिका

1.	मुख्य विषय : स्वच्छ, हरित और स्वस्थ राष्ट हेतु विज्ञान, तकनीक और नवाचार	– 1
2.	उपविषय 1 : पारितंत्र एवम् पारितंत्र सेवायें	– 7
3.	उपविषय 2 : स्वास्थ्य, स्वच्छता और सफाई-व्यवस्था	– 43
4.	उपविषय 3 : कचरे से समृद्धि	– 61
5.	उपविषय 4 : समाज, संस्कृति एवं आजीविका	– 95
6.	उपविषय 5 : पारंपरिक ज्ञान प्रणाली	– 119

परिशिष्ट-I:	प्रयोग क्या है ?	–153
परिशिष्ट-II:	समाज विज्ञान में शोध हेतु "प्रश्नावली" तैयार करने की मार्गदर्शिका	– 155
परिशिष्ट-III:	List of Environmental Information System (ENVIS) centres and their weblinks	– 158
परिशिष्ट-IV:	Form-A	– 160

NCSC 2018 तथा 2019

मुख्य विषय

स्वच्छ, हरित और स्वस्थ राष्ट्र

हेतु विज्ञान, तकनीक और नवाचार

स्वच्छ, हरित और स्वस्थ राष्ट्र हेतु
विज्ञान, तकनीक और नवाचार

जब से कल्याणकारी अर्थशास्त्र की संकल्पना का विकास शुरू हुआ है, उसी समय से इसकी योजना और विकास के परिप्रेक्ष्य में स्वच्छ, हरित और स्वस्थ जैसे सामान्य शब्द चर्चा का विषय बन गए हैं। इसकी शुरुआत उपयोगिता को सामाजिक कल्याण के लिए मौद्रिक मूल्य से नापने से हुई जहाँ जीवन काल, प्रति व्यक्ति आय, साक्षरता, रोजगार दर इत्यादि को केवल सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product) के बदले एक सूचक के रूप में माना जाने लगा। इन विचारों के बढ़ने से लम्बे और स्वस्थ जीवन की व्यापक समझ, रहन-सहन के स्तर का ज्ञान, आदमी और महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन को देखते हुए जेंडर डेवलेपमेन्ट इन्डेक्स (Gender Development dex) जैसी सोच बनी।

हाँलाकि ये सारे प्रयास कम या अधिक मानव केंद्रित प्रकृति के हैं, जब मनुष्य के विकास के आकलन की मुख्य प्राथमिकता में पारितंत्र की स्थिति नहीं थी। टिकाऊ विकास की संकल्पना में ब्रुटलैंड समिति की रिपोर्ट ने अर्थव्यवस्था, पारितंत्र और समाज को आपस में जोड़ कर एक नई सोच दी तथा टिकाऊ विकास की कार्यात्मकता को बढ़ाया। यहाँ पारितंत्र अथवा पारितांत्रिक टिकाऊपन का अर्थ है–पारितंत्र की समग्रता, वहन करने की क्षमता, विकास, उन्नति, उत्पादकता और जमीनी लाभ, जहाँ सामाजिक टिकाऊपन निष्पक्षता, सशक्तिकरण, उपलब्धता, उत्पादकता, सांस्कृतिक परिचय की साझेदारी और संस्थागत स्थिरता पर केन्द्रित करता है। आधुनिक समय में, विकास की चुनौतियों की समीक्षा करने के बाद सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य या मिलेनियम डेवलपमेंट गोल (MDG) की अवधारणा सन् 2000 में बनी। यह सहस्त्राब्दी विकास के लक्ष्य (MDG) मुख्य रूप से भूख और गरीबी उन्मूलन, सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा को पाना, लैंगिक समानता, बाल मृत्यु दर में कमी, मातृस्वास्थ्य को बढ़ावा देना तथा इसके लक्ष्यों से पर्यावरणीय टिकऊपन को बढ़ावा देने पर केन्द्रित है।

बाद में जुलाई, 2014 में सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य की प्रगति को देखते हुए, संयुक्त राष्ट्र की सामान्य परिषद् के Open Working Group (OWG) ने 17 लक्ष्यों के साथ एक नए एजेंडे को बनाया जिसे सितम्बर 2015 में सामान्य परिषद् के अनुमोदन के लिए सामने रखा गया। इस दस्तावेज ने 2015-2030 तक फैलने वाले वैश्विक विकास एजेन्डा तथा टिकाऊ विकास लक्ष्य (SDGs) के लिए एक आधार बनाया। टिकाऊ विकास के लक्ष्य में, साफ-सफाई, पर्यावरणीय अनुकूल सफाई-व्यवस्था और स्वास्थ्य को ऐसी बातों पर जोर देते हुए केन्द्रित किया गया जहाँ गरीबी न हो, भूख न हो, अच्छा स्वास्थ्य और तंदुरुस्ती हो, साफ पानी तथा सफाई व्यवस्था, समझदारी से उपभोग तथा उत्पादन, जलवायु कार्य, पानी के नीचे जीवन, थल पर जीवन अन्य लक्ष्यों के साथ ये निर्धारित लक्ष्य, लक्ष्य-1, 2, 6, 12, 13, 14 तथा 15 हैं। यहाँ पर यह बात गौर करने वाली है कि टिकाऊ विकास की तरह ही भारत ने अपना स्वच्छ भारत मिशन (स्वच्छ भारत अभियान) 2014 में शुरु किया है। इस परिप्रेक्ष्य में विज्ञान के उपयोग से लाभ, उपयुक्त तकनीक को बढ़ावा और क्षमता निर्माण, SDG के लक्ष्य को लागू करने और दूसरे राष्ट्रीय मिशन के साधन हैं। इसलिए राष्ट्रीय बाल विज्ञान काँग्रेस 2018 और 2019 के लिए मुख्य विषय–**"स्वच्छ, हरित और स्वस्थ राष्ट्र हेतु विज्ञान, तकनीक और नवाचार"** निर्धारित किया गया है। उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में कार्यकारी स्वरूप और वांछित आयाम को देखते हुए इस मुख्य विषय की परिकल्पना की गई है।

Table-1 (मुख्य विषय में दिए गए प्रमुख शब्दों की कार्यिक परिभाषा)

प्रमुख पहलू	व्यापक विचार बिन्दु	परिणाम के वांछित आयाम
विज्ञान	निरीक्षण, मापन, वर्गीकरण, तुलना, परीक्षण, विवेचन, संक्षिप्तीकरण, निष्कर्ष जैसे उपायों को मानते हुए ज्ञान अर्जित करने का तरीका	"ज्ञान से अज्ञान तक ले जाने वाला" अथवा सामान्य से विशिष्ट
तकनीक	ज्ञान की वह शाखा जो तकनीकी साधन का निर्माण और उपयोग तथा जीवन, समाज और पर्यावरण के साथ उनके अंतर्संबंध को बताती है।	प्रायोगिक अंत के लिए ज्ञान और समझ का उपयोग। निश्चित प्रक्रिया तथा साधन के द्वारा ज्ञान के उपयोग के द्वारा निकाले गए उपाय। ये प्रक्रियाएँ सिद्धांत को मानने वाली तथा समस्या को सुलझाने का साधन है।
नवाचार	नए विचार, प्रक्रिया, साधन अथवा तरीका	यह एक नई प्रक्रिया / पद्धति / उपाय / साधन / उत्पाद हो सकता है जो आगामी टिकाऊ राष्ट्र निर्माण के प्रबंधन तथा हरित, स्वच्छ और स्वस्थ समाज बनाने में मदद करे।
हरित	पर्यावरणीय अथवा पारिस्थितिक तंत्र टिकाऊपन (भौतिक और मानव पर्यावरण को देखते हुए) की तरफ ले जाने वाला एक विचार	पर्यावरणीय टिकाऊपन को पाने की एक पहुँच / प्रक्रिया / साधन जो मानव निर्मित और प्राकृतिक तत्त्वों से बने पारितंत्र की धारणीय क्षमता को बढ़ाए
स्वच्छ	स्वास्थकर अवस्था की स्थिति जिसमें संदूषण (Contamination) धूल, संक्रमण तथा मिलावट की अनुपस्थिति हो (राष्ट्रीय मानदंड, नियम, कानून इत्यादि के द्वारा बनाए गए मानक के अनुसार)	भौतिक और मानव पर्यावरण के टिकाऊपन को स्वच्छ स्थिति के साथ जोड़ने की एक पहुँच / प्रक्रिया / साधन
स्वस्थ	यह भौतिक पर्यावरण और अच्छे शारीरिक और मानसिक स्थिति की सामान्य संतुलन वाली स्थिति है।	यह पर्यावरण की भलाई के लिए एक पहुँच / प्रक्रिया / साधन है।
राष्ट्र	राष्ट्र एक देश है, जिसकी निश्चित भौतिक, पर्यावरणीय सामाजिक और राजनीतिक संरचना हो। यह देश में रहने वाले लोग भी हैं। इस परिप्रेक्ष्य में समस्या की समझ रखने का हमारा मुद्दा किस तरह टिकाऊ विकास की तरफ देश की प्रगति में सहायक होता है।	"वैश्विक सोच और स्थानीय स्तर पर कार्य" के सिद्धांत के साथ राष्ट्रीय विकास और प्रगति को पाने की एक पहुँच / प्रक्रिया / साधन है।

सफाई-व्यवस्था और स्वास्थ्य के साथ, वास्तव में सामान्य रूप से प्राकृतिक संसाधन तथा विशिष्ट रूप से जल पारितंत्र, अर्थव्यवस्था तथा समाज के अविभाज्य टुकड़े हैं। पारितंत्र, अर्थव्यवस्था और समाज का टिकाऊपन, प्राकृतिक स्रोतों के टिकाऊ प्रबंधन, पानी और सफाई-व्यवस्था से जुड़ी प्रक्रियाएँ और प्रबंधन पर निर्भर करता है, जो स्वास्थ्य और पर्यावरणीय सुरक्षा की स्थिति को बनाए रखता है। जैविक और अजैविक गुणों के साथ, किसी भी क्षेत्र का पारिस्थितिक आधार, प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता और पारिस्थितिक सेवाओं को निर्धारित करता है। प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग तथा जुड़ी प्रक्रियाएँ पारिस्थितिक सुरक्षा पर आए खतरे के लिए जिम्मेदार है। प्राकृतिक संसाधनों का दोहन जब उसकी धारण करने की क्षमता से बढ़ जाता है, तब पारितंत्र के स्वास्थ्य पर असर के साथ-साथ पारिस्थितिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होती है। दूसरी तरफ, सफाई-व्यवस्था की कार्य प्रणाली की आदतें, न सिर्फ जल की गुणवत्ता के कम होने का मुख्य कारण है, बल्कि पर्यावरणीय सेवाओं में भी अधोगति का कारण है।

सफाई-व्यवस्था का सामान्य अर्थ है–मानव और घरेलू अपशिष्ट के निपटारे के लिए सुविधाओं और सेवाओं का प्रावधान। सफाई-व्यवस्था से मतलब है, कचरा और अपशिष्ट जल-प्रबंधन के साथ स्वस्थकर स्थिति को बनाए रखना भी है। इसलिए स्वच्छता, सफाई व्यवस्था से जुड़ी है, जिसका अर्थ है वैसी स्थिति और कार्यप्रणाली जो बीमारी को फैलने से रोके तथा अच्छी स्वास्थ्य स्थिति और कार्यप्रणाली जो बीमारी को फैलने से रोके तथा अच्छी स्वास्थ्य स्थिति को बनाए रखें। स्वच्छता में वो सारी परिस्थितियाँ और कार्यप्रणाली निहित है जैसे-जीवनशैली से जुड़े मुद्दे, घर और उपयोगी सामान जो सुरक्षित और स्वस्थ पर्यावरण को खतरे में डालते हैं। घर तथा दैनिक जीवन में अपनाई गई स्वच्छता, संक्रामक बीमारियों को फैलने से रोकने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके अंतर्गत विभिन्न घरेलू परिस्थितियों में किए गए उपाय, जिनमें हाथ की स्वच्छता, श्वसन, भोजन और पानी सामान्य घरेलू स्वच्छता (पर्यावरणीय तथा सतही) पालतू पशुओं की सेवा और घरेलू स्वास्थ्य सेवा (उनलोगों की देखभाल जिनमें संक्रमण का खतरा अधिक है) शामिल हैं।

इन मुद्दों पर वैज्ञानिक सोच, परीक्षण तथा विवेचन, जल के दोहन की तकनीकें, उसका विवेकपूर्ण उपयोग और प्रबंधन के साथ-साथ पीने के पानी के उपचार तथा संग्रहण में सहायक है। इसके साथ ही यह तीन 'R' के सिद्धांत कम करना (Reduce), पुनर्उपयोग (Reuse) तथा पुनर्चक्रण (Recycle) पर सफाई-व्यवस्था का प्रबंधन भी करता है। वैसे क्षेत्रों में अपरोक्ष रूप से स्थानीय तथा क्षेत्रीय मुद्दों पर सोचने से हमें नवाचारी सोच तथा नए समाधान मिल सकते हैं। साथ ही साथ व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक तथा सामुदायिक प्रबंधन की आवश्यकता है। प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन, संतुलित पारिस्थितिक तंत्र को बनाए रखना, सफाई-व्यवस्था तथा मनुष्य की स्वास्थ्य सुरक्षा, इस आपस में जुड़े विश्व के लिए एक वैश्विक तथा राष्ट्रीय के साथ-साथ क्षेत्रीय तथा स्थानीय मुद्दा है।

रूपरेखा :

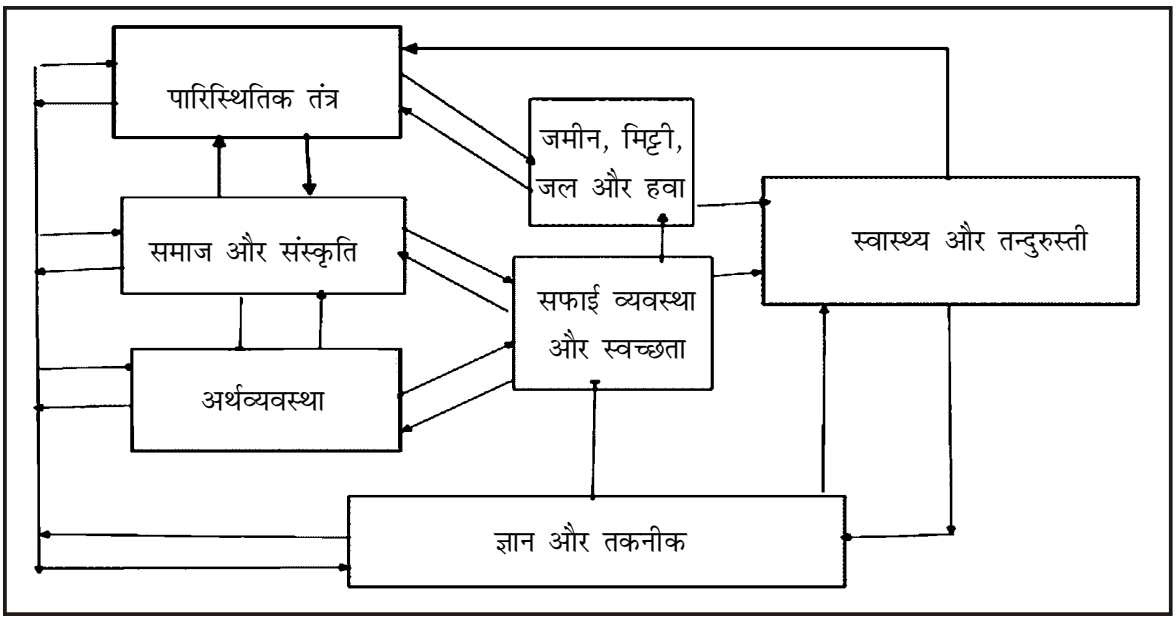

एक राष्ट्र के संपूर्ण स्वास्थ्य को देखते हुए समाज और संस्कृति की भूमिका तथा आजीविका, जीवनशैली और सर्वोपरि टिकाऊ प्रगति के बीच आपसी संबंध को नकारा नहीं जा सकता है। परिभाषा के अनुसार, स्वच्छ और हरित तकनीक का पारिस्थितिक तंत्र, अर्थव्यवस्था और सामाजिक स्वास्थ्य पर धनात्मक असर, समाज में टिकाऊपन को बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। हमें यह भी खोजना चाहिए कि किस तरह से स्थानीय अनुभव, आर्थिक क्रियाकलाप तथा स्रोत-प्रबंधन की पहुँच से स्थानीय ज्ञान पर आधारित प्रक्रियाओं का अभ्युदय हुआ जिसने समाज के संपूर्ण स्वास्थ्य को और मजबूती दी। इन प्रणालियों में मूल्यांकन, मान्यता, पुनः संयोजन, स्रोत का विनाश, जलवायु परिवर्तन खतरा, इत्यादि जैसे खतरों को रोकने की कुंजी है। इसके अतिरिक्त यह अनवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों के तर्कहीन उपयोग तथा तकनीकों के द्वारा पारितंत्र पर होने वाले ऋणात्मक असर को भी कम करता है।

इन आयामों के आधार पर, बाल विज्ञान काँग्रेस के मुख्य विषय के अंतर्गत निम्नलिखित उपविषयों को लिया गया है। यह बच्चों की अन्वेषण आधारित वैज्ञानिक समझ को बढ़ावा देने के लिए सन् 2018 तथा 2019 के लिए लिया गया है। यह उनके आस-पास, पाठ्यक्रम संबंधी, देख समझ कर सीखने तथा अनुभवात्मक सीख पर आधारित है।

1) पारितंत्र और पारितंत्र सेवाएँ
2) स्वास्थ्य, स्वच्छता और सफाई-व्यवस्था
3) कचरे से समृद्धि
4) समाज, संस्कृति और आजीविका
5) पारंपरिक ज्ञान प्रणाली

Meeting point for inclusiveness:

It is very essential to guide the Person with Disabilities (PWD) for NCSC project work with respect to their potentialities. In relation to the present focal theme and sub-themes, it is expected that one can think on the specific issues related to access to Natural Resources Manegment(NRM), Health, Energy, Food, Nutrition, Hygiene (specially for people with orthopedic impairments having no mobility crawling on streets etc), equity, quality, impact due to lack of NRM to PWDs, study related to problems of PWDs in certain hostile eco-systems, problems related to Disasters with special focus on PWDs as they are the most affected ones, problems of livelihoods (and lifestyles also) for PWDs etc. One can also think of accessibility audit of public buildings, validating inclusive, innovative teaching methodologies, studies related to validation and field testing of accessibility gadgets and improving them with users' feedback, and many more.

End note

1. http://www.economicsdiscussion.net/essays/essay-on-welfare-economics/18053
2. http://policonomics.com/fundamental-theorems-of-welfare-economics/
3. http://hdr.undp.org/sites/default/files/hdr2016_technical_notes.pdf
4. PisaniJacobus A. Du (2006) " Sustainable development- historical roots of the concept", Environmental Science, 3 (2), 83-96; http://www.tandfonline.com/doi/pdf/10.1080/15693430600688831
5. Kahn, M. 1995 . "Concepts, definitions, and key issues in sustainable development: the outlook for the future". Pro-ceedings of the 1995 International Sustainable Development Research Conference, Manchester, England, Mar. 27- 28,1995,, Keynote Paper, 2-13.
6. McArthur John W. (2014), " The Origin of the millennium development goal" SAIS Review, vol. XXXIV, no. 2 (summer –fall), pp.5 -24 ; http://johnmcarthur.com/wp-content/uploads/2015/01/SAISreview2014mcarthur.pdf
7. http://www.sdgfund.org/mdgs-sdgs;
8. http://www.undp.org/content/undp/en/home/sustainable-development-goals.html
9. http://www.pmindia.gov.in/en/government_tr_rec/swachh-bharat-abhiyan-2/
10. It is the benefits obtained from ecosystems. These include provisioning services, such as food and water; regulating services, such as regulation of floods, draught, land degradation and disease; supporting services such as soil formation and nutrient cycling and cultural services such as recreational, spiritual, religious and other non-material benefits.
11. http://www.who.int/topics/sanitation/en/; retrieved on 27.04.17
12. http://www.who.int/topics/hygiene/en/; retrieved on 27.04.17
13. UNSECO Discussion paper on " Water in the post-2015 development agenda and sustainable development goals" UNESCO International Hydrological Programme Paris, France 2014

उपविषय–I

पारितंत्र एवम् पारितंत्र सेवायें

पारितंत्र एवम् पारितंत्र सेवायें

पृष्ठभूमि :

किसी एक क्षेत्र में पाये जाने वाले सभी वनस्पतियों एवं प्राणियों उनकी अंत:प्रक्रिया और उनपर पड़ने वाले वातावरण के प्रभाव के समग्र संकल्पना को "पारितंत्र" कहते हैं। सृष्टि के दो प्रमुख घटक क्रमश: जैविक (Biotic) तथा अजैविक (Abiotic) होते हैं। जैविक घटक में सभी प्रकार के पौधे तथा जन्तु आते हैं। अजैविक घटक के अन्तर्गत मौसम, जलवायु, सूर्य का प्रकाश, मृदा तथा जल आते हैं। पारितंत्र के अन्तर्गत जैवमण्डल में मौजूद बायोटिक घटकों के बीच होने वाली अन्तर्प्रक्रियाओं के प्रभाव के साथ-साथ अजैविक घटकों के साथ होने वाली अन्तर्प्रक्रियाओं के प्रभाव का अध्ययन है। इस प्रकार पारितंत्र प्रकृति की किसी क्षेत्र के पौधे, जन्तु तथा वातावरण के बीच होने वाली अन्तर्प्रक्रियाओं, की कार्यात्मक इकाई है। जैविक घटकों यानि पौधे तथा जानवरों में अपनी समृष्टि के बीच क्रिया-प्रतिक्रिया होती रहती है। साथ ही इनकी क्रियाओं पर वातावरण का भी प्रभाव पड़ता है। वातावरण यानि अजैविक घटक भी जैविक घटकों द्वारा प्रभावित होता है। इन अन्तर्प्रक्रियाओं के फलस्वरूप पारितंत्र में संतुलन बना रहता है। जैविक तथा अजैविक घटकों की प्रकृति स्थान विशेष पर निर्भर करती है। इस संतुलन के फलस्वरूप जीवों का अस्तित्व बनाये रखने में मदद मिलती है।

पारितंत्र की सेवाओं का तात्पर्य पारितंत्र के पर्यावर्णीय कार्य से होने वाले लाभ या उपयोगिता से है। इस प्रकार के कार्य किसी भी क्षेत्र या आवास में स्थित सभी जीवों को लाभ पहुँचाता है चाहे वे पौधे, जन्तु या मनुष्य ही हों। इस पृथ्वी पर मौजूद करोड़ों जीव अपने अन्दर होने वाली चयापचय क्रियाओं के लिए ऊर्जा प्रत्यक्ष रूप से पौधे अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सभी जन्तु सूर्य से प्राप्त करते हैं। जन्तु तथा सूक्ष्मजीवी हरे पौधे से भोज्यपदार्थ प्राप्त कर ऊर्जा प्राप्त करते हैं। पौधे से जानवर तथा सूक्ष्मजीव अपना भोजन अनेक तरीकों से प्राप्त करते हैं जैसे शिकारी के रूप में, परजीविता या विघटन कर जीवन-यापन तथा प्रजनन की क्षमता बनाये रखने हेतु जीव ऊर्जा का उपयोग करते हैं। पौधे अधिकांश पौष्टिक तत्व मृदा या जल से प्राप्त करते हैं, जबकि प्राणियों में दूसरे जीवों से पौष्टिक तत्व ग्रहण करने की प्रवृत्ति होती है। सूक्ष्मजीव पौष्टिक पदार्थ प्राप्त करने में बहुमुखी होते हैं तथा वे अपने लिए पौष्टिक तत्व मृदा, जल, भोज्य पदार्थ अथवा दूसरे जीवों से प्राप्त करते हैं।

पारितंत्र की संकल्पना को जन समुदाय द्वारा पहचान तब मिली जब महासचिव, संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मिलेनियम इकोसिस्टम असेसमेन्ट शुरू किया गया। यह 2005 में सम्पन्न हुआ। पारितंत्र सेवायें मनुष्य के स्वास्थ्य, सुरक्षा, सामाजिक संबंध तथा भौतिक अच्छाई पर पड़नेवाले वास्तविक असर को अतिप्रसारित करने हेतु एक विचारात्मक फ्रेमवर्क विकसित किया गया है जिनमें सभी सम्बन्धित सामग्रियों या अवयवों को चार श्रेणियों में बाँटा गया है।

अस्थायी लाभ या उपयोगिता से प्राप्त उत्पाद	**भूमि / मृदा नियंत्रक लाभ** पारितंत्र क्रियाओं का नियंत्रण कर उपयोगी या लाभदायक बनाना	**सामाजिक सांस्कृतिक लाभ या उपयोगिता** इकोसिस्टम से अपदार्थीय लाभ
• भोज्य पदार्थ • स्वच्छ जल • ईंधन के लिए लकड़ी • रेशे • जैव रासायनिक पदार्थ • अनुवांशिक संसाधन	• जलवायु नियंत्रण • जल नियंत्रण • रोग नियंत्रण • परागण नियंत्रण • जल शुद्धिकरण	• मनोरंजन • सौन्दर्यात्मक (Aesthetic) • शैक्षणिक • धरोहर • आध्यात्मिक

सहायता या समर्थन प्रदान करने वाला लाभ अन्य सभी पारितंत्र के लिए आवश्यक उत्पाद प्रदान करना

मृदा का निर्माण | पौष्टिक तत्वों का चक्र | प्राथमिक उत्पाद

Fig. 1.1 Classification of ecosystem services developed by the Millennium Ecosystem Assessment Sources (MEA) 2005

एक तरह से देखा जाये तो पृथ्वी का समग्र जैवमण्डल एक पारितंत्र है क्योंकि इसका प्रत्येक अवयव एक दूसरे से क्रिया-प्रतिक्रिया करता है। पर विभिन्न कारकों जैसे जीवों का वितरण जैव-भौतिक वातावरण तथा क्षेत्रों के बीच अन्तर्प्रक्रिया के आधार पर क्षेत्र विशेष के पारितंत्र का ध्यान में रख वर्गीकरण किया जाय तो अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा निम्नलिखित इकोसिस्टम की पहचान की गई है

बॉक्स 1.1

अन्तर्राष्ट्रीय चिन्हित प्राकृतिक पारितंत्र

1.	समुद्री	2.	तटीय (समुद्र का किनारा)
3.	अन्तर्देशीय जल	4.	वन या जंगल
5.	शुष्क भूमि	6.	द्वीप या प्रायद्वीप
7.	पर्वत	8.	ध्रुवीय (पोलर)

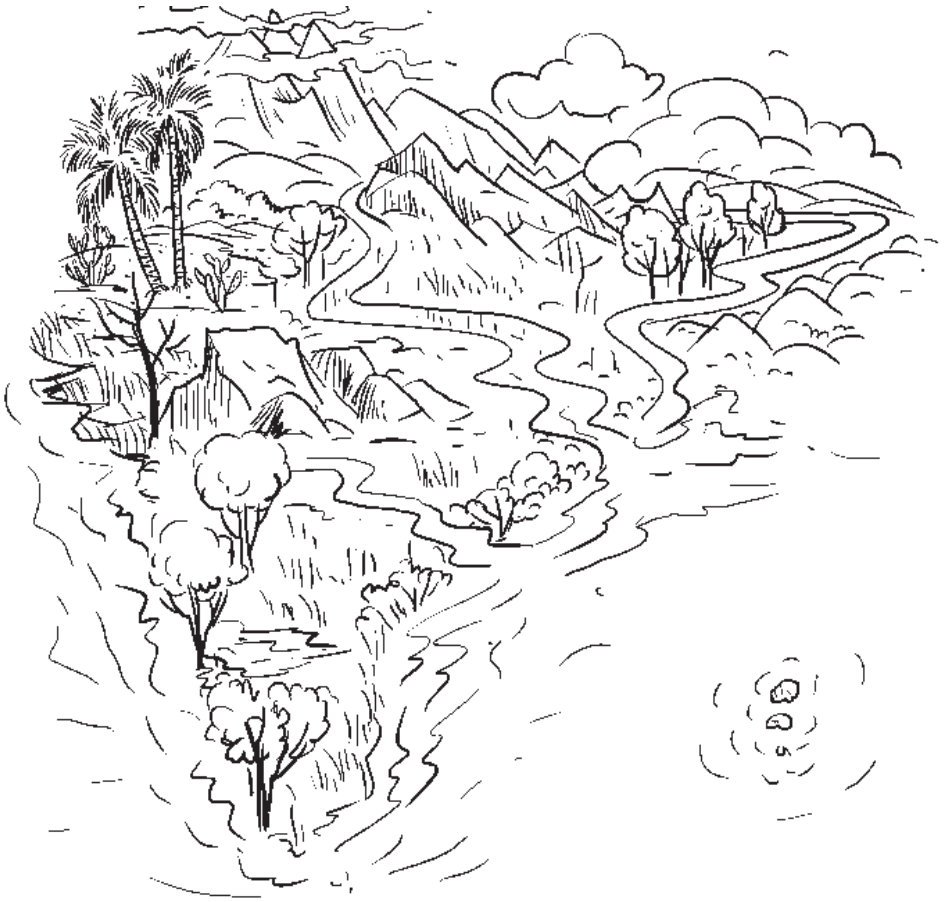

1.2 भारतीय संदर्भ में पारितंत्र :

भारतवर्ष में स्पष्ट रूप से विभिन्न स्थलाकृतिक या भूआकृतिक (Physio graphical) प्रदेश हैं यथा उत्तरी पर्वतीय दक्षिणी पठारी, गंगा-सिन्धु का मैदानी भाग, मरूभूमि तथा समुद्र तटीय क्षेत्र। इनके अतिरिक्त विस्तृत उष्ण, समशीतोष्ण आर्द्र, उपउष्ण, मरूभूमि तथा पर्वतीय क्षेत्र है। भारतवर्ष में पन्द्रह कृषि-जलवायु क्षेत्र हैं जो दस विभिन्न प्रकार के जैव-भौगोलिक प्रदेशों से सम्बन्धित है। उपर्युक्त भू-पारितांत्रिक अवस्थायें विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय प्रदेश का निर्माण किये हैं जहाँ पारितंत्र की स्थिति तथा कार्यप्रणाली में भिन्नता पायी जाती है। विशेष कर फ्लोरा (पादप जातियों), फाँना (जन्तु जातियों) तथा की स्टोन प्रजातियाँ या फ्लैगशिप प्रजातियों में।

भारतवर्ष के पारिस्थितिकी प्रदेश–

सम्पूर्ण संसार में भारतवर्ष एक विशाल जैवविविधता का क्षेत्र है। इसका कारण यहाँ विभिन्न प्रकार के पारितंत्र का मौजूद होना है। विभिन्न प्रकार के पारितंत्र में जैविक घटक में भी विविधता पाई जाती है। वैज्ञानिकों ने भारतवर्ष को निम्नलिखित भौगोलिक क्षेत्रों में बाँटा है–

(1) हिमालय पर्वतीय क्षेत्र (2) उत्तरी पठार (3) पेनीसुलर पठार (4) मरूभूमि (5) तटीय क्षेत्र (6) मैदानी भाग (7) प्रायद्वीप (8) उष्ण आर्द्र सदाबहार जंगल (9) पतझड़ वाले जंगल (10) कटीले जंगल (11) पर्वतीय वन (12) एल्पाइन जंगल तथा आर्द्र एवं बैक वाटर क्षेत्र। जैव भौगोलिक लक्षणों के आधार पर निम्नलिखित प्रदेशों की पहचान की गई है–भारतीय उपमहादेश को पन्द्रह एग्रो-इकोलोजिकल क्षेत्रों में बाँटा गया है जिन्हें निम्न प्रदर्शित **चित्र 1.2** में दिखलाया गया है।

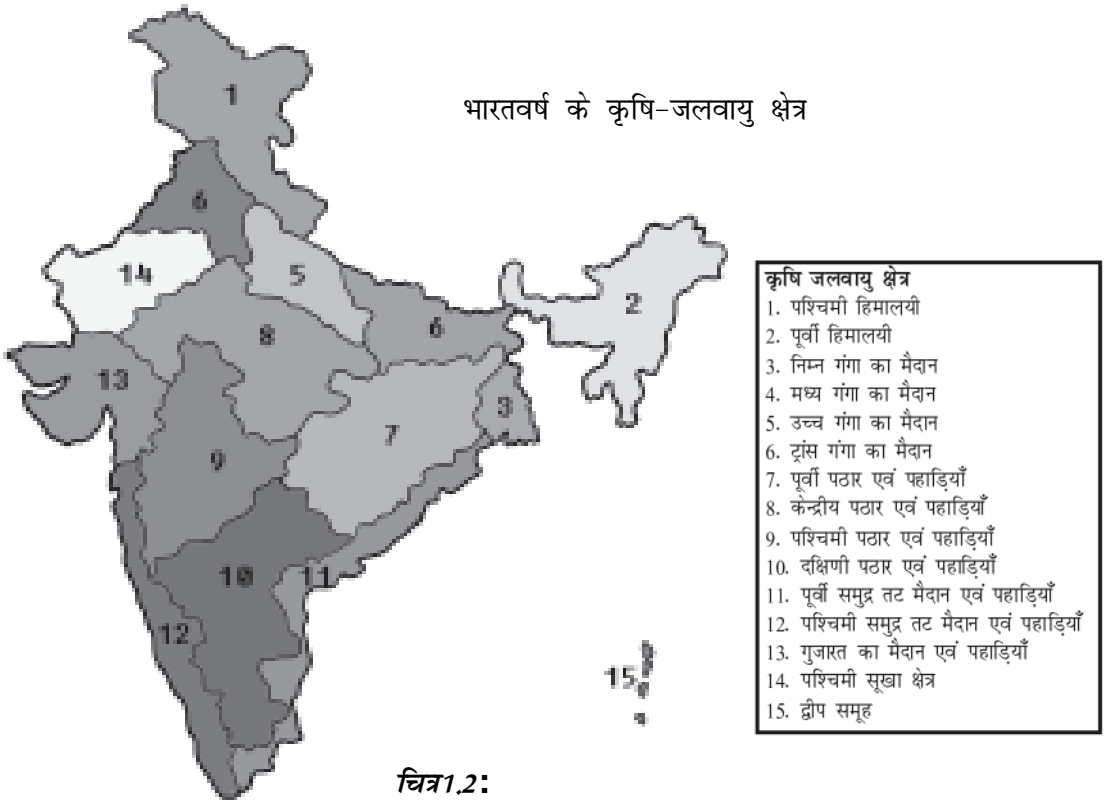

***चित्र1.2*:**

प्रत्येक पारिस्थितिकी क्षेत्र की अपनी-अपनी खास विशेषताएँ हैं। ट्रान्स हिमालयन क्षेत्र में जो हिमलायन रेंज के ठीक उत्तर में अवथित है, विरल वनस्पति-जीवन पाये जाते हैं। पर यह क्षेत्र संसार के अनेक संकटग्रस्त माउन्टेन अंगुलेट्स का प्रमुख आवास स्थान है। हिमालयन की पहचान उसके तीव्र ढाल (Slopes) की वजह से है तथा इसमें समशीतोष्ण पादपों की बहुतायत होती है। उत्तरी मरूभूमि से सटा सेमीएरिड प्रदेश है जिसमें वनस्पति-जीवन का वितरण असमान है तथा वनस्पति-समूह के बीच यत्र-तत्र खुला मृदा क्षेत्र पाया जाता है। इस क्षेत्र के मृदा में सालों भर अल्प मात्रा में पानी पाया जाता है। पश्चिमी घाट संसार का एक महत्वपूर्ण जैवविविधता का हॉट-स्पॉट (Hot spot) है। विभिन्न ऊँचाई वाले (अक्षांश) क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की जलवायु पाई जाती है तथा अलग-अलग प्रकार की भूआकृति भी होती है जिसका असर वास-स्थान पर पड़ता है। विभिन्न प्रकार के वास-स्थान में पाये जाने वाले पौधे तथा जीव की प्रकृति में काफी विविधता पायी जाती है। पश्चिमी घाट में अनेक प्रचलित (endemic) मछलियाँ, उभयचर (एम्फीबियन) तथा स्तनधारी जन्तु पाये जाते हैं, जिनमें से अधिकांश इन्टरनेशनल यूनियन फॉर कनजर्वेशन ऑफ नेचर (आईयूसीएन) के रेड लिस्ट में अंकित है। इनके कुछ उदाहरण Lion Tailed Macaque, Nilgiri Tahr तथा पक्षियाँ जैसे Nilgiri blue robin तथा Nilgiri Laughing thrush हैं।

भारत के पश्चिमी भाग की जलवायु के निम्नलिखित लक्षण हैं–

1) ग्रीष्म ऋतु में काफी गर्मी पड़ती है तथा वातावरण शुष्क रहता है।

2) जाड़े में काफी ठंड पड़ती है। 3) सालाना वर्षा 70 से०मी० से कम होती है।

अत: इस क्षेत्र में उगने वाले पादप प्रजातियाँ मरूद्भिद् या जीरोफाईट्स होती है। दक्षिणी पठार पेनीसुलर इंडिया का सबसे विस्तृत क्षेत्र है जो सतपुरा रेंज के दक्षिण में अवस्थित है। इस क्षेत्र से दो बड़ी नदियाँ क्रमश: गोदावरी तथा कृष्णा गुजरती है। इस क्षेत्र के ऊँचाई वाले भाग तथा घाटी में विभिन्न प्रकार के वन पाये जाते हैं जिनसे विभिन्न प्रकार के जंगली उत्पाद प्राप्त होते हैं। यह इस क्षेत्र के निवासी के जीवन-यापन का मुख्य आधार है। उत्तर में गंगा का मैदान हिमालय की तराई वाले क्षेत्र तक फैला है जो लभगभग 72.4 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र लिये हुए है। इस क्षेत्र की मृदा एलुवियल प्रकार का है।

भारतवर्ष का उत्तरी पूर्वी प्रदेश पादप तथा जन्तुओं की उपस्थिति की दृष्टि से सबसे धनी क्षेत्र है। इन क्षेत्रों में अनेक प्रकार की चिड़ियाँ, तितलियाँ, उभयचर, बांस, फर्न्स तथा अन्य पादप प्रजातियाँ पाई जाती है। यह क्षेत्र पूर्वी हिमालय के जैवविविधता के हॉट-स्पॉट की श्रेणी में आता है।

अरब सागर में लक्षद्वीप तथा बंगाल की खाड़ी में अण्डमान निकोबार द्वीप-समूह अवस्थित है। इनकी भूआकृति (Physiography) बिल्कुल भिन्न प्रकार की है अत: यहाँ पर पाये जाने वाली पादप प्रजातियाँ तथा जन्तु प्रजातियाँ भी विशेष प्रकार की होती है। लक्षद्वीप के एटॉल्स (atolls) में सबसे अच्छे कोरल्स पाये जाते हैं। अंडमान-द्वीपसमूह में निचली भूमि में पाये जाने वाले सबसे अच्छे सदाबहार जंगल पाते हैं। भारतवर्ष में समुद्रतटीय क्षेत्र लाइन 7516.6 किलोमीटर है जो 13 राज्यों और संघीय प्रदेशों को स्पर्श करती है। पूर्वी तट बंगाल की खाड़ी के सम्पर्क में है तथा यह क्षेत्र भी जैव-विविधता की दृष्टि से काफी धनी है।

उपर्युक्त सभी पारितांत्रिक क्षेत्रों में से प्रत्येक में विशिष्ट प्रकार के पारितंत्र पाये जाते हैं तथा इसमें विशिष्ट प्रकार के अजैविक तथा जैविक अवयव पाये जाते हैं। ऐसे पारितंत्र अपनी अन्तर्प्रक्रिया से विभिन्न रूपों में उपयोगी साबित होते हैं तथा मनुष्य हेतु उपयोगी हैं। (Fig.-1.2).

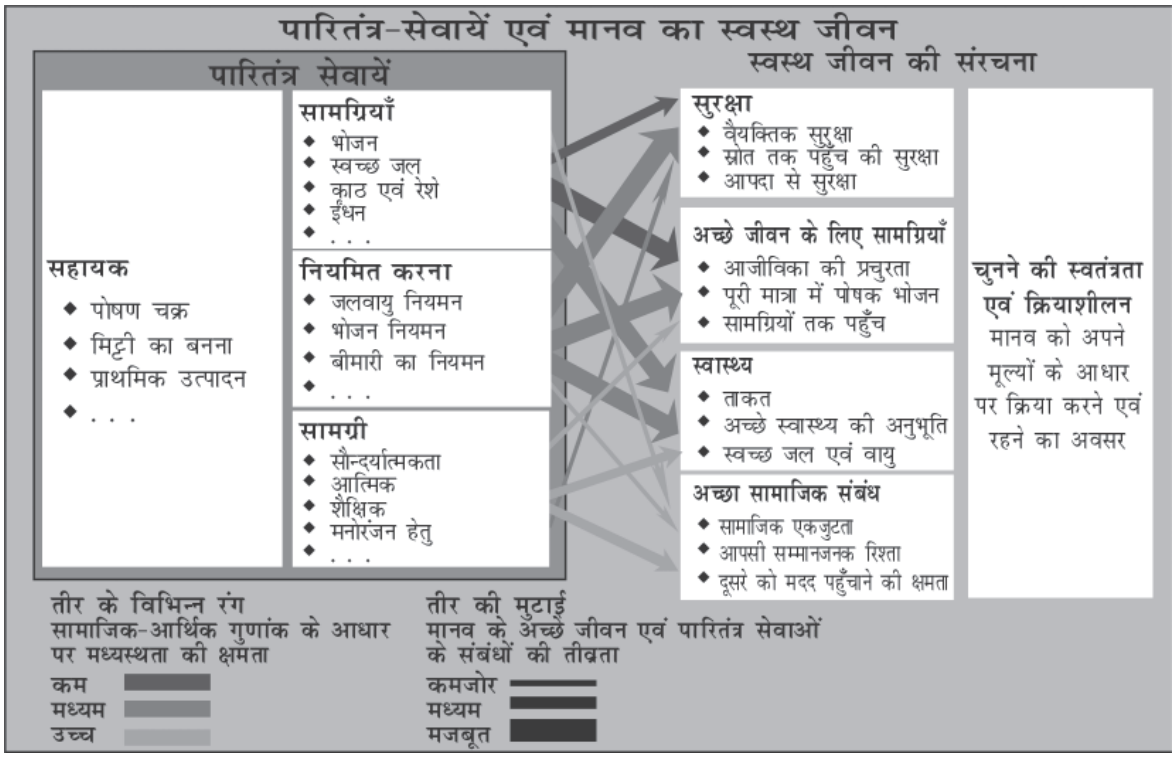

Fig. 1.2 : Functional interaction of different ecological services

पारितांत्रिक सेवाओं के मात्रात्मक मूल्य के मूल्यांकन पर कुछ चौंकाने वाले तथ्य सामने आते हैं जिन्हें हम सिर्फ देखकर महसूस नहीं कर सकते हैं। इण्डियन इन्स्टीच्यूट ऑफ फॉरेस्ट मैनेजमेंट (IIFM) 2015 ने नेशनल टाइगर ऑथोरिटी (NTCA) के साथ मिलकर टायगर प्रोजेक्ट एरिया ऑफ इंडिया पर इकोलॉजिकल सर्विसेज के पड़ने वाले प्रभाव के मूल्यांकन हेतु एक अध्ययन किया (कुछ उदाहरण नीचे टेबुल 1.1 में प्रदर्शित किये गये हैं)

इकोलॉजिकल सर्विसेज ऑफ टाइगर प्रोजेक्ट एरिया ऑफ इंडिया

विभिन्न सेवाओं का महत्व	**आईएनआर (INR)में कोरबेट टाइगर रिजर्व**	**आईएनआर(INR) में कान्हा टाइगर रिजर्व**	**आईएनआर (INR) में काजीरंगा टाइगर रिजर्व**
फ्लो बेनिफिट/हेक्टेयर	1.14 लाख	0.80 लाख	0.95 लाख
जीनपूल संरक्षण/वर्षा	10.65 बिलियन	12.41 बिलियन	3.49 बिलियन
नीचे की ओर क्षेत्र में पानी के बहाव की स्थिति प्रति वर्ष	1.61 मिलियन	558 मिलियन	NA
स्थानीय निवासी को नौकरी / प्रति वर्ष	82 मिलियन	NA	NA
कार्बन अवशोषण / प्रति वर्ष	214 मिलियन	219 मिलियन	17 मिलियन
मनोरंजन महत्व / प्रति वर्ष	384 मिलियन	21 मिलियन	

स्रोत : IIFM, NTCA, "Economic Valuation of Tiger Reserve in India :(a value + approach 2015, page XII)

लेकिन समय बीतने के साथ-साथ विभिन्न मुद्दे उभरने लगे जिनसे इन सभी प्रकार के पारितंत्र के सामने विभिन्न प्रकार की चुनौतियाँ उत्पन्न हुई जिनसे इनके पारितांत्रिक सेवाओं पर भी असर पड़ा।

1.3 चुनौतियाँ :

पारितंत्र को दो प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है–

(i) प्राकृतिक
(ii) मानवीय

प्राकृतिक चुनौतियों में जलवायु से प्रभावित यथा मौसम का प्रभाव तथा जलवायु असमान्यता, प्राकृतिक विपत्ति तथा आपदा आदि हैं। मानवीय चुनौतियाँ-जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के फलस्वरूप उभर कर आई। जनसंख्या के कारण विभिन्न क्षेत्रों में प्रभाव पड़ा है जैसे कृषि, खनन, औद्योगिक क्रियायें तथा शहरीकरण के साथ-साथ आवासीय क्षेत्र का विस्तार आदि।

1.4 पारितंत्र-पतन के प्रभाव :

किसी भी स्थान (आवास) में मौजूद प्रजातियाँ एक दूसरे से क्रिया-प्रतिक्रिया (लेन-देन) करते हैं। इस तरह की क्रिया-प्रतिक्रिया या लेन-देन अजैविक वातावरण के साथ भी होती रहती है, जिनमें प्रमुख अजैविक कारक मौसम, मृदा, जल, वायुमण्डल आदि प्रमुख हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पारितंत्र पौधे, जानवर तथा सूक्ष्मजीवों के साथ-साथ अजैविक वातावरण का एक जटिल पर गतिशील तंत्र है जिसमें सभी एक दूसरे के साथ लेन-देन की क्रिया करते हैं, जिससे एक कार्यात्मक इकाई का निर्माण होता है। सम्पूर्ण पृथ्वी तंत्र वास्तव में विभिन्न प्रकार के पारितंत्र का प्रस्तुतीकरण है। मनुष्य अपने स्वास्थ्य के लिए पूर्णरूप से स्वस्थ वातावरण पर निर्भर है। मनुष्यों की भोजन प्रणाली, संस्कृति तथा जीवित रहने की संभावना आदि का घनिष्ठ सम्बन्ध स्वस्थ वातावरण से है। वर्तमान समय में वातावरण की गुणवत्ता में काफी गिरावट आई है। जैव

विविधता में ह्रास तथा वातावरण में बढ़ते प्रदूषण का सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक कारकों से मेल के कारण मनुष्यों के स्वास्थ्य तथा अन्य लाभप्रद क्रियाओं पर संकट उत्पन्न हो गया है। पारितंत्र सेवायें (यानि पारितंत्र के कार्य से होने वाले फायदे) सूद के समान सभी जीवों मनुष्य सहित लाभान्वित होना, से हम यह समझने तथा भविष्यवाणी करने में सक्षम हो पाये हैं कि पारितंत्र के विनष्ट या पतन से हम किस प्रकार प्रभावित हो रहे हैं। प्राकृतिक या प्रबन्धकीय पारितंत्र से उपलब्ध सेवाओं पर ही मानव समाज निर्भर करता है। इन सेवाओं से हमें स्वच्छ हवा, शुद्ध जल, जैवविविधता का संरक्षण, भोज्य पदार्थ की प्राप्ति के साथ-साथ जानवरों के लिए चारा उपलब्ध हो पाता है। वर्जित (मल) पदार्थों के विघटन, मृदा का निर्माण, पौष्टिक पदार्थों का चक्र (बायोजियोकेमिकल साइकिल), जंगलों तथा आर्द्र स्थलों (wetlands) द्वारा भूमिगत जल संवर्धन, बीजों का वितरण, ग्रीनहाउस गैसों का एक स्थान से दूसरे स्थान मे पहुँचाना, सौन्दर्यात्मकता (aesthetic), जलवायु पर नियंत्रण, प्राकृतिक आपदाओं पर नियंत्रण, आदि सभी पारितांत्रिक सेवायें हैं।

1.4.1 मानव की गतिविधियाँ :

कृषि कार्यों में आने के पूर्व मनुष्य प्रकृति की लय के साथ सामंजस्य बनाकर रहते थे। पहले मनुष्य खानाबदोश का जीवन जीते थे। धीरे-धीरे वे एक स्थान पर बसने लगे। इसके साथ ही फसलों, जानवरों आदि का अपने हित में चयन करना प्रारम्भ किया। इसके साथ ही मनुष्यों ने नदी जल को नियंत्रित करना शुरू किया। साथ ही अन्य जलाशयों में भी कृषि कार्य में सिंचाई हेतु परिवर्तन लाना शुरू किया। इसके बाद की क्रियाओं में आवास में विस्तार के साथ-साथ अपने क्षेत्र की सुरक्षा के उपाय निकाला। इसके बाद शहरीकरण तथा तकनीक में विकास हुए जिनके कारण पारितंत्र पर तत्काल तथा दूरगामी प्रभाव पड़ा।

पारितंत्र में रूपान्तरण से पारितांत्रिक सेवाओं पर भी प्रभाव पड़ा जो विभिन्न रूपों में प्रकट हुआ है। औद्योगिक क्रान्ति, परिवहन संचरण का विकास, शहरीकरण तथा जीवाष्म ईंधन के दोहन से ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा में वृद्धि हुई जिसके कारण ग्लोबल वार्मिंग, जैसी समस्या उत्पन्न होने के साथ जलवायु परिवर्तन होना प्रारम्भ हुआ।

इनका विपरीत असर स्वस्थ वातावरण पर हो रहा है। वनों की कटाई में वृद्धि भी मानव समाज पर विनाशकारी असर डाल रहा है, जो एक भीषण संकट का सूचक है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि 2000 तथा 2012 के बीच सम्पूर्ण संसार में 2.30 मिलियन वर्ग किलोमीटर वन काट डाले गये।

वनों की कटाई से जैव विविधता में कमी आती है तथा जीवों के विलुप्त होने का संकट बढ़ जाता है। इसके कारण जलवायु में परिवर्तन होता है, भू-क्षरण में वृद्धि होती है, मरुभूमि में विस्तार होता है तथा मूल समुदाय के पलायन का खतरा बढ़ता है। वन की कटाई का सीधा प्रभाव जल-चक्र पर पड़ता है क्योंकि वन कटाई से वर्षा कम होती है, जल जमीन में कम प्रवेश कर पाते हैं, अधिकांश जल बह जाते हैं अत: मृदा में जल स्तर काफी नीचे चला जाता है एवं भू-क्षरण भी होता है।

ग्लोबल वार्मिंग तथा वर्षा से होने वाले परिवर्त्तन-पैटर्न के प्रतीक क्षेत्र में या तो प्रजातियों का पलायन होता है या वे विलुप्त हो जाते हैं। इस तरह की घटना सिर्फ भारतवर्ष में ही नहीं घट रही है बल्कि यह सम्पूर्ण संसार की समस्या है। यह इस तथ्य का सूचक है कि जलवायु में बहुत प्रकार से इस परिवर्तन की क्रिया हो रही है जिनके रहस्य हम नहीं समझ पाये हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण भारतवर्ष में पाई जाने वाली अनेक पादप तथा जन्तु प्रजातियों का पलायन होगा जिसका बुरा असर मनुष्य के आवास स्थान पर होगा। (Adv. 2014)। अत: यह स्पष्ट है कि संरक्षण मनुष्य तथा प्रकृति के बीच का प्रश्न नहीं है बल्कि संरक्षण मनुष्य के विभिन्न समूहों के बीच आपूर्ति तथा उनकी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति से सम्बन्धित है।

1.4.2 भूमि उपयोग में परिवर्तन :

वर्तमान परिपेक्ष में प्रबल शहरीकरण एवं विकास सम्बन्धित अनेक क्रियाओं के लिये भूमि को विकसित करने, उसको लोगों के बीच बाँटने तथा अन्य विभिन्न कार्यों हेतु उपयोग सुनिश्चित करना, योजना तैयार करने वालों के लिए कठिन समस्या है। अधिकांश हिस्सों में भूमि उपयोग सम्बन्धी निर्णय समग्र रूप से जैविक संसाधनों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किये बिना ही लिये जाते हैं। अत: भूमि-उपयोग के पूर्व अगर जैविक प्रभाव का अध्ययन कर योजना तैयार की जाय तो विकास के साथ-साथ हम प्राकृतिक धरोहरों को सुरक्षित रख सकते हैं। इसकी जरूरत उस समय और अधिक बढ़ जाती है, जब विकास कार्य के प्रारम्भ में प्राकृतिक भूक्षरण से 10 से 40 प्रतिशत प्राकृतिक वनस्पतियाँ नष्ट हो जाती है अथवा उनकी संरचना में परिवर्तन होता है (Forman and Collinge 1997)।

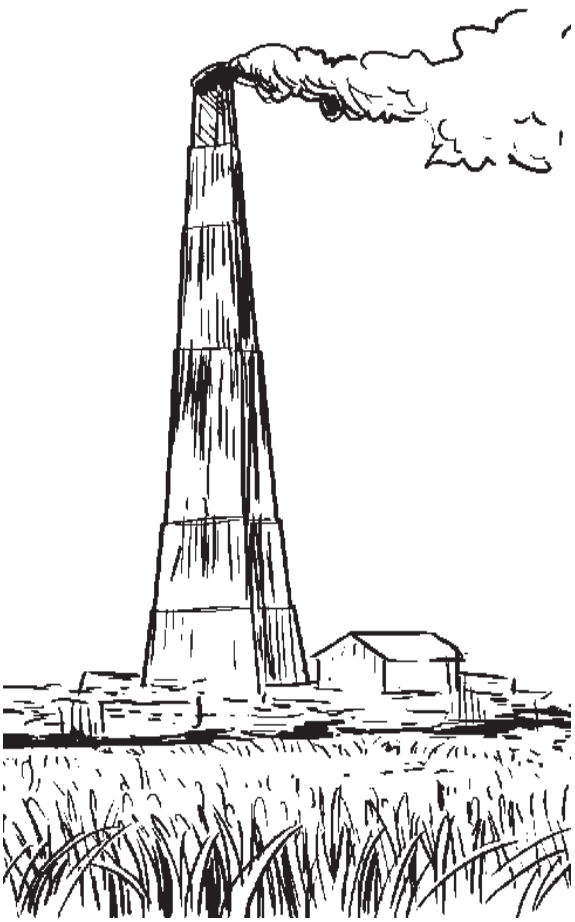

भूमि-उपयोग से सम्बन्धित योजना तैयार करने वालों को पारितांत्रिक सिद्धान्त की आवश्यक जानकारी नहीं होती है, अत: उन्हें अपनी योजना में समाहित नहीं कर पाते। इस कारण से वे अपनी रूढ़िवादी या परम्परागत तौर तरीके में सिमटे रहते हैं तथा पारितांत्रिक सिद्धान्त के आधार पर विकास हेतु योजना नहीं दे पाते। अत: भूमि-उपयोग तथा भूमि प्रबन्धन से सम्बन्धित योजनाओं के निर्णय में पारितंत्र के मूलभूत सिद्धान्तों तथा पारितांत्रिक परिवेश में होने वाले परिवर्तन की दिशा (Trends) को शामिल करने हेतु प्रोत्साहन तथा सुविधायें प्रदान करने की आवश्यकता है।

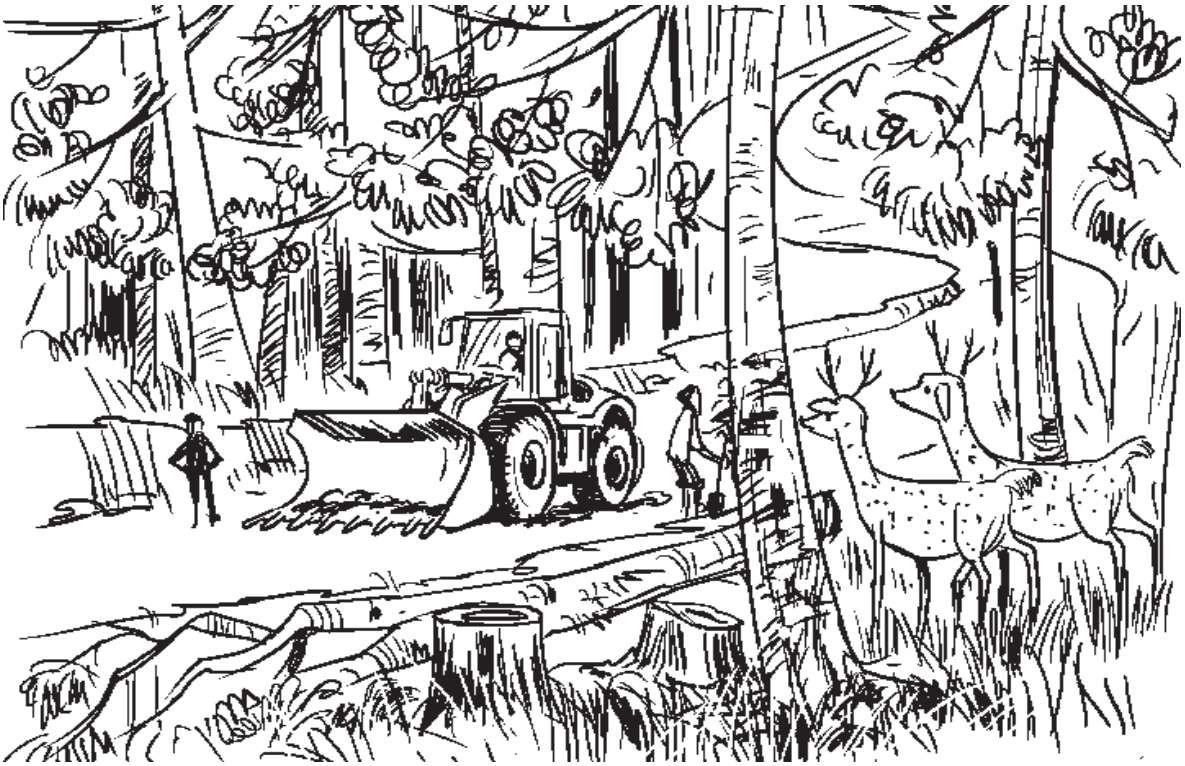

1.4.3 प्राकृतिक वास स्थान का विघटित होना (Fragmentation of Natural Habitats) :

भूमि-उपयोग के कारण जीवों के प्राकृतिक वास-स्थान की भौगोलिक स्थिति में बदलाव आता है जिससे विस्तृत प्राकृतिक भू-भाग अलग-अलग भू खण्डों में बँट जाता है। प्रत्येक भू-खण्ड का आकार वास्तविक भूभाग की तुलना में काफी घट जाता है। इसके बाद छोटे-छोटे भू खण्डों को विभिन्न काम में जैसे मकान बनाने अथवा व्यवसाय करने हेतु संरक्षित करते हैं। इससे वास्तविक भूभाग का स्वरूप तथा संरचना ही बदल जाती है। जब प्राकृतिक वास स्थान सड़क, रेलवे ट्रैक, नाले, गड्ढे, बाँध, पावर लाइन अथवा अन्य प्रकार के बाधाओं द्वारा विखण्डित हो जाता है तो पादप प्रजातियों एवं जन्तु प्रजातियों का स्वतंत्र रूप से रहन-सहन बाधित हो जाता है। वास्तविक भू-भाग के विखण्डन से छोटे-छोटे टुकड़े (patch) में विखंडित हो जाता है तथा छोटे-छोटे टुकड़े एक दूसरे से अलग हो जाते हैं फलस्वरूप इस रूपान्तरित रूप में यह बहुत सारे जीवों के रहने लायक नहीं रह जाता।

उपर्युक्त प्रकार के प्राकृतिक-भूक्षरण का प्रभाव विविध रूप में पारितंत्र पर पड़ता है। सर्वप्रथम जीवों के स्थायित्व पर प्रभाव पड़ता है, इससे पारितंत्र की निरन्तरता बाधित होती है। पारितंत्र में पौष्टिक तत्व-चक्रों की निरन्तरता के लिए पौधे तथा जन्तुओं का जीवित रहना आवश्यक है। इससे बायोजियोकेमिकल चक्र के साथ भोज्य पदार्थ, स्वच्छ हवा, जल तथा मृदा भी मिलती है साथ ही पीड़क पर भी नियंत्रण होता है। उपर्युक्त सारी चीजें इस तथ्य पर निर्भर करती हैं कि भूमि का उपयोग कहाँ और किस कार्य के लिए हो रहा है तथा भूमि प्रबन्धन का क्या स्वरूप है।

1.4.4 विदेशी प्रजातियों की घुसपैठ (Invasive Alien Species) :

विकास द्वारा भूमि के विविध उपयोग होने के साथ-साथ मनुष्य के विभिन्न क्रिया-कलापों (जैसे कॉलोनी का निर्माण, कृषि, चारागाह, वन कटाई, शिकार तथा औद्योगीकरण आदि) से प्राकृतिक वास स्थानों में विभिन्न किस्मों की बहुलता में परिवर्तन आता है। नई किस्मों का आगमन होता है जो या तो स्वदेशी अथवा विदेशी किस्में होती हैं। ये किस्में उस स्थान के लिए नई होती है तथा कभी-कभी इनके लिए यह वास-स्थान मूल किस्मों को बिल्कुल हटा देता है। इस प्रकार मूल किस्मों की संरचना तथा बहुलता में परिवर्तन होता है। किसी स्थान पर उन विदेशी किस्मों को जो ज्यादा समय तक स्थायी रूप से कायम रहता है विदेशी प्रजाति

कहलाता है। विदेशी प्रजातियाँ (Alien species) जैवविविधता को नष्ट करती है तथा उस क्षेत्र की संप्रभुता को भी नष्ट करती है।

जब विदेशी किस्मों की संख्या में वृद्धि प्रारम्भ होता है तथा उसका विस्तार सीमा को लाँघ देता है तब उसे घुसपैठी कहा जाता है तथा यह क्रिया घुसपैठ कहलाती है। घुसपैठी (Invasive) की व्याख्या दूसरे रूप में की जाती है। इस शब्द का अर्थ पीड़क (Pest) या जंगलीघास (खरपतवार) के रूप में भी ली जाती है चाहे प्रजातियाँ स्वदेशी हो अथवा विदेशी। "दी कनवेंशन ऑन बायोडायवरसिटी (CBD)" ने विदेशी घुसपैठी प्रजातियों की परिभाषा निम्नलिखित ढंग से दी है–

Alien invasive species : a alien species which threatens ecosystems, habitat or species." अर्थात् विदेशी घुसपैठी जातियाँ वे है जो पारितंत्र, वास-स्थान अथवा प्रजाति के लिए संकट पैदा करते हैं। घुसपैठी प्रजातियों का अर्थ ऐसी विदेशी प्रजातियों से है जो प्राकृतिक अथवा अर्द्ध प्राकृतिक पारितंत्र अथवा वास-स्थान में अपने को स्थापित कर, उसमें परिवर्तन लाने हेतु एजेन्ट का कार्य करते हैं तथा प्राकृतिक जैव विविधता के लिए संकट पैदा करते हैं। (IUCN guidelines on biological invasion) IUCN के ग्लोबल इनवेसिव स्पेशीज़ प्रोग्राम के तहत इनवेसिव एलियन स्पेशीज़ की परिभाषा निम्नलिखित ढंग से दी गई है– Invasive alien species are non-native organisms that cause or have the potential to cause, harm to the environment, economy, or human health.

1.5 आद्रभूमि का क्षरण (Degradation of Wetlands) :

आद्रभूमि पर **रामसर कनवेंशन** के अनुसार "यह ऐसा क्षेत्र है जो दलदली, निचले स्तर पीटलैंड या जलीय हो चाहे वह प्राकृतिक हो अथवा कृत्रिम, स्थायी हो अथवा अस्थायी, जिसमें पानी स्थिर हो अथवा बहता हो, स्वच्छ, ब्रैकिश या लवणीय हो। आद्रभूमि में समुद्र का खारा जल जहाँ निचले ज्वार पर गहराई छः मीटर से ज्यादा न हो" (Article 1.1 **रामसर सम्मेलन 1971**)

आद्रभूमि वह जगह है जहाँ स्थल और जल दोनों मिलता है तथा ऐसे क्षेत्र का पारितंत्र अत्यधिक उत्पादकता प्रदान करने वाला होता है। इस प्रकार आद्रभूमि पारितंत्र बहुत अधिक उपयोगी है। आद्रभूमि विविध प्रकार की वनस्पतियों तथा जन्तुओं को आश्रय (वास-स्थान) प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त यह अन्य पारितंत्र हेतु गूर्दे की तरह भोज्य पदार्थ तथा पानी के संग्रह, छानने, साफ करने आदि का भी कार्य करता है।

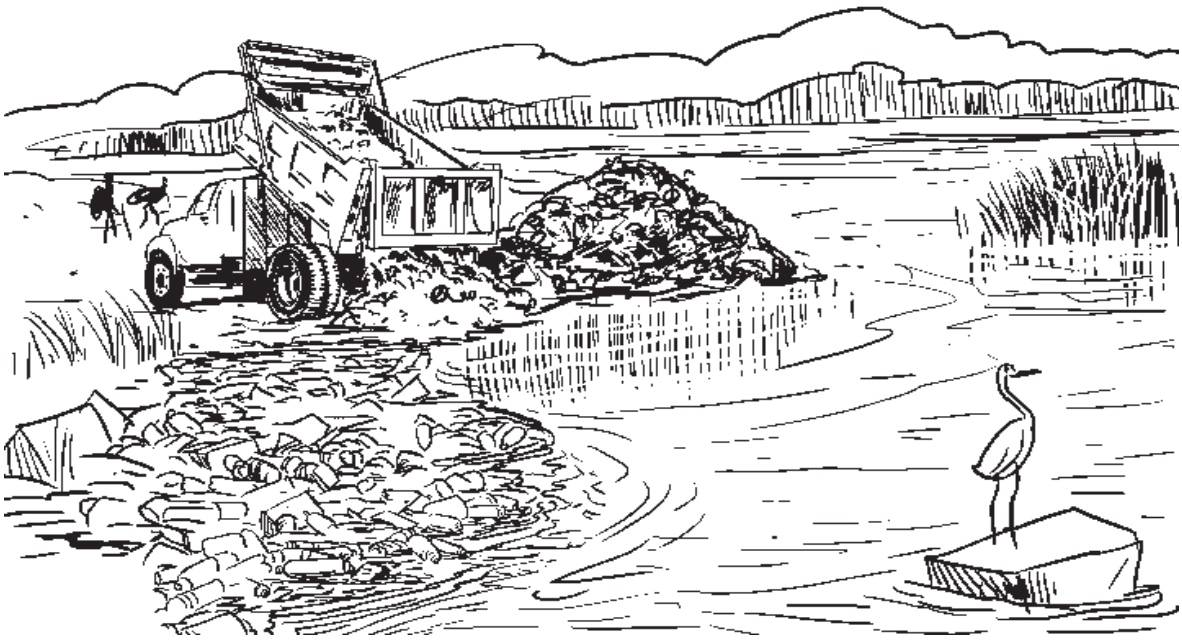

समुद्र के तटीय स्थल तथा समुद्र-जल के संगम पर मैनग्रोव जंगल पाया जाता है जो अपने लवणीय क्षेत्र में पैदा होने वाले काष्टीय वनस्पति के बीच अनेक जीवों को आश्रय प्रदान करता है । इसकी वजह यह है कि यह जगह महीन सेडीमेंट युक्त होती है जिसमें कार्बनिक पदार्थ अधिक मात्रा में पाये जाते हैं । ऐसा इसलिए भी संभव हो पाता है कि मैनग्रोव समुद्र की ऊँची लहरों से कार्बनिक पदार्थ को सुरक्षित रखता है । मैनग्रोव के कारण समुद्र के तटीय क्षेत्र का क्षरण नहीं हो पाता है, यह आँधी तूफान तथा सुनामी जैसे आपदा से जैव तथा अजैव संसाधनों को सुरक्षा प्रदान करता है । मैनग्रोव का जड़ तंत्र काफी विकसित होता है अत: यह पौधे तथा आस-पास के पर्यावरण को समुद्री लहरों तथा पवन ऊर्जा के घातक प्रभाव से बचाता है । अत: राष्ट्रीय स्तर पर मैनग्रोव का मूल्यांकन उसके अपनी पुरानी वास्तविक स्थिति में लाने, प्रबन्धन तथा संरक्षण एक प्राथमिक आवश्यकता है । भारत सरकार द्वारा मैनग्रोव पर प्रस्तुत रिपोर्ट से स्पष्ट हुआ कि भारतवर्ष में पिछली शताब्दी में मैनग्रोव के क्षेत्रीय विस्तार में चालीस प्रतिशत की कमी आई है । इसमें से पूर्वीय तटीय क्षेत्र में 26% तक पश्चिमी तटीय क्षेत्र में 44% तथा अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह में 32% मैनग्रोव में कमी आई है । मैनग्रोव के ह्रास से जैवविधिता में कमी आती है, मछलियों के नर्सरी का वास-स्थान समाप्त हो जाता है तथा नजदीकी तटीय वास-स्थान प्रतिकूल ढंग से प्रभावित होता है जिससे मनुष्यों द्वारा पारम्परिक रूप से उपयोग में लाये जाने वाले अनेक संसाधन नष्ट हो जाते हैं । नष्ट होते हुए मैनग्रोव के पुनर्जीवन हेतु प्रभावी प्रशासन तंत्र विकसित करना, प्रबन्धन हेतु बेहतर कार्य योजना तैयार करना और स्थानीय समुदायों के बीच जागरूकता का विस्तार वर्तमान समय की सबसे प्रमुख आवश्यकता है । इनसे मूल्यवान मैनग्रोव का संरक्षण, सुरक्षा तथा विस्तार हो पायेगा ।

1.6 समुदाय द्वारा संरक्षित क्षेत्र :

जैवविधिता की दृष्टि से काफी धनी बहुत से ऐसे क्षेत्र हैं जो सरकार द्वारा संरक्षित क्षेत्र (सेंकच्यूरीज़ तथा नेशनल पार्क) आदि के बाहर हैं तथा उनका प्रबन्धन उन क्षेत्रों के स्थानीय समुदायों के हाथ में है । ऐसे क्षेत्र को समुदाय संरक्षित क्षेत्र कहा जाता है । समुदाय संरक्षित क्षेत्र प्राकृतिक या रूपान्तरित पारितंत्र हुआ करता है जो जैवविविधता की दृष्टि से काफी अधिक मूल्यवान होता है तथा स्थानीय समुदाय को इनका पर्यावरणीय लाभ मिलता है क्योंकि ऐसे पारितंत्र की देखरेख स्थानीय समुदाय अपने तौर-तरीके तथा नियमों के तहत करते हैं । समुदाय द्वारा संरक्षित क्षेत्र के अन्तर्गत पवित्र उपवन (Sacred groves), पंचायत, कम्युनिटी फोरेस्ट, प्राइवेट चाय बगान, कॉफी तथा इलाइची के बगानों में बिखरे जंगल तथा अन्य प्रकारों से उत्पाद प्राप्त करने हेतु होते हैं जैसे कृषि फार्म, बंजर भूमि, आद्रभूमि, तटीय क्षेत्र, हिरोनरीज़, शरद ऋतु में पक्षियों हेतु आद्रभूमि, कछारी जंगल, कछुए के वास-स्थान, चारागाह मरूभूमि पारितंत्र तथा नदियाँ आदि ।भारतवर्ष में पवित्र उपवन समुदाय द्वारा संरक्षित क्षेत्र का सबसे बड़ा क्षेत्र है जो देश के प्राय: हर राज्य में वितरित है । पवित्र उपवन विभिन्न नामों से विभिन्न स्थानों में जाने जाते हैं।

टेबुल 1.2 भारतवर्ष के विभिन्न राज्यों में पवित्र उपवन के नाम

राज्य	पवित्र उपवन के नाम
आसाम	थान (Than) या मैडेको (Madaico)
बिहार	सामा (Sama)
छत्तीसगढ़	देवगुडी या सरना
हिमाचल प्रदेश	देव-वन
झारखण्ड	जहेरथान या सरना
कर्नाटक	देवरकाडू या कंस
महाराष्ट्र	देवराई या देवगुडी
मणिपुर	उमंग लाय
मेघालय	लॉ किनटैंग या लॉ-नियम
ओडिशा	जहेरा या ठाकुरामा
राजस्थान	ओरेन्स
उत्तराखण्ड	बुग्याल या देव-वन
पश्चिम बंगाल	गरमधान या जाहीरी स्थान
केरल	काबू
तमिलनाडु	कोवीकाडु

पवित्र उपवन में उनके मूल्यवान औषधि पौधों के साथ-साथ वर्तमान में उपजाये जाने वाले फसलों के पूर्वज या जंगली संबंधी भी पाये जाते हैं जिनका भविष्य में उपयोग किया जा सकता है। पवित्र उपवन में स्थित पेड़-पौधों में कीट प्रतिरोधी के साथ-साथ अधिक उत्पादन देने के गुण संरक्षित हैं।

इस प्रकार पवित्र वन-संसाधन के होने के साथ-साथ स्थानीय समुदाय के जीवन-यापन के मजबूत आधार होते हैं। पारितांत्रिक संरक्षण में भी पवित्र उपवन की महत्वपूर्ण भूमिका है। पवित्र उपवन के प्रमुख पारितंत्र सेवाओं में कुछ निम्नलिखित हैं–

(1) **जैवविविधता का सरंक्षण**–पवित्र उपवन के रूप में स्थानीय समुदाय सतत् वनस्पतियों तथा जन्तुओं का संरक्षण करते आ रहे हैं। भौगोलिक प्रदेशों में संभवत: पवित्र उपवन अन्तिम एन्डेमिक स्पेशीज़ (Endemic species) यानि प्रजातियों के स्थानीय अवशेष हैं।

(2) **जल स्रोतों को पुनर्जीवन प्रदान करना**–पवित्र उपवन प्राय: उन जगहों पर होते हैं जहाँ उनकी वृद्धि हेतु आवश्यक जल उपलब्ध होते हैं, जैसे तालाब, झरने आदि। यह जल स्रोत स्थानीय समुदाय के जल की आवश्यकता की पूर्ति भी करते हैं। पवित्र उपवन इन जल स्रोतों को बनाये रखने में मदद करते हैं।

(3) **मृदा संरक्षण**–पवित्र उपवन की वनस्पतियों से मृदा की सतह ढँक जाती है। अत: हवा तथा जल द्वारा भू-क्षरण नहीं हो पाता है।

पवित्र-उपवन पर संकट के प्रकार उनके प्राप्ति प्रदेशों पर निर्भर करने के साथ एक ही प्रदेश या क्षेत्र के उपवनों की प्रकृति पर भी निर्भर करता है। पवित्र उपवनों पर संकट का सबसे बड़ा कारण चारा तथा लकड़ी संग्रह के लिए उनका विशेष उपयोग करना है। अन्य कारणों में बढ़ता शहरीकरण तथा विकास से सम्बन्धित विभिन्न कार्य जैसे सड़क का निर्माण, रेलवे ट्रैक का निर्माण, बाँध का निर्माण तथा व्यवसायिक वनों को लगाना आदि हैं। अपने देश में पवित्र उपवनों पर अतिक्रमण के कारण उनका दायरा सिकुड़ने लगा है। कुछ विदेशी (non-native) मूल की पादप प्रजातियाँ जैसे लैनटाना कमारा (Lantana Camara) तथा प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा (Prosopis julliflora) आदि के घुस-पैठ से हमारे देश के विभिन्न क्षेत्रों में पवित्र-उपवन पर संकट उत्पन्न हो गया है।

पवित्र उपवनों के विस्तार में कमी तथा इनके पारितांत्रिक लाभदायक प्रभावों के बारे में जानकारी न होने के कारण पवित्र उपवन पारितंत्र से नियंत्रण तथा समर्थन जैसे लाभ लेने से हम वंचित रहते हैं। एक छोटे पवित्र उपवन से स्थानीय समुदायों को नन-टिम्बर फॉरेस्ट प्रोडक्ट, औषधियाँ, ईंधन लकड़ी आदि प्राप्त हो सकते हैं पर अधिक अवधि के लाभ के लिए जैसे भूमिगत जल संवर्धन, बाढ़ पर नियंत्रण, अग्नि प्रतिरोध हेतु पवित्र उपवन के बड़े पैमाने पर प्रबन्धन की आवश्यकता है। पवित्र उपवन के लाभदायक प्रभाव की क्षमता तथा जीवन-यापन में उनके योगदान से सम्बन्धित अध्ययन नहीं हो पाया है। राजस्व रिकार्ड में पवित्र उपवन को भूमि के किसी श्रेणी में स्थान ही नहीं मिला है। अत: पवित्र-उपवन की सीमा निर्धारण एवं भूमि-श्रेणी का सरकारी रिकार्ड तैयार करने की भी आवश्यकता है।

पर्यावरण जागरण आन्दोलन से सम्बन्धित "Silent Spring" नामक पुस्तक 1962 में Rachel Carson द्वारा प्रकाशित मील का पत्थर साबित हुआ है। इस पुस्तक में कीटनाशक (पेस्टीसाइड) जैसे DDT के हानिकारक प्रभावों का वर्णन किया गया है। इसमें उन्होंने बतलाया है कि किस प्रकार जंगलों से पक्षियाँ, पौधे विलुप्त हुए तथा DDT के अन्धाधुंध उपयोग से अमेरिका में कृषि किस प्रकार प्रभावित हुआ।

इसके दस वर्ष बाद 1972 में मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन स्कॉटलैंड में हुआ, जिससे मानव में पर्यावरण के प्रति सोच में काफी बदलाव आया। उपर्युक्त सम्मेलन में आये विचारों के आधार पर संयुक्त राष्ट्र के महासचिव ने रिपोर्ट प्रकाशित किया जिसमें पर्यावरणीय मुद्दों से सम्बन्धित "Stimulating and providing guidelines for action by national governments and international organization" में सलाह दी गई है। पर्यावरण सुरक्षा हेतु उठाया प्रथम कदम तथा उसके बाद उसे कानून का स्वरूप देना पर्यावरण के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को प्रदर्शित करता है।

1.7 उद्देश्य :

1) पर्यावरण के अवयवों की विस्तृत जानकारी प्राप्त करना (जैसे पारितंत्र तथा उससे होने वाले लाभदायक प्रभाव)।
2) पारितंत्र की गतिशीलता में समयानुसार परिवर्तन, स्थान, गुणवत्ता के मूल्यांकन के प्रति संवेदनशीलता तथा क्षमता विकसित करना।
3) मानवीय क्रियाकलापों का पारितंत्र पर पड़ने वाले प्रभाव की देख-रेख करना तथा उसका विश्लेषण कर खास परिवेश में होने वाले अवांछित परिवर्तनों पर उचित मंच पर प्रश्न उठाना।
4) वैज्ञानिक तथा तकनीकी आधारित नवाचारी/व्यावहारिक हस्तक्षेप द्वारा समस्याओं को व्यक्त करना तथा उन्हें हल करना।
5) बेहतर पारितांत्रिक सेवाओं की प्राप्ति हेतु, स्वच्छ, हरित तथा स्वस्थ वातावरण से सम्बन्धित प्राकृतिक संसाधन के प्रबन्धन तथा प्रशासन में स्थानीय समुदाय को शामिल कर प्रोत्साहित करना।

1.8 उपविषय के क्षेत्र का विस्तार :

इस उपविषय में वे सारे तथ्य समाहित है जो पारिस्थितिकी तथा पारितांत्रिक सेवाओं को समझने के लिए आवश्यक है। इसके अन्तर्गत पारितांत्रिक स्थान (ecological niche) की जानकारी, उनकी वर्तमान स्थिति तथा उनमें हुए ऐतिहासिक परिवर्तन का मूल्यांकन करना आदि आता है। इसमें इस तथ्य की भी जानकारी हासिल करना है कि पारितांत्रिक स्थान में परिवर्तन तथा विनाश के क्या कारण हैं तथा उन्हें संरक्षित करने एवं समृद्ध करने के उपाय के बारे में तथ्य ढूँढ़ना शामिल है। इसके अन्तर्गत इस तथ्य को शामिल किया गया है कि पारितांत्रिक स्थान की क्षति पूर्त्ति के क्या समाधान हो सकते हैं जिससे वह अपनी पुरानी स्थिति पर पहुँच सके। क्षरण के उपचार हेतु शामिल क्रिया-कलापों की देखरेख एवं प्राप्त प्रतिफल विश्वसनीयता जाँच आदि में स्थानीय समुदाय से सहयोग लेना इस उप-विषय का उद्देश्य है ताकि पारितंत्र का प्राकृतिक चक्र टिकाउ रूप में चलता रहे।

1.9 तर्कसंगत रूपरेखा (Logical Frame work) :

पारितंत्र के तीन प्रमुख अवयव क्रमशः जल, हवा तथा भूमि (मृदा सहित) है।

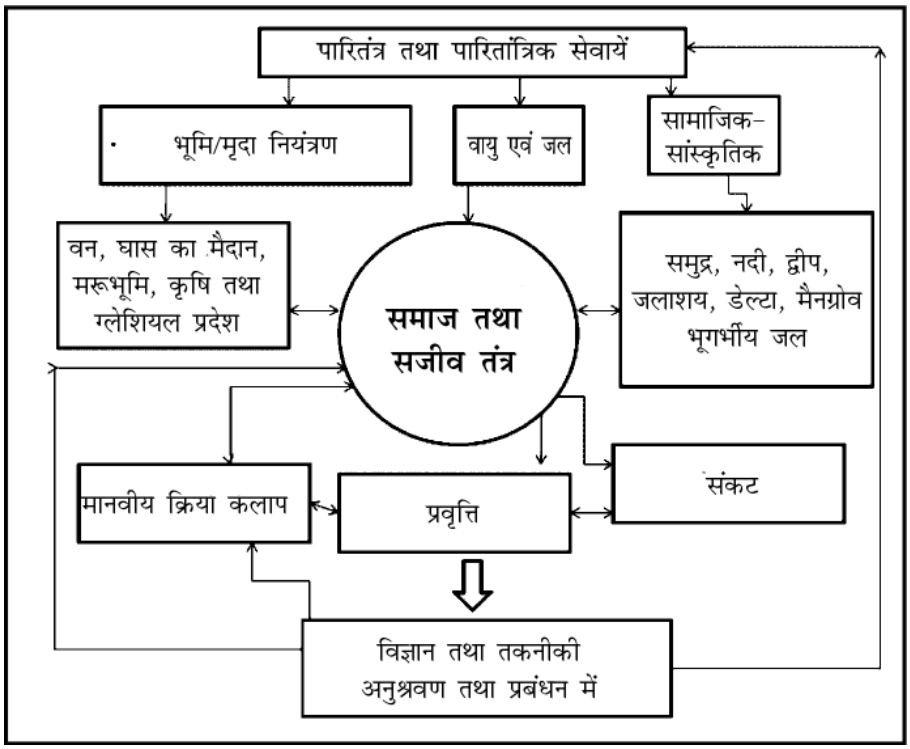

आंशिक नहीं बल्कि सम्पूर्ण पारितंत्र

अधिकतर देशों में पारितंत्र के विभिन्न आयामों की देख-रेख करने के लिए अलग-अलग विभाग है जैसे कृषि, जल, वन, मत्यस्य तथा जंगली जीवों आदि तथा परिवर्तन लाने वाले कारकों के लिए भी अलग-अलग विभाग हैं जैसे ऊर्जा, परिवहन, विकास तथा व्यापार। अतः आज की सबसे बड़ी चुनौती उपर्युक्त सभी तथ्यों को ध्यान में रखकर समग्र रूप से समाधान का उपाय खोजना है जिनमें सम्मिलित जल सड़क प्रबंधन, नदी घाटी का सम्मिलित प्रबन्धन अथवा देश के टिकाऊ विकास से जुड़े उपाय आदि हैं। पारितंत्र आधारित तरीका भूमि, हवा तथा जल से ताल-मेल बैठाने की दिशा में होता है एवम् इसके साथ जैव संसाधन को भी जोड़ता है जिससे संरक्षण में मदद मिले एवं संसाधनों का न्याय संगत ढंग से टिकाऊ उपयोग हो सके। इस प्रकार पारितंत्र आधारित रास्ते का सीधा सम्बन्ध स्वच्छ, हरित तथा स्वस्थ वातावरण तैयार करने से है जिससे सतत् विकास हो सके।

चूँकि जीवों के बीच एक दूसरे के साथ क्रिया-प्रतिक्रिया या लेन-देन होता रहता है, साथ ही अजैविक वातावरण के साथ ऐसी क्रियायें होती रहती है, जिससे जीव कुछ उत्पादन करते हैं, अर्जित करते हैं अथवा बायोमास तथा उनके साथ रहने वाले कार्बनिक यौगिकों का विघटन करते हैं। वे जल, तलछट तथा मृदा से खनिज पदार्थ लेते हैं तथा एक दूसरे में इनका विनिमय भी करते हैं तथा अन्त में उन्हें भौतिक या अजैविक वातावरण में त्याग देते हैं। स्थलीय पौधों द्वारा जमीन से पानी लिया जाता है तथा वातावरण में श्वसन द्वारा छोड़ा जाता है। इन क्रियाओं को करते वक्त वे मनुष्यों को विभिन्न पदार्थ जैसे भोज्य पदार्थ, रेशे तथा मकान बनाने हेतु कुछ उपयुक्त सामग्री के रूप में प्रदान करते हैं। वे मृदा को व्यवस्थित करते हैं तथा जल एवं वायु की गुणवत्ता को बनाये रखने मे मददगार होते हैं। जैव तथा अजैव के बीच सम्बन्ध पहली नजर में बहुत साधारण प्रतीत होता है पर ऐसा नहीं है। उनके बीच एक बहुत ही जटिल प्रकार का सम्बन्ध होता है। ऐसा इसलिए होता है कि जीवों को जीवन-यापन हेतु कुछ विशिष्ट आवश्यकतायें होती हैं तथा प्रत्येक प्रजाति अपने बीच के सदस्यों के साथ, दूसरे प्रजातियों के साथ तथा अजैव अवयव के साथ लेन-देन करते हैं। मानवीय क्रिया-कलापों से पर्यावरण के विभिन्न अवयवों में परिवर्तन से पारितंत्र के अवयवों के बीच संबंध और भी अधिक जटिल हो गया है।

1.10 परियोजना विचार :

परियोजना संख्या-1

स्थायी आर्द्र-भूमि का पारिस्थितिक महत्व तथा उसके पारितंत्र की उपयोगिता पर मानवीय गतिविधियों के प्रभाव का अध्ययन करना :

परिचय–

आर्द्रभूमि या वेट लैंड एक बहुत ही विशिष्ट, उत्पादकता वाला पारितंत्र है जो स्थलीय भू-भाग तथा जलाशय के संधि स्थल पर होता है। ऐसे स्थान स्वच्छ जल तथा समुद्री जल मे पाई जाने वाली मछलियों तथा अन्य प्रजातियों की शरणस्थली होते हैं। लगभग सभी जलीय पक्षियाँ आर्द्र-भूमि का उपयोग भोज्य पदार्थ के लिए तथा प्रजनन करने हेतु करती है। प्रवासी पक्षियाँ (Migratory birds) आद्रभूमि के सम्पूर्ण विस्तार का उपयोग करती है तथा कर्तव्यनिष्ठा के साथ आर्द्र-भूमि प्रवासी पक्षियों के रास्ते में विश्राम स्थल प्रदान करने का कार्य करते हैं। इन स्थानों पर चारे के रूप में विशिष्ट प्रकार की वनस्पतियाँ तथा जन्तु पाये जाते हैं। अन्य प्रकार के पारिस्थितिक प्रणाली की तुलना में आर्द्र-भूमि में ज्यादा जैवविविधता पाई जाती है, बेहतर पोषण चक्र होता है तथा विशिष्ट प्रकार के वास-स्थान होते हैं। यह अत्यधिक उत्पादकता वाला पारिस्थितिक तंत्र है।

आर्द्रभूमि का पारिस्थितिक, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, मनोरंजन तथा सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यधिक महत्व है। ये अनेक प्रकार के पारितंत्र सेवायें प्रदान करते हैं। आर्द्र-भूमि में जल का संग्रह होता है। इस कारण आर्द्र-भूमि जीवों को जल की उपलब्धता पर नियमन करता है। साथ ही भूमिगत जल-रिचार्ज तथा मुक्त भी करता है। आर्द्र-भूमि भूक्षरण को भी रोकता है तथा इसकी तलहटी में अवक्षेपित तथा पौष्टिक पदार्थ होते हैं। इसके साथ ही आर्द्र-भूमि स्थायी जलवायु का भी नियमन करते हैं, जीवों को भोज्य पदार्थ प्रदान करते हैं एवम् तूफान आदि से सुरक्षा भी प्रदान करते हैं।

पर्यावरणीय अवनति के कारण आर्द्र-भूमि पर लगातार संकट बढ़ा रहता है। पर्यावरण अवनति का मुख्य कारण प्राकृतिक तथा कृत्रिम अथवा मानवीय गतिविधियाँ दोनों प्रकार का है। आर्द्र-भूमि के पर्यावरणीय संकट से तथा जैवविविधता पर प्रमुख रूप से अतिक्रमण, प्रदूषण, गाद का जमा होना, खर-पतवार का प्रवेश, व्यवसायिक मत्स्य पालन, जमीन की खुदाई या खनन, भू-क्षरण तथा व्यवसायिक कार्यों के लिए उपयोग में लाना आदि है।

अधिकांश राज्यों में आर्द्र-भूमि तथा आन्तरिक जलाशयों को विशिष्ट प्रकार के भू-उपयोग की श्रेणी में नहीं रखा गया है, बल्कि इन्हें वर्जित भूमि (waste lands) की संज्ञा दी जाती है जिसका उपयोग विकास से सम्बन्धित वैकल्पिक कार्यों में होती है। आर्द्र-भूमि के पारिस्थितिक-तंत्र के प्रबन्धन हेतु लगातार अनुसंधान की जरूरत है ताकि उनमें होने वाले परिवर्तनों की क्रमगत जानकारी हो सके। पर अभी तक अधिकांश शोध आर्द्र-भूमि के संगठन (रचनात्मक)के अध्ययन (Limnology) या जैव विविधता के अध्ययन तक ही सीमित है। उनके कार्यात्मक पहलू जैसे उनके पारितांत्रिक सेवाओं तथा स्थानीय समुदाय के जीवन-यापन पर पड़ने वाले प्रभाव का बहुत कम अध्ययन हुआ है।

उपर्युक्त तथ्यों को मद्देनजर रखते हुए यह परम आवश्यक है कि आर्द्र-भूमि के पारितांत्रिक सेवाओं की पहचान तथा उनका मूल्यांकन किया जाय तथा इस तथ्य की भी जानकारी प्राप्त की जाय कि मानवीय गतिविधियाँ आर्द्र-भूमि पारिस्थितिक-तंत्र में कहाँ बाधक है। अगर उपर्युक्त पहलुओं पर विचार करते हुए कार्य किया जाय तो स्थानीय आर्द्र-भूमि की सुरक्षा हो सकेगी।

उद्देश्य–

1) पारितांत्रिक सेवाओं की संदर्भ में स्थानीय आर्द्र-भूमि के महत्व को समझना, आर्द्र-भूमि के पारिस्थितिक पहलुओं को समझना तथ वनस्पतियों एवं जन्तुओं (मानव सहित) के लिए उनकी उपयोगिता को परखना।

2) मानवीय गतिविधियों सहित वर्तमान में आर्द्र-भूमि के स्वास्थ्य की स्थिति तथा उसमें होने वाले परिवर्तनों को सूचीबद्ध करना (इसके लिए समय तथा स्थान को ध्यान में रखते हुए अकारकीय (morphological) तथा भौतिक-रसायन से सम्बन्धित माप-दण्ड लेना होगा।)

3) आर्द्र भूमि की सुरक्षा तथा प्रबन्ध हेतु विज्ञान तथा तकनीक के नवाचारी प्रयोगों द्वारा मार्ग प्रशस्त करना।

अवधारणा–

मानवीय गतिविधियों का आर्द्र-भूमि पारितंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा उनके द्वारा प्रदत्त पारितांत्रिक सेवाओं की गुणवत्ता पर भी प्रतिकूल असर पड़ता है।

आवश्यक सामग्री –

पादप तथा जन्तु प्रजातियों की पहचान हेतु फील्ड गाइड (नमुना लेने की जरूरत नहीं), जल का नमूना लेने हेतु बोतल, फॉवड़ा, जीपलॉक पोलीथिन थैले, दूरबीन, कैमरा, भू-कर सम्बन्धित चित्र (Cadastral map), अगर आसानी से उपलब्ध हो तो भूआकृतिक शीट (Topographical sheet) GPS उपकरण (अथवा सामान्य मोबाइल GPS का उपयोग कर सकते हैं) कम्पास, नापने वाला फीता, नाइलन की पतली रस्सी, दस्ताना, ग्राफ पेपर, डिजाइन डाटा शीट या प्रपत्र आदि।

कार्य करने की विधि –

- सर्वप्रथम आर्द्र-भूमि का भ्रमण एक सैनिक पर्यवेक्षक रूप में करें तथा अन्तरात्मा में विचार करें कि आर्द्र-भूमि की वर्तमान स्थिति का प्रमाणिक प्रलेख क्यों तैयार करना चाहिए, क्यों इनके विश्लेषण की जरूरत है तथा उन पर पड़ने वाले प्रतिकूल असर से सुरक्षा हेतु किस प्रकार से हस्तक्षेप किया जा सकता है।
- अध्ययन हेतु विभिन्न माप-दण्डों को सुनिश्चित करें तथा यह भी सुनिश्चित करें कि किन-किन पारामीटर का विश्लेषण करना है। डाटा संग्रह हेतु औजारों को डिजाइन करें जिसमें नमूना कोडिंग, माप-दण्ड के अनुसार निरीक्षण के प्रलेख की व्यवस्था हो साथ ही भौतिक रासायनिक पारामीटर एवं सर्वे को शामिल करने की व्यवस्था हो।
- इसके लिए नमूना-डाटाशीट 1, 2, 3 देखें जिसमें आर्द्र-भूमि के भौतिक-रासायनिक पारामीटर, मोरफोलोजिकल लक्षण तथा पारितांत्रिक सेवाओं को दर्शाया गया है।
- जल तथा मृदा नमूना प्राप्ति हेतु समय सुनिश्चत करें (इसके लिए इस बात की सावधानी रखनी है कि कार्य-स्थल, उसकी गहराई, किनारे से उसकी दूरी, नमूना प्राप्ति का समय आदि हर बार का एक समान होना चाहिए)।
- जल के भौतिक रासायनिक गुणों के विभिन्न पारामीटर का विश्लेषण करने के लिए जल का नमूना संग्रह करें। जल तथा मृदा के नमूना संग्रह हेतु प्रमाणिक विधियों का ही उपयोग करें। मार्गदर्शक शिक्षक की सहायता लें।
- pH, गंदलापन (turbidity), घुले हुए ठोस की कुल मात्रा, घुले ऑक्सीजन, बायोकेमिकल ऑक्सीजन डिमाण्ड (BOD), सुचालकता, क्लोराइड्स, क्षारीयता, कठोरता, फास्फेट, सल्फेट, नाइट्रेट आदि जल पारामीटर विश्लेषण हेतु लेना चाहिए।
- विभिन्न पहलुओं के आधार पर डाटा संग्रह करें जो आर्द्र-भूमि के अध्ययन हेतु निम्नलिखित पहलुओं पर विचार किया जा सकता है–

  (i) जलाशय की बाह्य-आकृति (Morphological)

  (ii) पारितांत्रिक सेवायें : जल की उपलब्धता, स्थानीय समुदाय द्वारा जल को घरेलू कार्यों, कृषि, व्यवसायिक कार्यों में उपयोग आदि। पुराने विशाल वृक्ष, चिड़ियों का प्रजनन तथा उनके द्वारा निर्मित घोंसले तथा उनके लिए चयनित स्थल, अन्य जन्तुओं का वास-स्थान तथा उनके वितरण का स्वरूप आदि। इसके लिए कीट श्रेणी, रोडेन्ट्स, सर्पश्रेणी, पक्षियों तथा स्तनधारी जन्तुओं को आधार बनाया जा सकता है। जलीय पौधे, मछलियाँ, जलीय सर्पश्रेणी के जन्तु, मोलस्क (घोंघे), आर्थोपोड्स आदि अन्य अध्ययन करने योग्य हैं। महत्वपूर्ण पादप तथा जन्तु प्रजातियों के वास-स्थान (इसमें Migratory

species भी शामिल होना चाहिए), उनके जीवन चक्र, इकोटॉन स्पेशीज़ की गतिविधियाँ (जैसे उभयचर) स्थानीय खाद्य श्रृंखला तथा खाद्य-जाल, सूक्ष्म जलवायु का नियमन (ताप तथा आर्द्रता), सांस्कृतिक, मनोरंजन तथा सौन्दर्य तथा नैतिकता सम्बन्धी तथ्यों की जानकारी हासिल करना)

- मानव-जनित कारकों जो आर्द्र-भूमि में प्रतिकूल परिवर्तन लाते हैं, उनका रेकार्ड तैयार करें (इसके लिए फोटोग्राफिक) मान-चित्र तैयार करने हेतु साधनों का उपयोग कर सकते हैं जैसे भूमि-कर निर्धारण से सम्बन्धित साधन या साधारण हस्त-चित्र बनाकर उसमें अपेक्षित पारामीटर को सांकेतिक बिन्दु द्वारा प्रकट करें। ये बिन्दु मनुष्य की गतिविधियों, बाधायें आदि के हो सकते हैं। मनुष्य की गतिविधियों का, जीवों के वास-स्थान, जीवन-चक्र, दिन-रात में पौधों तथा जानवरों की गतिविधियों सम्बन्धी जानकारी इकट्ठा करें, जो समय तथा स्थान से सम्बन्धित हो।
- पता लगायें कि दिव्यांग लोग स्थानीय आर्द्र-भूमि का कैसे उपयोग करते हैं।
- उपर्युक्त सभी जानकारी अलग-अलग आंकड़ा शीट पर थोड़े-थोड़े समय के अन्तराल पर संग्रह करें।
- GPS उपकरण या साधारण मोबाइल GPS की सहायता से आर्द्र-भूमि का वास्तविक स्थान रिकार्ड करें तथा उसकी अन्तिम सीमा का निर्धारण पूरब, पश्चिम, उत्तर तथा दक्षिण दिशाओं में करें। इसी प्रकार जल तथा मृदा का नमूना जहाँ से प्राप्त करते हैं उसकी भौगोलिक स्थिति को रिकार्ड कर लें। इसके साथ ही महत्वपूर्ण पौधे तथा जन्तु के स्थानों, मानवीय गतिविधियों वाले स्थान (जैसे कपड़ा धोने वाला स्थान, पृथ्वी खनन स्थान, जंगली जानवरों के भ्रमण स्थान, पक्षियों द्वारा नीड़ बनाये जाने वाले स्थान, स्थलीय तथा जलीय जन्तु प्रजातियों के विश्राम की जगह, मछली पकड़ने वाला स्थान, उनके आस-पास खुला बेकार स्थान, आस-पास के वाहित-जल आने वाले स्थान तथा नहरों से बहने वाले वाहित जल का स्थान, जलाशयों के भर जाने के बाद उसके ऊपर पानी निकलने वाला स्थान या ऐसे जल को गिराने वाले स्थान को रिकार्ड कर उसे आंकड़ा सारणी पर Cadastral map, Topographical map या हाथ से निर्मित मैप में बिन्दुओं के रूप में दर्शायें।

- उपर्युक्त सभी तथ्यों को गूगल मैप पर भी लोड कर सकते हैं अथवा प्रतिनिधि-स्थान का फोटो भी ले सकते हैं। गूगल अर्थ फाइल को जो उपर्युक्त तथ्यों को समाहित किये हुए है, सुरक्षित रखें तथा आमजन तथा अफसरों से साक्षात्कार मीटिंग या जागरूकता कार्यक्रम में दिखाया जा सके।

- प्राप्त डाटा को संगठित कर विश्लेषण करें। डाटा को ग्राफ के रूप, चित्र के रूप में तथा मान-चित्र पर व्यक्त करें तथा इनके संख्यात्मक महत्व को औसत, सबसे अधिक, सबसे कम, मानक विचलन तथा पारस्परिक संबंध आदि के रूप में व्यक्त करें। अपने डाटा विश्लेषण तथा अवधारणा के आधार पर गुणात्मक तथा मात्रात्मक निष्कर्ष निकालें।
- सुनिश्चित समस्या अध्ययन एवं निदान हेतु नवाचारी योजना तैयार करें तथा इसके अनुसार कार्य को आगे बढ़ायें तथा प्राप्त आंकड़ा को यानि बेसलाइन युक्त सूचीबद्ध कर लें ताकि तुलनात्मक कार्यों में उसका उपयोग हो सके।

अनुसरण–

उपयुक्त ढंग से तैयार किये प्रलेख को लेकर किसी दक्ष व्यक्ति के साथ विचार-विमर्श करें तथा उनके द्वारा सत्यापित होने दें। प्राप्त निष्कर्ष का उपयोग आर्द्र-भूमि के संरक्षण हेतु प्रारम्भिक योजना तैयार करने में किया जा सकता है।

- प्राप्त डाटा प्रलेख को ग्राम पंचायत, राज्य-वन विभाग, इमीग्रेशन विभाग तथा स्थानीय प्रशासनिक विभागों के समक्ष रखें जिससे उन्हें आर्द्र-भूमि के विकास हेतु बेहतर योजना बनाने में मदद मिल सके।
- अगर आर्द्र-भूमि देहाती क्षेत्र में हो तो ग्राम पंचायत से अनुरोध करें कि वे ग्राम-सभा बुलायें तथा कार्य हेतु प्रस्ताव लें (इससे आर्द्र-भूमि की पौराणिक अवस्था पुनः प्राप्त करने में मदद मिल सकती है)। इसे मनरेगा (MGNREGA) द्वारा कराया जा सकता है। आर्द्र-भूमि के संरक्षण तथा विकास के लिए किये जाने वाले कार्यों का विस्तृत ब्योरा MGNREGA Operational Guidlines में देखा जा सकता है। अगर आर्द्र भूमि नगरपालिका के अन्दर शहरी क्षेत्र में आता है तो प्रमाणिक डाटा लेकर जिला प्रशासनिक पदाधिकारी से सम्पर्क करें जिससे उन्हें आर्द्र-भूमि के संरक्षण तथा विकास से सम्बन्धित योजना बनाने में मदद मिल सके।

  एक जगह के आर्द्र-भूमि के अध्ययन का दूसरे जगह के आर्द्र-भूमि के अध्ययन हेतु दोहराया जा सकता है पर कुछ आवश्यक रूपान्तरण के साथ।

समस्या-समाधान–

आर्द्र-भूमि पारितंत्र तथा उसके विभिन्न आयामों या पहलुओं का अध्ययन समस्या तथा उसके समाधान की ओर एक ऐतिहासिक पहल होगा जो आर्द्र भूमि की वर्तमान स्थिति का विश्लेषण करने में मदद करेगा तथा इससे सम्बन्धित सभी विभागों का समग्र प्रयास इसके निदान में लगेगा।

दिव्यांग द्वारा उपयोग में लाये जाने वाले आर्द्र-भूमि को भी चिन्हित करने की आवश्यकता है तथा भविष्य में उन्हें और बेहतर ढंग से उपयोग हेतु प्रोत्साहन मिलना चाहिए।

संभावित परिणाम–

- आर्द्र-भूमि पर ऊपर वर्णित अध्ययन से "आर्द्र-भूमि पारितंत्र" की समझ विकसित करने में मददगार होगा जो सामान्य जलाशयों या जल-जमाव वाले स्थान से भिन्न होगा।
- परम्परागत ज्ञान को आर्द्र-भूमि से जोड़कर विश्लेषण किये जाने पर हमें आर्द्र-भूमि के जल सम्बन्धी, भौतिक, रसायनिक तथा जैविक स्वास्थ्य का बेहतर ज्ञान होने की संभावना होगी। इसके साथ ही विभिन्न उप-पारितंत्रों का पता लगेगा जैसे घोसला तथा हाइबरनेटिक स्थल आदि। आर्द्र-भूमि पारितंत्र के लाभप्रद पहलू तथा इसके आस-पास के पारितंत्र के बीच ऊर्जा प्रवाह के तरीके तथा मौसम के अनुसार उपभोक्ता की जानकारी प्राप्त होगी।

नमूना आंकड़ा सारणी-1 : जल तथा मृदा के विभिन्न पारामीटर पर आधारित प्राप्त मान को रिकार्ड करने वास्ते सारणी :

क्रम सं०	पारामीटर्स	नमूना प्राप्ति की बारम्बारता (निश्चित अवधि के अन्तराल पर जमा नमूना जैसे सप्ताह या महीना					औसत	मानक विचलन
		I	II	III	IV	V		

नमूना आंकड़ा सारणी-2 : आर्द्र-भूमि के अकारकीय (Morphological) विशेषताओं के रिकार्ड हेतु खाका :

क्रम सं०	लक्षण	मान
1.	भौगोलिक स्थिति	उदाहरण 24°, 34', 41" E 73°, 49' 31"
2.	आर्द्र-भूमि की चौहद्दी	पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण
3.	अधिकतम लम्बाई पूर्णस्तर पर मीटर / किलोमीटर	
4.	अधिकतम चौड़ाई पूर्णस्तर पर मीटर या किलोमीटर	
5.	ग्रहण क्षेत्र (वर्ग मीटर या वर्ग किलोमीटर)	
6.	अनुमानित संग्रह (घन मीटर या घन किलोमीटर)	
7.	सबसे ज्यादा फील लेवल (फीट, मीटर)	
8.	औसत गहराई (फीट या मीटर)	
9.	सबसे ज्यादे गहराई (फीट / मीटर)	
10.	ऊँचाई समुद्र तल से (मीटर में)	
11.	जल बहाव की दिशा (किधर से किधर)	
12.	ज्यादा बहाव होने पर बहाव की दिशा निचले स्तर की ओर	
13.	आर्द्र-भूमि के प्रकार कंकरीट चेक डैम, प्राकृतिक जलाशय आदि	
14.	डैम या बाँध की लम्बाई	
15.	आर्द्र-भूमि का मालिकाना हक (सरकारी विभाग / स्थानीय नगर निगम / शहरी विकास ट्रस्ट / पंचायत आदि) नहर का विस्तृत भौगोलिक ब्योरा (क्षेत्रीय ग्रहण-क्षेत्र / वृहद नदी घाटी या उपघाटी, नहर या नाले की व्यवस्था, दूसरे जलाशयों से जुड़ने के स्रोत या साधन, नाला आदि)	

नमूना आँकड़ा शीट-3 : आर्द्र-भूमि के पारितंत्र सेवाओं का सूचीकरण :

क्रम सं०	पारितंत्र सेवायें	गुणात्मक या मात्रात्मक मान	लाभदायी समुदाय (जैसे लाभ पाने वाली लगभग संख्या/ क्षेत्र को लाभ/ अथवा प्रजाति को लाभ)	कितनी अवधि हेतु सेवा उपलब्ध है (जैसे दिन, सप्ताह, महीना, सम्पूर्ण वर्ष)
A.	**अस्थायी सेवायें**			
1.	**भोज्य पदार्थ** (a) व्यवसाय हेतु मछलियाँ (b) अन्य जलीय जन्तुओं की पकड़ (c) जंगली फल (d) जलीय पौधे / फल (e) अन्य			
2.	**स्वच्छ जल** (a) संग्रह (b) सिंचाई हेतु (c) पेय जल के रूप में प्रयुक्त (d) घरेलु जानवरों द्वारा उपभोग में लाया गया (e) व्यवसायिक कार्य या उद्योग में उपयुक्त			
3.	**अन्य संसाधन** (a) चारा स्थलीय या जलीय स्थान से उत्पन्न (b) काष्ठ या लकड़ी (c) ईंधन लकड़ी (d) रेशा (e) सजावटी सामग्री			
B.	**नियंत्रण सम्बन्धी फायदे**			
4.	**स्थानीय जलवायु** (a) तापक्रम (b) पूर्ण तथा आपेक्षिक आर्द्रता (c) वर्षा			
5.	**जल आधारित प्रचलित रीति** (a) भूमिगत जल भरन (b) जलधारण क्षेत्र			
6.	**अन्य** (a) बाढ़ नियंत्रण (b) मृदा संरक्षण (c) अवक्षेपण संग्रह			

C.	**सांस्कृतिक**			
7.	**अध्यात्मिक** (a) धार्मिक अनुष्ठान (b) पर्व-त्योहार सम्बन्धी पवित्र कार्य			
8.	**मनोरंजन हेतु** (a) पर्यटकों द्वारा भ्रमण (b) समुदाय द्वारा आयोजित दावत (c) मनोरंजन की अन्य गतिविधियाँ, जैसे-नौकायान, फोटोग्राफी, ध्वनि और प्रकाश प्रदर्शन			
9.	**सौन्दर्य से सम्बन्धित** (a) भू-स्थापत्य (b) क्षेत्रीय भौगोलिक विशेषतायें (c) प्राकृतिक बनावट			
10.	**शैक्षणिक** (a) वनस्पति तथा जन्तुओं के अध्ययन का अवसर (b) शैक्षणिक भ्रमण / क्षेत्र में अध्ययन (c) औपचारिक तथा अनौपचारिक प्रशिक्षण आदि			
D.	**समर्थक सेवायें**			
11.	**जैवविविधता** (a) पहचान किये गये प्रजातियों की संख्या (b) मूल निवासी प्रजातियों की संख्या (c) प्राणियों की संख्या (d) माइग्रेटरी प्रजातियाँ (आवागमन करनेवाली) (e) विशिष्ट प्रजातियों का वास-स्थान (f) विदेशी प्रजातियों की संख्या	स्थलीय तथा जलीय स्पेशीज, दोनों अलग-2 स्वभाव वाले पौधे का अलग लिस्ट जैसे- शाकीय, झाड़ी, वृक्ष आरोही आदि। उसी तरह अलग-2 प्राणी के लिए अलग लिस्ट जैसे- स्तनधारी, चिड़ियाँ, सर्पश्रेणी तथा अकशेरुकीय आदि माइग्रेटरी चिड़िया का अलग लिस्ट		
12.	**पौष्टिक तत्वों का चक्र**			
	(a) पौष्टिक तत्वों के प्रकार तथा दबाव (स्रोत सहित, जैसे बाहर से आता है अथवा स्थानीय उत्पाद) (b) पौष्टिक पदार्थों का भण्डारण तथा प्रसंस्करण (c) सतही मृदा / कार्बनिक पदार्थों का जमाव			
13.	**अन्य**			

परियोजना संख्या-2

पवित्र उपवन-समुदाय द्वारा संरक्षित पारिस्थितिकीय महत्वपूर्ण क्षेत्र

परिचय–

टुकड़ों में बँटा वन अथवा प्राकृतिक वनस्पतियाँ-जिसमें कुछ वृक्ष से लेकर अनेक एकड़ में फैले वन क्षेत्र होते हैं और जिनका सम्बन्ध लोक संस्कृति से हो या वृक्ष के साथ भावनात्मक सम्बन्ध हो तथा स्थानीय समुदाय द्वारा संरक्षित हो, पवित्र-उपवन की श्रेणी में आता है। ऐसे स्थानीय समुदाय के लोग धार्मिक विश्वास तथा परम्परागत संस्कार के कारण ऐसा करते हैं जो अनेक पीढ़ियों से चलता रहता है।

पवित्र उपवनों का पारितांत्रिक, जैविक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक महत्व अतुलनीय है। भारत की राष्ट्रीय नीति के अनुसार प्राचीन पवित्र-उपवनों को "अतुलनीय महत्व" वाला माना जाना चाहिए। यह जानवरों को चारागाह क्षेत्र उपलब्ध कराता है, जैव-विविधता को आधार प्रदान करता है तथा उनमें जलवायु परिवर्तन से पड़ने वाले दुष्प्रभाव से सुरक्षित रखने की क्षमता होती है। ये जल आच्छादन तथा जल स्त्रोत को सुरक्षित रखते हैं जो झरने, एक्यूफर को सम्पोषित करते हैं तथा भूमिगत जल संग्रह में मददगार होते हैं। साथ ही सिंचाई एवं जानवरों के विश्राम-स्थल का निर्माण करते हैं। ये जीन की विविधता के बहुत धनी खजाना होते हैं, साथ ही स्वस्थानीय प्रजाति, औषधीय पौधे, जंगली फसल तथा संकटग्रस्त प्रजाति का संरक्षण करते हैं। पवित्र-उपवन प्रकृति में मानवजाति-पादप, मानवजाति-जन्तु, सामाजिक नियमों आदि के परस्पर सम्बन्धों तथा नियंत्रण बनाये रखता है।

यद्यपि पवित्र-उपवन को पारम्परिक समुदायों तथा संस्कृति द्वारा अच्छी पहचान मिली है विशेष कर जीवन-यापन के लिए, इसके बावजूद पवित्र-उपवन विशेष पर किसी का ध्यान नहीं जाता और न ही उसके पारितांत्रिक सेवाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं। अतः तत्काल संरक्षणकर्त्ता तथा निर्णायकों का ध्यान इस ओर जाना अतिआवश्यक है। सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में परिवर्तनों, मानवीय हस्तक्षेप में बढ़ोतरी, पर्यटक की संख्या में बढ़ोतरी, मृदा खनन कार्य तथा विकास से सम्बन्धित अन्य दबावों के कारण वर्तमान में अनेक पवित्र उपवनों में ह्रास हुआ है। पवित्र उपवन की वास्तविक संरचना में विदेशी पादप प्रजातियों के

प्रवेश से परिवर्तन होता है। विदेशी पादप प्रजातियाँ कभी-कभी स्थानीय पादप प्रजातियों पर हावी होकर उनके लिए संकट पैदा करते हैं। अत: पवित्र-उपवन की वर्तमान स्थिति, संरचना तथा उनके कार्य के बारे में समग्र-जानकारी हासिल करना परम आवश्यक है। उनकी पारिस्थितिक तंत्र में भूमिका का आकलन एवम् उनके संरक्षण के उपाय करना आवश्यक है। छोटे स्थान में प्राप्त पवित्र-उपवन की लाक्षणिक विशेषताओं की जानकारी का अभाव है साथ ही उनके आस-पास भूमि-उपयोग तथा उपस्थित वनस्पति की मात्रा में होने वाले परिवर्तन तथा समय एवं स्थान, भूमि-क्षरण आदि की जानकारी लगभग नहीं है। उपर्युक्त सारे तथ्यों का उपयोग पवित्र-उपवन की वर्तमान अवस्था, कुछ समय से उनमें बदलाव की प्रवृत्ति आदि को सूचक के रूप में उपयोग कर भविष्य में उनके संरक्षण की दिशा में योजना तैयार करने की आवश्यकता है। अत: यह परियोजना पवित्र-उपवन के इकोलॉजिकल सर्विसेज की क्षमता का आकलन करने तथा जियोस्पेशियल टूल तथा तकनीक के माध्यम से उनका पारिस्थितिक लक्षणों में भूमिका का अध्ययन हेतु है।

उद्देश्य–

1) ओरेन्स या पवित्र-उपवन की पहचान, मान-चित्र तैयार करना, आधारभूत संरचना का आंकड़ा तैयार करना।

2) पवित्र उपवन के पारितांत्रिक सेवाओं का प्रलेखन (इसके बाद जैवविविधता, सामाजिक-आर्थिक तथा संस्थागत प्रबन्ध आदि का अध्ययन शामिल है) तथा उन कारकों का पता लगाना जिसका प्रभाव समय तथा स्थान आधारित भू-क्षरण पर पड़ता है।

3) एक पहलू या समग्र पहलुओं का अलग-अलग आधार-चित्र तैयार करना, जो पवित्र-उपवन सीमांकन, भूमि उपयोग परिवर्तन, प्रभाव तथा औरेन के परिवर्तन से सम्बन्धित हो। पवित्र-उपवन को राजस्व कर की श्रेणी में लाने का प्रयत्न करना।

4) पवित्र-उपवन के प्रभावी-संरक्षण हेतु आधार रेखा तथा मानचित्र बनाने सम्बन्धी औजारों तथा तकनीक के बारे में जानकारी हासिल करना।

अवधारणा–

1) पवित्र-उपवन की पहचान तथा सीमांकन उनके पारितांत्रिक सेवाओं एवम् संकट की पहचान हेतु एक प्रभावशाली उपाय है।

2) प्राथमिकता की दृष्टि से पवित्र-उपवन के संरक्षण हेतु भौगोलिक स्थानिक पहुँच सबसे अच्छा तरीका है।

आवश्यक सामग्री–

1) क्षेत्र का कैडस्ट्रल मानचित्र

2) क्षेत्र का भू-आकृतिक शीट (1 : 50000 मापक पर)

3) GPS संचालित उपकरण या मोबाइल फोन जिसमें GPS की सुविधा हो।

4) कम्पास, (5) नापने वाला फीता, (6) ग्राफ पेपर, (7) खाका बनाया हुआ आंकड़ा शीट

8) पौधों तथा जन्तुओं की पहचान हेतु क्षेत्र मार्गदर्शक, भौगोलिक तथा भूगर्भिक विशेषताओं की पहचान हेतु क्षेत्र मार्गदर्शक। GPS सॉफ्टवेयर / अथवा दक्ष GIS की मदद से समेकित मान-चित्र तैयार किया जा सकता है।

कार्य विधि–

A. द्वितीयक सूचनाओं का संग्रहण–

1) प्रकाशित और अप्रकाशित साहित्यिक कृतियों में मौजूद सूचनायें इकट्ठा करें अथवा अन्य किसी प्रकार का रिपोर्ट पवित्र-उपवन से सम्बन्धित प्राप्त हो, संग्रह करें।

2) वनस्पति, प्राणी, भौगोलिक, भूगर्भिक एवं पूर्व में हुए जलवायु परिवर्तन या उससे संबन्धित घटनाओं, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक उपयोग आदि से सम्बन्धित प्राप्त रिपोर्ट को सिलसिलेवार ढंग से सजायें। यह एक प्रकार का आधार होगा जिसके साथ क्षेत्रीय कार्य के रिपोर्ट को जोड़ा जा सकता है।

B. सीमा का मानचित्र बनाना–

पवित्र उपवन के प्रथागत सीमा के साथ चलें तथा इसके विस्तार तथा सीमा को कैडेस्ट्रल मानचित्र पर अंकित करें जिससे पवित्र-वन का एक सुनिश्चित सीमा निर्धारण हो जाये जिसको बाद में उदाहरण के रूप में दिया जा सके। सीमा पर दिये गये चिह्न से क्षेत्र के विस्तार की स्पष्ट समझ होती है।

उपर्युक्त क्रियायें यथा रूप में GPS संचालित उपकरण से भी किया जा सकता है। पवित्र-उपवन के सीमा क्षेत्र में भ्रमण के दौरान GPS का ट्रैक-लॉग बाद में GPS सॉफ्टवेयर में ट्रान्सफर किया जाता है, जिससे आगे कैडेस्ट्रल या टोपोग्राफिकल मैप पर डिजिटाइजेशन तथा अधिचित्रित हो सके।

वैकल्पिक रूप से स्थानीय संसाधन मैप जिसमें पवित्र उपवन का कुल क्षेत्र दर्शाया गया है, स्थानीय समुदाय से विचार-विमर्श के बाद तैयार किया जा सकता है। इसके बाद उपर्युक्त मानचित्र को सावधानी पूर्वक तथा साफ-साफ पुनः बनायें ताकि उन्हें प्रलेखन में शामिल किया जा सके तथा अन्य पहलुओं को भी उनमें चिन्हित किया जा सके। सीमा मानचित्र को पुनः जाली में विभक्त किया जा सकता है। जाली के आकार का निर्धारण कुल क्षेत्र के आधार पर करना चाहिए। जाली मानचित्र प्रजाति के वितरण एवम् अन्य क्रियाओं या पहलुओं के अंकन के लिए उपयोगी होता है जो मानचित्र पर स्थान की सूचना हेतु अंकित होता है।

C. क्षेत्र-सर्वेक्षण (प्राथमिक सूचना)–

- पवित्र-उपवन के वर्तमान पारितंत्र सेवाओं को अंकित करे।
- अस्थायी सर्विसेज (जैसे-पानी की उपलब्धता तथा उपयोग, नाला, मृदा के प्रकार तथा उसकी उर्वरता, औषधिय पौधे, नन-टिम्बर जंगली उत्पाद, फल, चारा तथा ईंधन की लकड़ी आदि।
- नियंत्रण सम्बन्धी सेवायें (जैसे-बाढ़ नियंत्रण, भू-क्षरण नियंत्रण, बहते पानी को रोकना, भूगर्भीय जल के स्तर को पुनः प्राप्त करना, भूखण्ड स्खलन में कमी लाना तथा आग प्रतिरोधी आदि)
- सांस्कृतिक तथा सुविधा से सम्बन्धित सेवायें (जैसे-धार्मिक तथा सांस्कृतिक कार्य, अनुसंधान हेतु अवसर, शैक्षणिक गतिविधियाँ, समुदाय द्वारा निर्धारित नियम प्रणाली एवं प्रबन्धन, नैतिक तथा सौन्दर्य से सम्बन्धित तथ्य आदि)।
- मददगार सेवायें (जैसे-जैव विविधता, पौधे तथा जन्तु तथा विशिष्ट पौधे एवम् जानवर प्रजाति के सूक्ष्म-वास स्थान, पौष्टिक पदार्थों का चक्र, परागण, फलों तथा बीजों का वितरण तथा पुनर्जीवन सम्बन्धी क्रिया)
- पवित्र उपवन से संबंधित वर्तमान संकट को रिकार्ड करें तथा उन कारकों की पहचान करें जो अप्राकृतिक ढंग से परिवर्तन के लिए उत्तरदायी है जैसे-भूमि का टुकड़ों में बँटना, विदेशी प्रजातियों का प्रवेश, प्रदूषण, काष्ठ निष्कासन, पेड़ों की शाखाओं को काटना, चारागाह के रूप उपयोग, बिना आज्ञा शिकार करना, खनन, आग लगना, भूमि के उपयोग में परिवर्तन, अतिक्रमण आदि पारितंत्र के उपर्युक्त पहलुओं से सम्बन्धी सूचनायें इकत्र करें। इसके लिए डाटा टूल्स तथा मानक इकोलॉजिकल सैम्पलिंग तकनीक का उपयोग करना होगा। जैसे-क्वाड्रेट, प्लेट्स, Point count, एरिया सर्च, लाइन, बेल्ट तथा वाहक ट्रोन्सेक्ट, अविचारित रूप से सर्वे (Random Survey) आदि।
- प्राकृतिक संसाधनों की स्थिति अन्य विचारणीय पहुलओं को रिकार्ड करें तथा उनका गुणात्मक विश्लेषण करते हुए स्तर निर्धारण करें। जैसे-कम (low), सामान्य (moderate), ऊँचा या अधिक तथा बहुत ऊँचा या बहुत अधिक।
- आधारभूत सूचना इकट्ठा करने, इकोसिस्टम के विभिन्न पहुलओं के लोकेशन की विस्तृत रिपोर्ट तथा संकट का लोकेशन डिटेल्स तथा संरक्षण के उपाय से सम्बन्धित आंकड़ों के रिकार्ड हेतु सैम्पल डाटा शीट क्रमशः 4, 5 और 6 देखें। पारितंत्र-सेवाओं का प्रलेख नमूना डाटा शीट-3 के समान होगा पर थोड़ा बहुत बदलाव की जरूरत विभिन्न प्रकार के पारितंत्र के लिए होंगी।

D. मानचित्रण–

मानचित्रण दो विशिष्ट पहलुओं को स्पष्ट रूप से व्यक्त करता है–

1) स्थान से सम्बन्धित सूचना (समय तथा स्थान के साथ बिन्दु लोकेशन या क्षेत्र लोकेशन व्यक्त करता है) यह प्राथमिक अथवा द्वितीयक सूचना तंत्र पर आधारित हो सकता है। जैसे–जैवविविधता, सूक्ष्म वास–स्थान, भूखण्ड–क्षरण के गुण एवं नालियाँ आदि।
2) नन–स्पेशियल सूचनायें (स्थान आधारित नहीं) (जैसे–अवांछित बदलाव के कारक, संकट, संरक्षण से सम्बन्धित उपाय)।

GPS का उपयोग–

किसी विशेष स्थान से सम्बन्धित यथार्थ एवं सटीक सूचनायें प्राप्त करने हेतु GIS (Geographical Information System) एक प्रभावी तकनीक है। स्थान विशेष के बारे में सूचनायें GPS संचालित उपकरण अथवा मोबाइल GPS Application जो android अथवा स्मार्ट फोन में होता है, उपयोग कर रिकार्ड कर सकते हैं। The Global Positioning System (GPS) का उपयोग स्थान को चिन्हित करने, घूमने के क्रम में लाईन की लम्बाई नापने, भू–क्षेत्रफल का आकलन करने तथा सीमा पर भ्रमण कर उसका सीमांकन करने में किया जाता है। इसके साथ ही GPS समग्र या समेकित लोकेशन सूचना इकट्ठा करने हेतु तथा डिजिटल में चिन्हित करने हेतु बराबर महत्व का है)।

GIS की उपयोगिता–

Geographical Information System एक कम्प्यूटर साफ्टवेयर है जिसे डाटा संग्रह तथा उन्हें सजाने तथा अन्य प्रकार की सूचनाओं का समायोजन और फिर उनका विश्लेषण करने हेतु बनाया गया है। (जैसे–Arc GIS 10.2 software अथवा Open Source QGIS software)

अपने अध्ययन के क्रम में GIS का उपयोग एक सहायक तकनीक के रूप में विषय संबंधी या एकीकृत मानचित्र तैयार करने में किया जा सकता है। सभी मानचित्र का डिजिटाइजेशन GPS point द्वारा अध्ययन क्षेत्र के प्लाट से प्राप्त सूचना के आधार पर ही होना चाहिए जिसमें पवित्र–उपवन के केन्द्रीय भाग को चिन्हित किया जाता है एवम् उसके सीमा को व्यक्त किया जाता है। सभी तैयार डाटा को टोपोशीट या Cadastral map पर अंकित करने के बाद आधार मानचित्र तैयार करें। पारितंत्र सेवाओं सम्बन्धित उपर्युक्त सारी सूचनायें, बाधायें एवं संकट तथा अनुशंसित उपायों को मानचित्र में प्रदर्शित करें तथा पवित्र–उपवन के विनष्ट क्षेत्र को चिन्हित कर उसके संरक्षण हेतु उपाय सोचें।

अनुसरणीय कार्य–

प्रलेखित सूचनाओं तथा पहचान किये गये पवित्र–उपवन के विभिन्न मानचित्र का उपयोग सामयिक परिवर्तन की पहचान करने अथवा भविष्यवाणी करने में किया जा सकता है जो धनात्मक अथवा ऋणात्मक दोनों तरीके से सम्पन्न होता हो। इसका निर्धारण पवित्र उपवन में हुए हस्तक्षेप से होना चाहिए। डिजिटल मैप को गूगल अर्थ पर डाला जा सकता है। इसके अतिरिक्त इसे किसी अन्य सैटेलाइट इमेजरी से लिंक किया जा सकता है जिससे पवित्र–उपवन के हस्तक्षेप के पूर्व तथा हस्तक्षेप के बाद की स्थिति का त्रिविमिय चित्र प्राप्त हो सके।

भूक्षेत्रीय तरीका जो किसी एक पवित्र–उपवन पर अपनाया गया हो उन्हें दूसरे विस्तृत क्षेत्र के लिए जिसमें अनेक पवित्र–उपवन हों, अपनाया जा सकता है तथा एक पवित्र–उपवन की जानकारी को समग्र रूप से बड़े क्षेत्र जैसे–क्षेत्रीय, जिला या राज्यस्तर पर विस्तार पूर्वक अपनाया जा सकता है।

समस्या समाधान के तरीके–

उपर्युक्त कार्यों से प्राप्त आधार–आंकड़ा पवित्र–उपवन के संरक्षण तथा प्रबन्धन में काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं जिनमें पवित्र–उपवन को वर्तमान अवस्थाओं की स्थिति से सम्बन्धित सूचना प्रदान करने की क्षमता है। साथ ही इनमें विभिन्न पहलुओं पर तैयार मानचित्र एवं किये गये उपायों का बेहतर एवं समग्र रूप से प्रदर्शित करने की क्षमता है।

संभावित प्रतिफल–

पवित्र-उपवन स्थानीय समुदाय के लोगों के लिए जीवन-रेखा हैं क्योंकि पवित्र-उपवन उनके लिए संसाधन प्रदान करता है तथा सामाजिक-सांस्कृतिक अथवा जीवन-यापन से सम्बन्धित सामग्री प्रदान करता है। यद्यपि पवित्र- उपवन की जैव-विविधता तथा पारितांत्रिक कार्य प्रलेखित हुए हैं तथापि उनका पारितंत्र सेवाओं के साथ सम्बन्ध, संसाधन की मदद करने तथा जीवन-यापन से सम्बन्धित आदि पहलुओं पर कम ध्यान दिया गया है। उपर्युक्त अध्ययन से पवित्र-उपवन के पारितंत्र सेवाओं की क्षमता का पता चलता है एवं इस बात की जानकारी देता है कि उनके संरक्षण हेतु सरकारी, स्वयंसेवी संस्था तथा स्थानीय समुदाय द्वारा किस तरह का प्रयास हुआ है तथा इसको बेहतर बनाने हेतु और क्या किया जा सकता है। पवित्र-उपवन के मूल्यांकन से विभिन्न पहलुओं का पारितंत्र सेवाओं के योगदान के आधार को प्राथमिकता देते हुए संरक्षण हेतु उपाय करने में मददगार साबित होगा।

आंकड़ा सारणी : पवित्र उपवन के आधार सूचना का खाका

क्रम सं०	माप-दण्ड	सूचना
1.	स्थान का नाम	
2.	भौगोलिक स्थान (केन्द्रीय स्थान)	
3.	भौगोलिक स्थिति (भौतिक विस्तार की सीमा ज्यामीतिय या पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण सीमांकन)	
4.	ग्राम/शहर/जिला/राज्य	
5.	भू-उपयोग श्रेणी (वन-प्रखण्ड/राजस्व खेसरा आदि)	
6.	राजस्व रिकार्ड में क्या पवित्र-उपवन घोषित है ? अगर घोषित है तो घोषणा की तिथि तथा राजस्व रिकार्ड की कॉपी	
7.	पवित्र-उपवन का लगभग क्षेत्रफल (हेक्टेयर/वर्ग किलोमीटर में)	
8.	नजदीकी फारेस्ट ब्लॉक	
9.	स्थान का मान-चित्र तथा फोटोग्राफ (कैडस्ट्रल मैप, या हस्तचित्रित मैप जिसमें क्षेत्र-विस्तार एवम् पास के अन्य भूमि प्रदर्शित हो)	
10.	देवी-देवताओं/पूजा करने वाले समुदाय (खास समुदाय की स्थिति में उसका जिक्र)	
11.	मालिकाना हक-पब्लिक / सरकारी / समुदाय / व्यक्तिगत	
12.	मूल्य-क्षेत्रीय, पारितांत्रिक	
13.	पादप विविधता स्वभाव के अनुसार पादप प्रजातियों की संख्या, संकट ग्रस्त तथा इन्डेमिक प्रजाति, सांस्कृतिक कार्यों हेतु संरक्षित प्रजाति	
14.	जन्तु विविधता-वर्ग के अनुसार प्रजाति की संख्या, संकटग्रस्त तथा इन्डेमिक प्रजातियाँ सांस्कृतिक कार्य हेतु संरक्षित	
15.	पानी की उपलब्धता स्रोत (झरना, कुआँ, बोरिंग, हैंडपम्प, एनीकट, नाला या संग्रहित)	
16.	संसाधन उपयोग, चारागाह, मृदा निष्कासन, चारा इकट्ठा करने, ईंधन लकड़ी तथा टिम्बर, पानी उपयोग आदि।	
17.	वर्तमान स्थिति-गुणात्मक मापदंड पर रेटिंग (जैसे-अच्छा स्कोर 1 से 10 के बीच रहने पर खराब) अपने विचारों की व्याख्या करें।	
18.	वर्तमान स्थिति : भूमि विखण्डन, खनन, अतिक्रमण, आग, प्रदूषण, भू-उपयोग में परिवर्तन, पेड़ कटाई अथवा डाल कटाई, विदेशी प्रजातियों का प्रवेश आदि।	
19.	प्राथमिकता (बेहतर संरक्षण तथा प्रबन्धन हेतु) प्राथमिकता के बिन्दु तथा उनमें हस्तक्षेप के स्थान	
20.	ऐसे महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों या एजेंसियों का नाम दें जो भविष्य की गतिविधियों में मददगार साबित हों।	

नोट :- क्रम संख्या 11 से 18 में संक्षेप में सूचना देना है तथा इसका विस्तारित रूप अलग से बनाये डाटाशीट में दें।

नमूना आंकड़ा सारणी-5

पवित्र-उपवन के पारितांत्रिक विशेषताओं की सूची-नमूना आंकड़ा

क्रम सं०	मापदण्ड	स्थान (भौगोलिक पहचान)	प्राप्ति/उपलब्धता

नोट :- गुणात्मक अथवा मात्रात्मक स्केल का व्यवहार करें जैसे-बहुत सामान्य, सामान्य/कम सामान्य/ यदा-कदा/मौसमी/सालों भर)

नमूना आंकड़ा सारणी-6

पवित्र-उपवन पर खतरे एवं हस्तक्षेप का आंकड़ा

क्रम सं०	मापदण्ड	स्थान/स्थिति (भौगोलिक)	प्राथमिकता
	प्रस्तावित हस्तक्षेप		

नोट :- संख्यात्मक स्केल का उपयोग प्राथमिकता स्तर बतलाने हेतु करें।

क्रम	सामान्य	ज्यादा	सबसे ज्यादा
1	2	3	4

परियोजना संख्या- 3

मैनग्रोव पारितंत्र : मानवीय गतिविधियों का प्रभाव, जैव-विविधता, सामाजिक, पारिस्थितिक तथा आर्थिक पहलुओं का अध्ययन

परिचय–

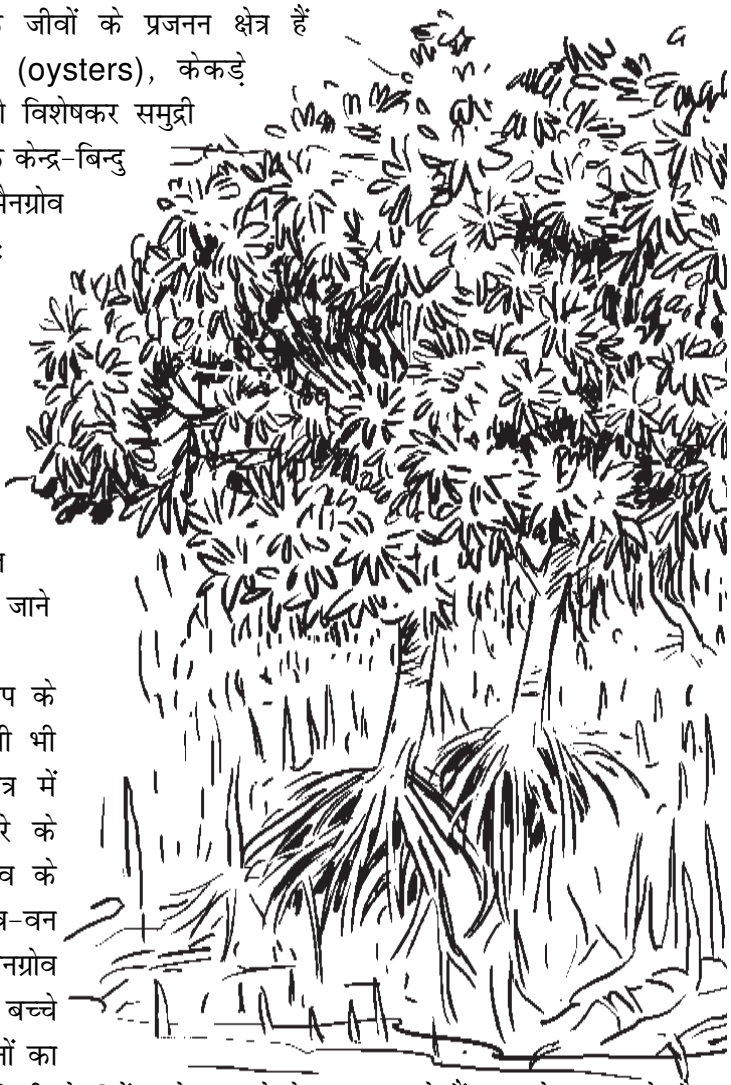

मैनग्रोव पारितंत्र अनेक प्रकार के जीवों के प्रजनन क्षेत्र हैं जैसे-बैमेकिल्स (bamacles), घोंघा (oysters), केकड़े (crabs), झींगा तथा मछलियाँ आदि जो विशेषकर समुद्री पारितंत्र में खाद्य-श्रृंखला तथा खाद्य-जल के केन्द्र-बिन्दु होते हैं। संसार के 35% से ज्यादा मैनग्रोव समाप्त हो चुके हैं। मैनग्रोव वनों को प्राय: अनुत्पादक तथा बदबूदार मानते हैं अत: उनकी कटाई-सफाई कर कृषि कार्य लायक, आवासीय उपयोग तथा आन्तरिक उपायों (जैसे बन्दरगाह) लायक भूमि तैयार करने एवं औद्योगिक स्थल विकसित करने में लगे हैं। वर्तमान समय में मैनग्रोव की कटाई पर्यटन क्षेत्र विकसित करने एवं झींगा एक्वाकल्चर हेतु की जाने लगी है।

मैनग्रोव पारितंत्र विनाशकारी हस्तक्षेप के प्रति बहुत ही संवेदनशील होते हैं। किसी भी प्रकार का गंभीर खतरा अन्तर्ज्वारीय क्षेत्र में होता है तो उसका असर समुद्र किनारे के कीचड़दार क्षेत्र पर पड़ता है तथा मैनग्रोव के श्वसन मूल नष्ट हो जाते हैं तथा मैनग्रोव-वन के विनाश का संकट पैदा होता है। ऐसे मैनग्रोव क्षेत्र जो विद्यालय से बहुत दूर न हो, बच्चे अपने मार्गदर्शक शिक्षक के साथ इन स्थानों का भ्रमण उस स्थान के पारितंत्र एवं पारिस्थितिकी सेवाओं को समझने हेतु कर सकते हैं। अपने भ्रमण के दौरान बच्चे अप्रभावित तथा गंभीर रूप से प्रभावित मैनग्रोव क्षेत्र की पहचान करें तथा संकट उत्पन्न करने वाले कारकों जैसे वृक्ष की कटाई, कूड़े-कचड़े को जमा करना, पुन: उपजाऊ बनाये गये क्षेत्र तथा आवासीय उद्देश्य से भूखंड बनाना आदि की पहचान करें। अप्रभावित तथा प्रभावित मैनग्रोव क्षेत्र का तुलनात्मक अध्ययन उचित विधियों का उपयोग कर किया जा सकता है।

उद्देश्य–

1) मैनग्रोव के पारिस्थितिकी तथा पारितांत्रिक सेवाओं को समझना।

2) मानव गतिविधियों का नाजुक मैनग्रोव पारितंत्र पर प्रभाव का अध्ययन तथा इस तथ्य का पता लगाना कि मानवीय गतिविधियों से मैनग्रोव पारितांत्रिक सेवायें कैसे प्रभावित हो रहे हैं।

3) स्वस्थ मैनग्रोव तथा बाधित / विनष्ट मैनग्रोव के क्षेत्र का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अवधारणा–

– दुनिया में मैनग्रोव पारितंत्र सभी नाजुक पारितंत्रों में से एक है जिन पर विनष्टकारी कारकों द्वारा उनकी गुणवत्ता तथा मात्रात्मक गुणों में क्षरण होता है।

– मानवीय गतिविधियों के मात्रात्मक प्रभाव का अनुमान किसी क्षेत्र के मैनग्रोव के सामुदायिक संगठन का अध्ययन कर किया जा सकता है।

आवश्यक सामग्री–

1) अध्ययन क्षेत्र का कैडस्ट्रल मैप, डाटाशीट, नमूना संग्रह हेतु जाली, नोटबुक, नाइलन का धागा, लम्बा काँटी, लकड़ी या धातु का बना क्वाड्रेट फ्रेम आदि।

कार्य-विधि–

– **क्वाड्रेट विधि** – पादप आबादी की बारम्बारता मापने हेतु शोधकर्त्ता सामान्यतया चतुष्कोणीय विधि का उपयोग करते हैं। चतुष्कोणीय एक नमूना-भूखंड होता है जिसका आकार विशिष्ट होता है तथा इसका उपयोग समष्टि अथवा समुदाय अध्ययन हेतु किया जाता है। चतुष्कोणीय का उपयोग विभिन्न वैज्ञानिक क्षेत्रों जैसे वनस्पतियों का मूल्यांकन (पादप घनत्व, पादप बारम्बारता तथा बायोमास आदि) हेतु किया जाता है।

– बारम्बारता उपयोग में लाये गये चतुष्कोणीय के प्रभावित होता है। जिस क्षेत्र का चयन अध्ययन के लिये किया गया हो, वह इतना बड़ा न हो कि उसका नमूना अच्छी तरह से प्राप्त नहीं किया जा सके। साथ ही इतना छोटा भी न हो कि वास-स्थान से नमूना प्राप्त करने में कठिनाई हो। शाकीय वनस्पति हेतु एक वर्ग मीटर क्षेत्र वाला चतुष्कोणीय सामान्यतया उपयोग में लाया जाता है।

– बारम्बारता ज्ञात करने हेतु चतुष्कोणीय विधि एक बहुत ही लोकप्रिय विधि है। क्योंकि चतुष्कोणीय विधि आसान तथा तथ्यात्मक होता है। बच्चे इसका उपयोग सहजता पूर्वक कर सकते हैं। किसी क्षेत्र में किसी प्रजाति की संख्या का ज्ञान बारम्बारता के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। इसे प्रतिशत के रूप में ज्ञात करते हैं।

$$= \frac{5}{7} \times 100 = 71.42\%$$

$$\text{बारम्बारता} = \frac{\text{वैसे नमूनों की संख्या जिनमें प्रजाति उपस्थित है}}{\text{कुल नमूनों की संख्या}} \times 100$$

बारम्बारता निकालने के लिए – बिना किसी नियमितता में फैले नमूना क्षेत्र जो एक दूसरे से खासी दूरी पर हो, में प्राप्त प्रजाति को नोट करते हैं। इसके बाद की गणना ऊपर दिये सूत्र द्वारा करते हैं। इसे एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। माना एक मैनग्रोव क्षेत्र के अध्ययन के क्रम में सात भूखंड अथवा चतुष्कोणीय लिया। इनमें से मैनग्रोव वृक्ष राइजोफोरा म्यूक्रोनाटा का एक-एक पेड़ पाँच प्लाट में पाया गया। अतः राइजोफोरा म्यूक्रोनाटा की प्रतिशत बारम्बारता

उपर्युक्त विधि द्वारा अन्य जातियों की बारम्बारता ज्ञात की जाती है। जीव जैसे केंकड़ा, झींगा, घोंघा, स्पांज, मछलियाँ, केंचुआ (आवश्यक नहीं है कि प्रजाति स्तर तक जायें) आदि का भी अध्ययन उपर्युक्त विधि द्वारा कर सकते है।

– चतुष्कोणीय का आकार अध्ययन किये जाने वाले पौधे/प्राणी के आकार पर निर्भर करता है। मैनग्रोव में वृक्षों का अध्ययन करने हेतु चतुष्कोणीय का आकार 5 मी० × 5 मी० उचित हो सकता है। क्वाड्रेट की सीमा का निर्धारण रस्सी द्वारा किया जा सकता है। झाड़ी तथा छोटे पौधे के अध्ययन हेतु चतुष्कोणीय का आकार 1 मी० × 1 मी० हो सकता है तथा इसका सीमांकन पूर्व में निर्धारित क्वाड्रेट के कोने पर मौजूद कांटी में रस्सी लगा कर किया जा सकता है। प्राणी जैसे मछलियों, केंकड़े, केंचुए आदि की गणना प्रारम्भ

में ही करना उचित होता है क्योंकि क्षेत्र में अनेक तरह की बाधायें उत्पन्न हो सकती है। प्राणियों के अध्ययन के लिए लकड़ी से बने फ्रेम अथवा धातु से बने फ्रेम वाला चतुष्कोणीय का उपयोग करना चाहिए।

– आर्थिक, सामाजिक तथा जीवन-यापन के तौर-तरीके सम्बन्धित पहलुओं का अध्ययन उपयुक्त नमूने के साथ सर्वेक्षण करें। प्रश्नावली इस प्रकार तैयार करें कि वांछित पहलुओं से सम्बन्धित तथ्यों की समग्र जानकारी प्राप्त हो सके।

अनुसरण क्रिया–

अपने अध्ययन से प्राप्त प्रतिफल को छात्र-साथियों तथा विद्यालय के शिक्षकों के सामने प्रस्तुत करना चाहिए तथा प्रशासक एवम् जन समुदाय को पारितांत्रिक सेवाओं के प्रति जागरूक करने हेतु सामूहिक प्रयास करना चाहिए जो संवेदनशील पारितंत्र से प्राप्त होता है। साथ ही यह भी बतायें किस प्रकार मनुष्य की गतिविधियों द्वारा पारितंत्र एवं इनकी सेवायें को प्रभावित किया है। समाप्त या बर्बाद हुए मैनग्रोव क्षेत्र को पुनर्जीवित करने अथवा संरक्षण हेतु सक्षम पदाधिकारी/आमजन से भागीदारी निभाने का आग्रह करें।

निदान के उपाय–

तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि किसी भी पारितंत्र पर विभिन्न कारकों का किस हद तक संरचना तथा सेवाओं पर प्रभाव पड़ा है। स्थानीय सेवाओं के जीवन-शैली पर पड़ने वाले प्रभाव का ज्ञान होता है एवं भूखंड तथा सर्वे से प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से समाज पर पड़ने वाले प्रभाव भी स्पष्ट होता है। विध्वंस वाले स्थान में और विध्वंस आगे न हो तथा उस स्थान में पारितंत्र को पुनः स्थापित करने की दिशा में प्रयत्न करना ही एक मात्र उपाय है। अतः मैनग्रोव पारितंत्र से लगातार पारितांत्रिक सेवायें पाने हेतु उसका संरक्षण करना जरूरी है।

संभावित प्रतिफल–

बच्चे पारितंत्र में मानवीय गतिविधियों के कारण संवेदनशील प्रजातियों पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण करने में सक्षम होंगे। अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होगा कि पुनःस्थापन पर खतरे का क्या असर है अतः बच्चे मैनग्रोव के भविष्य की स्थिति की भविष्यवाणी कर सकते हैं अगर खतरा उसी प्रकार बना रहे।

1.1 अन्य परियोजना विचार :

1) परागगणों के वितरण से एलर्जी की समस्या।
2) खर-पतवार का वैकल्पिक उपयोग (जैसे–जलकुंभी, लैंटाना, मेसक्यूट)।
3) खास पौधे, जन्तु या प्रजातियों के समूह के वितरण प्रणाली का GPS की सहायता से अध्ययन।
4) जियोग्राफिकल-इनफोरमेशन सिस्टम का उपयोग रिमोट सेंसिंग (GIS-RS) का उपयोग करते हुए प्रजाति अथवा पारितंत्र का अध्ययन करना।
5) इकोटॉन स्थल के सजीव तथा निर्जीव अवयवों का आकलन करना तथा उसके संरक्षण से संबन्धित उपाय करना।
6) समुद्र तटीय क्षरण-कारण, प्रभाव तथा पुनर्स्थापन के उपाय।
7) तितली तथा होस्ट प्लान्ट।
8) कार्बन पदछाप का अध्ययन करना।
9) जल-संरक्षण हेतु जल आगार क्षेत्र में सुधार।

10) भू-उपयोग में परिवर्तन से नाले के तौर-तरीके (पैटर्न) में परिवर्तन तथा उनका पारितंत्र पर प्रभाव।
11) जैविक फार्म तथा अन्य फार्म के मृदा-जीव का अध्ययन।
12) कोरल-रीफ विविधता तथा उनकी पारितांत्रिक सेवायें।
13) विभिन्न भू-आकृतिक संरचना (topography) का फसलों की विविधता से सम्बन्ध का अध्ययन साथ ही उनके मृदा के साथ भी सम्बन्ध प्राप्त करना।
14) परिवर्तन के प्रति कौए की प्रतिक्रिया का अध्ययन जिसमें उनके घोंसले भी शामिल हो।
15) विभिन्न भूखण्ड में पौधों एवं प्राणियों का वितरण पैटर्न तथा उनका महत्व।
16) स्थानीय जलाशयों में जलीय पौधों में विविधता तथा उनका महत्व।
17) स्थानीय स्तर पर विकासीय कार्य-कलापों का वातावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का मूल्यांकन करना (EIA).
18) चरना तथा गोबर/मलपदार्थ द्वारा पौधे का फैलना।
19) अपने गाँव/शहर में मौजूद चट्टानों के ढेर तथा उनके महत्व का अध्ययन।
20) मानवीय गतिविधियों का कोरल रीफ पारितंत्र उत्पादकता पर प्रभाव जिसमें कोरल का नष्ट होना भी शामिल है।
21) स्थलीय मूल वनस्पति (पवित्र-उपवन/बाग/वन) के पारितांत्रिक सेवाओं पर विदेशी प्रजातियों के घुसपैठ का प्रभाव।
22) ध्वनि का जन्तुओं के कार्य-कलापों पर प्रभाव का अध्ययन (चिड़ियाघर/पालतू/घुमक्कड़ जानवर)
23) सूचक प्रजातियाँ तथा पारितंत्र का स्वास्थ्य।
24) इनलैंड आर्द्रभूमि तथा जीवन-यापन।
25) कीट-पेस्ट तथा प्राकृतिक शत्रु।
26) विदेशी मछलियों का स्थानीय जलाशयों में प्रवेश तथा जलीय पारितंत्र पर उनका प्रभाव।
27) घुसपैठी जलीय पौधे तथा उनका प्रभाव।
28) क्या घरेलू गौरैया हमलोगों के घरों, बाजारों से गायब हो रहे हैं? (तार्किक विश्लेषण)
29) हिमालय के नन-ग्लेशियल क्षेत्र में पाइन वृक्ष का प्रवेश।
30) मैनग्रोव तथा इसकी पारितांत्रिक सेवायें।
31) दुर्लभ, संकटग्रस्त, आपत्तिग्रस्त समूहों की देखभाल, प्रजातियों के प्राथमिकता के आधार पर उपाय करना।
32) बाग या फुलवारी के मधुयुक्त पौधे तथा इसके ऊपर आने वाली पक्षियाँ तथा तितली।
33) विभिन्न पादप प्रजातियों के लिए सबसे अधिक जल की आवश्यकता।
34) प्लास्टिक / कूड़ा-कचरा का मैनग्रोव पर प्रभाव।
35) परागण विविधता / परागण के एजेंट जैसे-कीट, चमगादड़ तथा पक्षियाँ।
36) नदी का किनारा / बालू को पादप प्रजातियों द्वारा स्थिरता प्रदान करना।
37) सड़क का नेटवर्क का विस्तार तथा वायुमण्डल के ताप की तुलना बिना छायादार पेड़ तथा छायादार पेड़ों वाले स्थान का।
38) प्राकृतिक सरकट या रीड बेड का जलाशयों के प्रदूषण रोकने में भूमिका।
39) विषाक्त बीज तथा मृत्युदर।
40) आर्द्र-क्षेत्र का सिकुड़ना तथा उसका प्रभाव।
41) चयनित वृक्षों का रोपण तथा उसका स्थानीय पारितंत्र या जीवों पर प्रभाव।
42) शहरी क्षेत्र में सड़क-किनारे वृक्षों की स्थिति तथा शहरी जलवायु एवं पारिस्थितिक तंत्र के नियंत्रण में महत्व।
43) जल स्रोत का प्रचलित स्वरूप (उदाहरण-जल का विभिन्न तरीके से उपलब्धता जैस वाष्पी, सतही तथा

भूगर्भीय जल, बर्फ, मृदा की नमी, आर्द्रता आदि तथा इसके चक्र की विधि) गाँव तथा शहर में। यह भी सुनिश्चित करना कि मानव जनित कारकों तथा प्राकृतिक कारकों द्वारा कैसे परिवर्तित हो रहे हैं।

44) शहरी वातावरण में जैवविविधता हॉटस्पॉट (Hotspot) का अध्ययन।

45) बाग-फुलवारी अथवा प्राकृतिक उपवन में प्राकृतिक मौसमी परिवर्तन तथा मानवीय गतिविधियों के प्रभाव का अध्ययन।

46) सड़क दुर्घटना में मरने वाले जन्तुओं का अध्ययन तथा पारितंत्र पर प्रभाव।

47) मूल निवासी (Native) जीवों तथा विदेशी प्रजातियों के बीच प्रतियोगितात्मक पहलुओं का तुलनात्मक अध्ययन। (जैसे-Anogeissus, pendulata नामक मूल निवासी (native) Prosopis juliflora का प्रतियेागी (competitor) है)।

48) विभिन्न भूखण्डों में विदेशी प्रजातियों के प्रवेशमार्ग का अध्ययन।

49) शहरी जैवविविधता का अध्ययन।

50) शहरी पक्षी समुदाय का अध्ययन।

51) हवा की गति में अवरोधक वनस्पतियों का अध्ययन (तुलनात्मक अध्ययन तथा इसकी उपयोगिता)।

References :

- Akwé: Kon Voluntary Guidelines for the conduct of cultural, environmental and social impact assessment regarding developments proposed to take place on, or which are likely to impact on, sacred sites and on lands and waters traditionally occupied or used by indigenous and local communities (2004). CBD guideline Series, Secretariat of the Convention on Biological Diversity. Available at: https://www.cbd.int/doc/publications/akwe-brochure-en.pdf
- Community Conserved Areas: Odisha and Madhya Pradesh- Directory. Report of United Nations Development Program. Available at: http://www.in.undp.org/
- Conservation Fit (a new approach to monitor endangered species). www.conservationfit.org
- Conservation of ecological heritage and sacred sites of India. C.P.R. Environmental Education Centre. www.ecoheritage.cpreec.org
- Environmental Impact Classification of Alien Taxa (EICAT - IUCN). https://www.iucn.org/theme/species/our-work/invasive-species/eicat
- India State of Forest Report. Forest Survey of India. Available at http://fsi.nic.in/details.php?pgID=sb_62
- IUCN guidelines for the prevention of biodiversity loss due to biological invasion (approved by the IUCN council, February, 2000). IUCN – The World Conservation Union (2000). www.iucn.org
- IUCN guidelines for the prevention of biodiversity loss caused by alien invasive species. Available at: http://intranet.iucn.org
- Millennium Ecosystem Assessment, 2005. Ecosystems and Human Well-being: Synthesis. Island Press, Washington, DC. Available at: http://www.millenniumassessment.org/documents/document.356.aspx.pdf
- National Environment Policy (2006). Ministry of Environment, Forest and Climate Change. Govt. of India. Available at: http://www.moef.gov.in/sites/default/files/introduction-nep2006e.pdf
- Sacred Groves - India Environment Portal. http://www.indiaenvironmentportal.org.in/category/2373/thesaurus/sacred-groves/
- Significance of sacred groves in conservation of biodiversity. ENVIS Centre on Forestry. www.frienvis.nic.in
- State of the World's Forests. Food and Agriculture Organization of the United Nations (FAO). Available at: http://www.fao.org/publications/sofo/en/
- Wetlands and Ecosystem services. Convention on Biological Diversity. https://www.cbd.int/waters/doc/wwd2015/wwd-2015-press-briefs-en.pdf
- Adve, N. (2014). Moving Home. Global warming and the shifts in species' range in India. Economic and Political Weekly, Vol. XLIX(39): 34-38.
- B. M. Kharkongor, B.M. and B. K. Tiwari. 2015. Sacred groves of Meghalaya: a review. Int. J. Science and Research (IJSR), Volume 6 Issue 3, March 2017, 346-349. ISSN (Online): 2319-7064. Available at: https://www.ijsr.net/archive/v6i3/ART20171342.pdf.

- Chandan, M.D.S., M. Gadgil and J.D. Hughes (1998). Sacred groves of the Western Ghats of India. In: Conserving the sacred for biodiversity management (Eds.) P.S. Ramakrishnan, K.G. Saxena and U.M. Chandrashekara. Oxford and IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, pp 211-231. 13-34.
- Dubey, S. (2008). Invasive alien flora in Rajasthan. In: Conserving Biodiversity of Rajasthan (with emphasis on wild fauna and flora) (Ed.) Ashok Verma. Pub. Himanshu Publications, Udaipur (Raj.), pp. 455-465.
- Dubey, S. and B.L. Chaudhary (2011). Record of Alien Plant Species in Jaisamand Wildlife Sanctuary, Rajasthan, India. J. Indian Bot. Soc. Vol. 90(3&4): 367-373.
- Fekete, B. M., D. Wisser, C. Kroeze, E. Mayorga, L. Bouwman, W. M. Wollheim, and C. Vörösmarty (2010). Millennium Ecosystem Assessment scenario drivers (1970–2050): Climate and hydrological alterations, Global Biogeochem. Cycles. Available at: http://onlinelibrary.wiley.com/doi/10.1029/2009GB003593/full
- Forman, R. and S. Collinge (1997). Nature conserved in changing landscapes with and without spatial planning. Landscape and Urban Planning, Vol. 37:129-135.
- Gokhale, Y. and N.A. Pala. (2011). Ecosystem services in sacred natural sites (SNSs) of Uttarakhand: a preliminary survey. J. Biodiversity, 2(2):107-115.
- Hangarge L. M. , D. K. Kulkarni , V. B. Gaikwad , D. M. Mahajan and V. R. Gunale (2016). Plant diversity of sacred groves and its comparative account with surrounding denuded hills from Bhor region of Western Ghats. Bioscience Discovery, 7(2):121-127. Available at: http://biosciencediscovery.com/Vol%207%20No%202/Hangarge121-127.pdf.
- Joshi, R., S. Kulkarni, S. Bhusare, N. Phansalkar, D. Nipunage, and D. Kulkarni, (2015). Ecosystem services of sacred groves in western Maharashtra through multiple facets. Life sciences leaflets, [S.l.], v. 60, jan. 2015. ISSN 0976-1098. Available at: <http://petsd.org/ojs/index.php/lifesciencesleaflets/article/view/246>
- Khan, M.L., A.D. Khumbongmayum and R.S. Tripathi (2008). The Sacred Groves and Their Significance in Conserving Biodiversity An Overview. Int. J. Ecology and Environmental Sciences, 34(3): 277-291. Available at: http://www.activeremedy.org/wp-content/uploads/2014/10/ml-khan-et-al-2008-the-sacred-groves-and-their-significance-in-conserving-biodiversity.pdf.
- Mandal, R.N. and K.R. Naskar (2008): Diversity and classification of Indian mangroves - a review. Tropical Ecology, 49(2): 131-146. Online Available at: http://www.tropecol.com/pdf/open/PDF_49_2/05%20Mandal.pdf.
- Naskar, K.R. and R.N. Mandal (1999). Ecology and Biodiversity of Indian Mangroves. Daya Publishing House, New Delhi, India.
- Ray, R., Chandran, M.D.S. & Ramachandra, T.V.(2010). Ecosystem services from sacred groves of Uttar Kannada - a case study. Available at: http://www.ces.iisc.ernet.in/energy/lake2010/Theme%202/rajasri_ray.pdf
- Ray, R., Chandran, M.D.S. & Ramachandra, T.V. (2014). Biodiversity and ecological assessments of Indian sacred groves. Vol. 25: 21-28. J. Forestry Research, doi:10.1007/s11676-014-0429-2
- T V R Murthy, J G Patel, S. Panigrahy and J S Parihar (Eds.). 2013. National Wetland Atlas: Wetlands of International Importance under Ramsar Convention, SAC/EPSA/ABHG/NWIA/ATLAS/38/2013, Space Applications Centre (ISRO), Ahmedabad, India, 230p. Available at: http://www.indiaenvironmentportal.org.in/files/file/Atlas-Wetlands-International%20Importance-Ramsar-Convention.pdf

Abbreviations used in this section

CBD	- Convention on Biological Diversity
CCA	- Community Conserved Areas
GIS	- Geographical Information System
GISP	- Global Invasive Species Program
GPS	- Global Positioning System
IUCN	- International union for Conservation of Nature and Natural Resources
MEA	- Millennium Ecosystem Assessment
MGNREGA	- Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act

उपविषय–II

स्वास्थ्य, स्वच्छता और सफाई-व्यवस्था

स्वास्थ्य, स्वच्छता और सफाई-व्यवस्था

2.1 पृष्ठभूमि

स्वास्थ्य सजीव जन्तु (जगत) की कार्यात्मक और चपापचयी (metabolic) दक्षता का एक स्तर है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO-2006) ने मनुष्य के स्वास्थ्य की व्यापक परिभाषा इस तरह दी है–"स्वास्थ्य किसी भी बीमारी या दुर्बलता का न होना ही नहीं बल्कि यह पूरी तरह से शारीरिक, मानसिक और सामाजिक तंदुरुस्ती की स्थिति है।" (*http://www.who.int/governance/eb/whoconstitution.en.pdf*)

स्वास्थ्य अथवा स्वास्थ्य और तंदुरुस्ती में सहाय्य वातावरण, आत्मिक सुरक्षा, विकल्प चुनने की स्वतंत्रता, सामाजिक संबंध, पर्याप्त रोजगार और आमदनी, शैक्षिक स्रोतों की पहुँच और सांस्कृतिक परिचय समाहित है।

पिछले दस वर्षों से अधिक, स्वास्थ्य प्रचार से जुड़े कार्यकर्त्ताओं से लगातार मनुष्य और पर्यावरण के संबंध को पारितंत्र के परिप्रेक्ष्य में सोचने को तथा मनुष्य के विकास में स्वास्थ्य के प्रचार के लिए पूर्ण रूप से पारिस्थितिक पहुँच को अंगीकार करने को कहा जाता रहा है। (*Hancock 1993a*)

स्वच्छता स्वास्थ्य को संरक्षित रखने के लिए किए जाने वाले उपाय हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार, "स्वच्छता उन स्थिति और उपायों को बताता है जो हमारे स्वास्थ्य को बनाए रखने और बीमारियों को फैलने से रोके।" स्वच्छता, साफ-सफाई, स्वास्थ्य और दवाईयों से संबंधित एक अवधारणा है। साथ ही यह व्यक्तिगत और व्यावसायिक देखभाल की कार्यप्रणाली से संबंधित है। चिकित्सा क्षेत्र और प्रतिदिन की जीवनचर्या में स्वच्छता की आदतों को बीमारियों को फैलने से रोकने के लिए अपनाया जाता है। स्वच्छता की आदतें बदलती हैं और जो आदत एक संस्कृति में स्वीकार्य है, वह दूसरी संस्कृति में स्वीकार्य नहीं भी हो सकती है। खाद्य पदार्थ के उत्पादन में, फार्मास्यूटिकल, कास्मेटिक तथा अन्य उत्पादों के निर्माण में गुणवत्ता के विश्वास को बनाए रखने में स्वच्छता एक महत्वपूर्ण घटक है।

सफाई और स्वच्छता शब्द का उपयोग अक्सर अदल-बदल कर किया जाता है, जिससे भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। सामान्यत: स्वच्छता वैसे कार्यकलाप हैं जो बीमारी उत्पन्न करने वाले जीवों को फैलने से रोकते हैं। सफाई की क्रिया (यथा-हाथ धोना) हानिकारक सूक्ष्मजीवों के साथ-साथ धूल, मिट्टी को भी दूर

करती हैं। इस तरह हम अक्सर स्वच्छता को प्राप्त करते हैं।

सामान्यत: सफाई-व्यवस्था से तात्पर्य है मनुष्य के मल एवं मूत्र के सुरक्षित निष्पादन के लिए उपलब्ध सुविधाएँ एवं तरीके। "सफाई व्यवस्था" का अर्थ कूड़े-कचरों के संकलन तथा अपशिष्ट जल-प्रबंधन के साथ हमारी स्वच्छ स्थिति को बनाए रखना भी है। (WHO)

समुदाय के स्वास्थ्य को आगे बढ़ाने के लिए स्वच्छ वातावरण विकसित करना और बीमारियों के चक्र को तोड़ना ही पर्यावरणीय सफाई-व्यवस्था परिकल्पित करता है। यह बहुत सारी बातों पर निर्भर करता है जिसमें स्वच्छता, लोगों के रहने सहने का स्तर, विभिन्न प्रकार के स्रोतों की उपलब्धता, समुदाय की जरूरतों के अनुसार नवाचारी एवं उपयुक्त तकनीक, देश के सामाजिक एवं आर्थिक विकास, पर्यावरणीय सफाई-व्यवस्था से संबंधित सांस्कृतिक कारक, राजनीतिक प्रतिबद्धता, संबद्धित क्षेत्रों की कार्य क्षमता, सामाजिक कारक जिनमें समुदाय के व्यवहारिक पैटर्न भी निहित हों, अंगीकार किए गए वैधानिक उपाय और अन्य। पर्यावरणीय सफाई व्यवस्था के क्षेत्र में भारत अभी भी बहुत सारे देशों से काफी पिछड़ा हुआ है।

पारिस्थितिक स्वच्छता, जिसका सामान्यत: संक्षिप्त नाम इकोसेन (Ecosan) है, तकनीक या युक्ति से अलग एक पहुँच है, जो कृषि और सफाई व्यवस्था के बीच में सुरक्षित रूप से "close the loop" (मुख्यत: पोषक तत्त्वों और कार्बनिक पदार्थों के लिए) की इच्छा से पहचाना जाता है। दूसरे शब्दों में–इकोसेन फसल उत्पादन में उत्सर्जी स्रोतों (पादप पोषक तत्त्व और कार्बनिक पदार्थ) का सुरक्षित पुन:चक्रण इस तरह से है, जिससे अनवीकरणीय स्रोतों का उपयोग कम हो गया है। अच्छी तरह से विकसित तथा कार्यरूप देने के बाद, इकोसैन मानव मलमूत्र को पोषक तत्वों में बदलकर मिट्टी में वापस लौटाने की एक स्वस्थ, सुरक्षित, किफायती, बंद पाश (close loop) पद्धति है। इससे पानी भी वापस मिट्टी में चला जाता है। इकोसैन को स्रोत-आधारित सफाई व्यवस्था भी कहते हैं।

टिकाऊ सफाई व्यवस्था पूरी "सफाई-व्यवस्था मूल्य श्रृंखला" को मानती है। यह उपभोक्ता के अनुभव, उत्सर्जी पदार्थ तथा अपशिष्ट जल संग्रहण, परिवहन अथवा अपशिष्ट का वाहन, उपचार तथा पुनर्उपयोग अथवा निष्पादन पर आधारित है।

इस शब्द का व्यापक उपयोग सन् 2009 से किया जा रहा है। सन् 2007 में टिकाऊ सफाई व्यवस्था गठबंधन ने सफाई व्यवस्था के टिकाऊपन की तुलना करने के लिए पाँच टिकाऊपन नियमन को परिभाषित किया। टिकाऊ होने के लिए, सफाई-व्यवस्था को आर्थिक रूप से व्यवहार्य, सामाजिक रूप से स्वीकार्य, तकनीकी और सांस्थानिक रूप में उपयुक्त और इससे पर्यावरण तथा प्राकृतिक स्रोत का भी बचाव होना चाहिए।

टिकाऊ या सतत् विकास–2015 के बाद के विकास एजेन्डा की मूल अवधारणा, एक समेकित जटिल पर्यावरणीय, सामाजिक, आर्थिक और शासकीय चुनौतियों की प्रतिक्रिया है, जो सीधे और असंगत रूप में बच्चों को प्रभावित करती है। 2015 के बाद के विकास का एजेन्डा, एक ऐसी दुनिया जो सभी बच्चों के लिए सही हो, बनाने का अभूतपूर्व अवसर दे रहा है।

टिकाऊ विकास और बच्चों के बीच का संबंध सहजीवी है। लगातार प्रगति और विकास बच्चों के रहन-सहन और अधिकार को जोड़ते हैं और इसके विपरीत, बच्चों के अधिकार और रहन-सहन, लंबे समय तक उचित विकास की प्रगति को जोड़ते हैं। आने वाली पीढ़ी और आज की दुनिया के लोगों के लिए विकास के बीच में सामंजस्य तीन मुख्य बातों पर निर्भर करता है–

(1) सुरक्षित, स्वस्थ और अच्छी तरह से शिक्षित बच्चों से टिकाऊ विकास प्रारंभ होता है।

(2) संवेदी समूह जैसे–बच्चे, महिलाएँ तथा बुजुर्गों के लिए सुरक्षित और टिकाऊ समाज की आवश्यकता है।

(3) जैसा टिकाऊ भविष्य हम चाहते हैं, उसमें बच्चों की आवाजें, इच्छाएँ और भागीदारी जरूरी है।

2.2 उपविषय के बिन्दु–

इस उपविषय का मुख्य उद्देश्य, स्वास्थ्य, स्वच्छता और सफाई व्यवस्था का मनुष्य ही नहीं वरन् पूरे पारिस्थितिक तंत्र पर पड़ने वाले प्रभावों को खोजना, दस्तावेजीकरण और समझना है। विज्ञान, तकनीक और नवाचारी पहुँच और विचार से टिकाऊ विकास पर पड़ने वाले असर को देखना है। इसके संक्षिप्त उद्देश्य निम्नलिखित हो सकते हैं–

(1) पहले से चले आ रहे साफ-सफाई एवं स्वच्छता की स्थिति को पहचानना, जो रहनेवालों के स्वास्थ्य और तंदुरुस्ती को प्रभावित कर रहे हैं। इसका आर्थिक विकास पर मुख्य असर हो सकता है, क्योंकि कम सफाई-व्यवस्था एक व्यक्ति को प्रभावित करती है। इसका असर घरेलू कार्य, पारिस्थितिक तंत्र समुदायों तथा अंत में पूरी तरह से देश को प्रभावित करता है।

(2) बच्चों तथा किशोरों में मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं को देखना, जिनमें मानसिक अवसाद, चिंता, खाने और सोने में गड़बड़ी इत्यादि शामिल हैं। इनके अनेक कारण हो सकते हैं जैसे शारीरिक कार्यकलापों में कमी, काल्पनिक दुनिया में अत्यधिक समय बिताना, जो बच्चों में सामाजिक एवं मानसिक विकास को देर से विकसित होने का खतरा पैदा करता है।

(3) शहरी / अर्द्ध शहरी और ग्रामीण लोगों मुख्यत: बच्चों, महिलाओं और बुजुर्गों के स्वास्थ्य की स्थिति को सुधारना। ऐसा सुरक्षित पीने का पानी, सफाई-व्यवस्था और घरेलू जगहों, कार्य स्थलों तथा घर के बाहर पहले से ही हस्तक्षेप करके कर सकते हैं।

2.3 तार्किक कार्यरूप

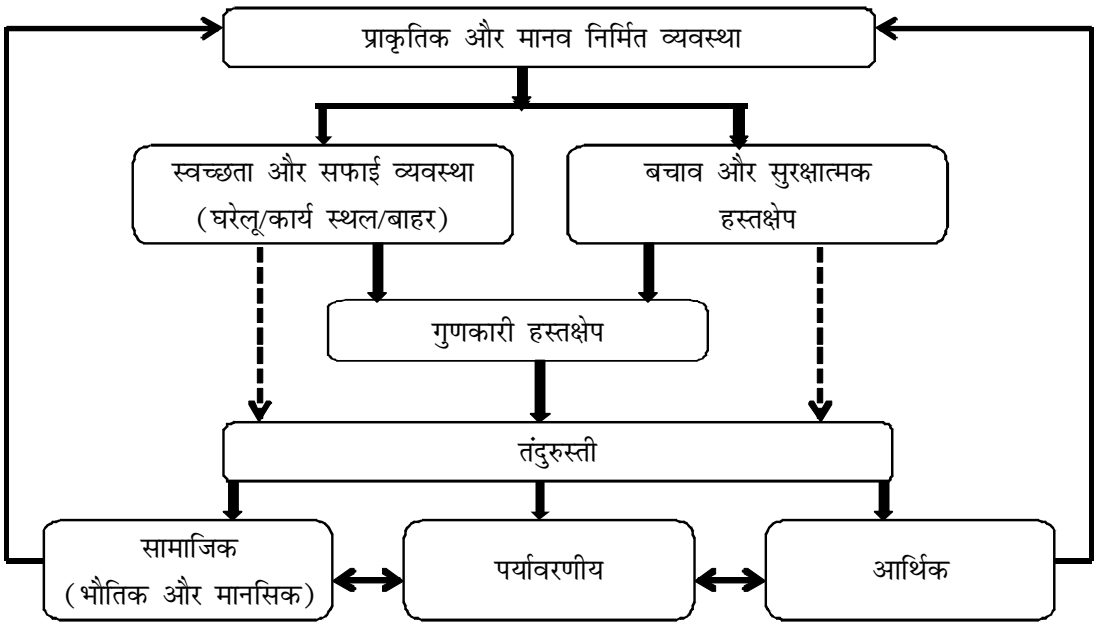

(स्वास्थ्य, स्वच्छता और सफाई व्यवस्था का टिकाऊ विकास के साथ संबंध का अनुक्रम चार्ट)

2.4 विस्तार क्षेत्र

स्वास्थ्य और पोषण की सहक्रिया (आपसी संबंध) के बारे में अच्छा दस्तावेजीकरण उपलब्ध (World Bank 2013) है। अच्छा स्वास्थ्य अच्छे पोषण के बिना संभव नहीं है। बीमारियों के वैश्विक बोझ का एक मुख्य कारण कुपोषण ही रहता है। बच्चों की मृत्युदर 45% रहने का मुख्य कारण पोषण की कमी है। (Black et at 2013)।

सफाई व्यवस्था वाले क्षेत्र में जनमानस के लिए उपयुक्त सफाई व्यवस्था की कमी, खराब सफाई व्यवस्था से होने वाले बुरे प्रभाव, पानी की कमी और प्रदूषण, खाद्य असुरक्षा और अव्यवस्थित रूप से बढ़ता शहरीकरण आदि मुख्य चुनौतियाँ हैं। विश्व की जनसंख्या के लगभग 40% लोगों के लिए सफाई व्यवस्था उपलब्ध नहीं है। सफाई व्यवस्था में कमी के कारण प्रतिदिन लगभग 6000 बच्चे डायरिया से मरते हैं। पूरी दुनिया में लगभग 1 अरब लोग आँत कृमि से प्रभावित हैं, जिनमें मुख्यत: बच्चे हैं। इसके कारण उनमें पोषण की कमी होती है और कम विकास होता है। इन दोनों तरह की बीमारियाँ अधिकतर अस्वास्थकर अवस्था के कारण फैलती हैं। पूरे विश्व में जल-प्रदूषण का मुख्य कारक मल जल प्रवाह है। प्रदूषित पानी के कुछ ही भाग को हम साफ कर पानी के खुले स्रोत में डालते हैं। नाला, सेप्टिक टैंक, सोकपिट, शौचालय और चहबच्चा से भी प्रदूषित पदार्थ रिस कर भूगर्भ जल को गन्दा करते हैं। साल 2030 तक विश्व की आबादी के आधे से अधिक लोग पानी की कमी का सामना करेंगे।

जल, सफाई व्यवस्था और स्वच्छता को जोड़कर WASH की संकल्पना की गई है, क्योंकि हर विशिष्ट क्षेत्र में कमी दृढ़ता से अतिच्छादित (overlap) होते हैं। इन खामियों को एक साथ दूर करने से, लोगों के स्वास्थ्य पर धनात्मक असर डाल सकता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के मिलेनियम विकास लक्ष्यों में WASH की सेवाओं को बेहतर बनाना जुड़ा हुआ है (लक्ष्य-7C)। 2015 तक आधी आबादी जिन्हें सुरक्षित पेय जल तथा आधारभूत स्वच्छता उपलब्ध नहीं है उन तक पहुँच बनाना। इसे टिकाऊ विकास के लक्ष्यों से बदल दिया गया है–जिसमें लक्ष्य-6 कहता है कि "सभी के लिए जल एवं स्वच्छता को टिकाउ प्रबंधन के द्वारा उपलब्ध कराना।"

WASH की पहुँच के संदर्भ में, सुरक्षित पानी, अधिक सफाई-व्यवस्था तथा सही स्वच्छता शिक्षा, बीमारी तथा मृत्यु को कम कर सकता है तथा गरीबी उन्मूलन और सामाजिक आर्थिक विकास को भी प्रभावित करता है। सफाई-व्यवस्था की कमी से हर साल लगभग 700,000 बच्चों की मृत्यु डायरिया से होती है। चिरकालिक (Chronic) डायरिया का बाल विकास (भौतिक तथा संज्ञानात्मक दोनों) पर ऋणात्मक असर हो सकता है। इसके साथ ही, WASH सुविधाओं की कमी बच्चों को स्कूल जाने से रोक सकती है, महिलाओं पर बोझ बन सकती है तथा उनकी उत्पादकता कम कर सकती है।

SDG 6 के घटक : सभी के लिए जल और सफाई व्यवस्था के टिकाऊ प्रबंधन की उपलब्धता को सुनिश्चित करना

यद्यपि, बीते दशकों में सफाई-व्यवस्था तक हमारी पहुँच सुधर रही है, विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) अनुमान लगाता है कि "अभी भी 2.5 अरब लोग–विश्व की जनसंख्या के एक तिहाई से भी अधिक, सामान्य सफाई-व्यवस्था सुविधाओं के बिना रहते हैं। वर्ष 2015 में 750 मिलियन लोग सुरक्षित तथा साफ पेय जल से वंचित थे तथा लगभग 2,300 लोगों की मृत्यु प्रतिदिन डायरिया से होती थी।"

आज जिस सफाई व्यवस्था को बढ़ावा दिया जा रहा है, वह या तो मानव मल को गहरे गड्ढे में डालने अथवा उन्हें बहाकर, तनु बनाकर नदियों, झीलों तथा समुद्रों में डाल देने पर आधारित है। जहाँ पर पारिस्थितिक सफाई व्यवस्था तीन मुख्य सिद्धांतों पर आधारित है जो–प्रदूषण उत्पन्न करने के बाद रोकने के प्रयास की अपेक्षा प्रदूषण होने से रोकना, मलमूत्र की सफाई करना तथा कृषि कार्य के लिए सुरक्षित उत्पादों का उपयोग करना है। (साफ-सुथरा तथा पुनर्चक्रण)

बदलती हुई वर्तमान परिस्थिति में टिकाऊ विकास का उद्देश्य और एजेंडा 2030 को बढ़ावा देते हुए, अनेक कम तथा मध्यम आय वाले देशों को आने वाले दशकों में सफाई-व्यवस्था के क्षेत्र में भारी निवेश करने की जरूरत है। आज उनके द्वारा लिए गए निर्णय तथा उनकी सोच का परिणाम, संधारणीयता तथा उनके देश के नागरिकों की तंदुरुस्ती पर दूरगामी होगा।

सफाई-व्यवस्था टिकाऊ विकास की पहेली का एक अंतर्निहित भाग है। सही सफाई व्यवस्था, खुले में शौच तथा कूड़े-कचड़े के खराब प्रबंधन से उत्पन्न खतरे को ही नहीं कम कर सकती है, बल्कि अनेक अर्थों में यह स्वास्थ्य से लेकर खाद्य सुरक्षा के क्षेत्र में अत्यधिक लाभदायी है। यह प्रतिरोध क्षमतापूर्ण आजीविका, व्यापार में बढ़ोत्तरी, ऊर्जा और पारिस्थितिक सेवाओं को भी लाभ पहुँचाती है।

स्वच्छता–मुख्यत: साबुन से हाथ धोना मनुष्य के स्वास्थ्य और विकास के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण हस्तक्षेपों में से एक है तथा सार्वभौमिक आवश्यकता है। अल्पपोषण से लड़ते हुए, बाल मृत्यु दर कम करते हुए, एंटिबायोटिक प्रतिरोधकता पर काबू पाते हुए, शिक्षा का प्रसार करते हुए, स्वच्छता अनेक दूसरे तरह के SDGS को मजबूत बनाता है और अन्तत: लैंगिक समानता, गौरव और मानव अधिकारों को बढ़ावा देता है।

सुरक्षित स्वच्छता की क्रियाओं को बढ़ाना और समझाना–जैसे साबुन से हाथ धोना, खाद्य स्वच्छता, मासिक स्राव स्वच्छता प्रबंधन, शौच (मल) का सुरक्षित प्रबंधन तथा ठोस अपशिष्ट प्रबंधन-घरेलू स्तर पर, सामुदायिक स्तर पर तथा संस्थानिक स्तर पर इन सभी को शिक्षा, स्वास्थ्य, सामुदायिक विकास और व्यापरिक विकास के क्षेत्रों के साथ सहयोग करके आगे ले जाता है। इन कार्यक्रमों की सफलता तभी संभव है जब विद्यालय और स्वास्थ्य सुविधाएँ इन सुरक्षित स्वच्छता की आदतों को सुनिश्चित करें तथा स्वास्थ्य

कार्यकर्त्ताओं और शिक्षाविदों को उपयुक्त व्यावहारिक बदलावों के बारे में प्रशिक्षण दें। wash के लिए शैक्षणिक और संवादी (Communicational) साधनों को विकसित करना, स्कूली स्वास्थ्य क्लब कार्यक्रमों को सुदृढ़ करना भी विद्यालय में स्वच्छता कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने में सहायक होता है।

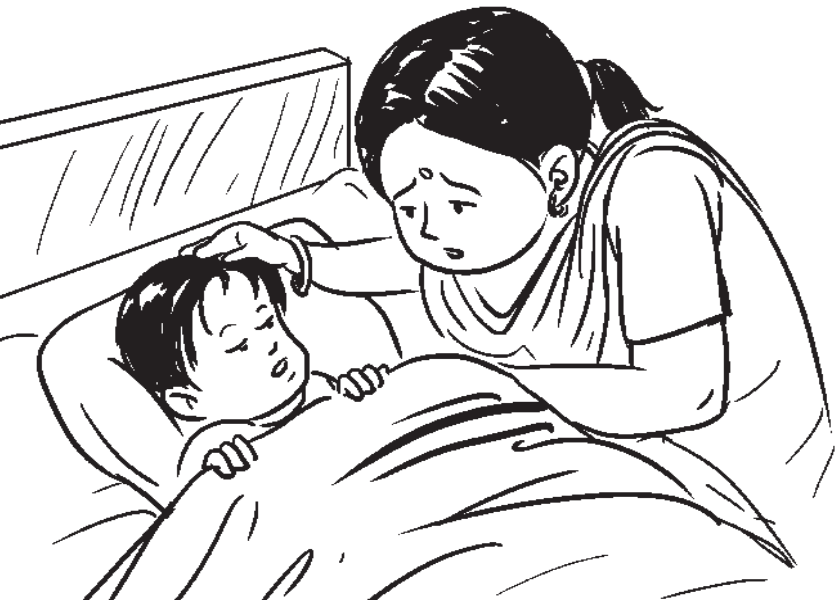

जनसंख्या के स्वास्थ्य तथा स्वास्थ्य में समानता पर सभी क्षेत्रों में बनाई गई नीतियों का भी गहन असर हो सकता है। लोगों के स्वास्थ्य की जिम्मेदारी अकेले स्वास्थ्य क्षेत्रों पर नहीं है। इस पर आवागमन, कृषि, निवासन, व्यापार और विदेश नीति का भी असर पड़ता है। स्वास्थ्य के बहु-क्षेत्रीय कारकों को निधारित करने के लिए स्वास्थ्य से जुड़ी पूरी सरकार को शामिल करने की राजनीतिक इच्छाशक्ति की आवश्यकता है। स्वास्थ्य क्षेत्रों को "सबके लिए स्वास्थ्य" जैसी नीति को बढ़ावा देना चाहिए, जो सिलसिलेवार तरीके से लिए गए निर्णयों का अनुपालन और सहयोग करे। इससे जनसंख्या स्वास्थ्य और स्वास्थ्य में समानता पर पड़ने वाले खतरनाक असर को कम किया जा सकता है।

संक्षेप में –

- आज 1 अरब से अधिक लोग दीर्घकालिक अल्पपोषित हैं तथा खाद्य असुरक्षा से ग्रसित हैं।
- अल्पपोषण हमारी प्रतिरोधक क्षमता से एक समझौता है, जिसके कारण रूग्णता और व्याधि की घटनाएँ बढ़ रही हैं। परिणामतः यह कम उत्पादकता और जीवनकाल को प्रभावित करता है।
- खराब पोषण आर्थिक विकास को कमजोर करता है। यूनीसेफ की रिपोर्ट के अनुसार 5 वर्ष से कम आयु के अरबों बच्चे दीर्घकालिक अल्पपोषित हैं। बच्चों में दीर्घकालिक अल्पपोषण शारीरिक और संज्ञानात्मक विकास के साथ एक समझौता करने का दुःश्चक्र है। यह उनके बड़े होने पर आर्थिक उत्पादकता को कम करता है। इसके कारण वो गरीबी के दलदल में फँसे रहते हैं, जिससे अगली पीढ़ी भी अल्पपोषण तथा खराब स्वास्थ्य से प्रभावित होती है।
- स्वच्छता, साफ-सफाई और जल आपूर्त्ति की कमी से अत्यधिक बीमारियों के बोझ का संबंध है तथा यह पूरी तरह से प्रमाणित किफायती हस्तक्षेप से रोका जा सकता है।
- इन हस्तक्षेपों का कुल लाभ अकेले स्वास्थ्य लाभ से अधिक है और हस्तक्षेप में किए गए खर्च से अधिक मूल्यवान है।
- स्वच्छता, सफाई-व्यवस्था और जल आपूर्त्ति विकास की प्राथमिकताएँ हैं, इसके बावजूद, पेय जल और सफाई व्यवस्था पर अंतर्राष्ट्रीय नीति का लक्ष्य अपर्याप्त है।
- विकसित देशों में, स्वच्छता, सफाई-व्यवस्था तथा जल आपूर्ति स्वास्थ्य के निहितार्थ आवश्यकताएँ बनी हुई हैं।
- स्वच्छता, सफाई-व्यवस्था और जल आपूर्ति में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं की सक्रिय भागीदारी स्वास्थ्य में त्वरणशील और समेकित विकास के लिए जरूरी है।

2.5 परियोजना सुझाव

परियोजना संख्या–1

पुनर्उपयोग के लिए जैव निस्पंदन (Bio Remediation) प्रक्रिया से जल की गुणवत्ता बढ़ाना :

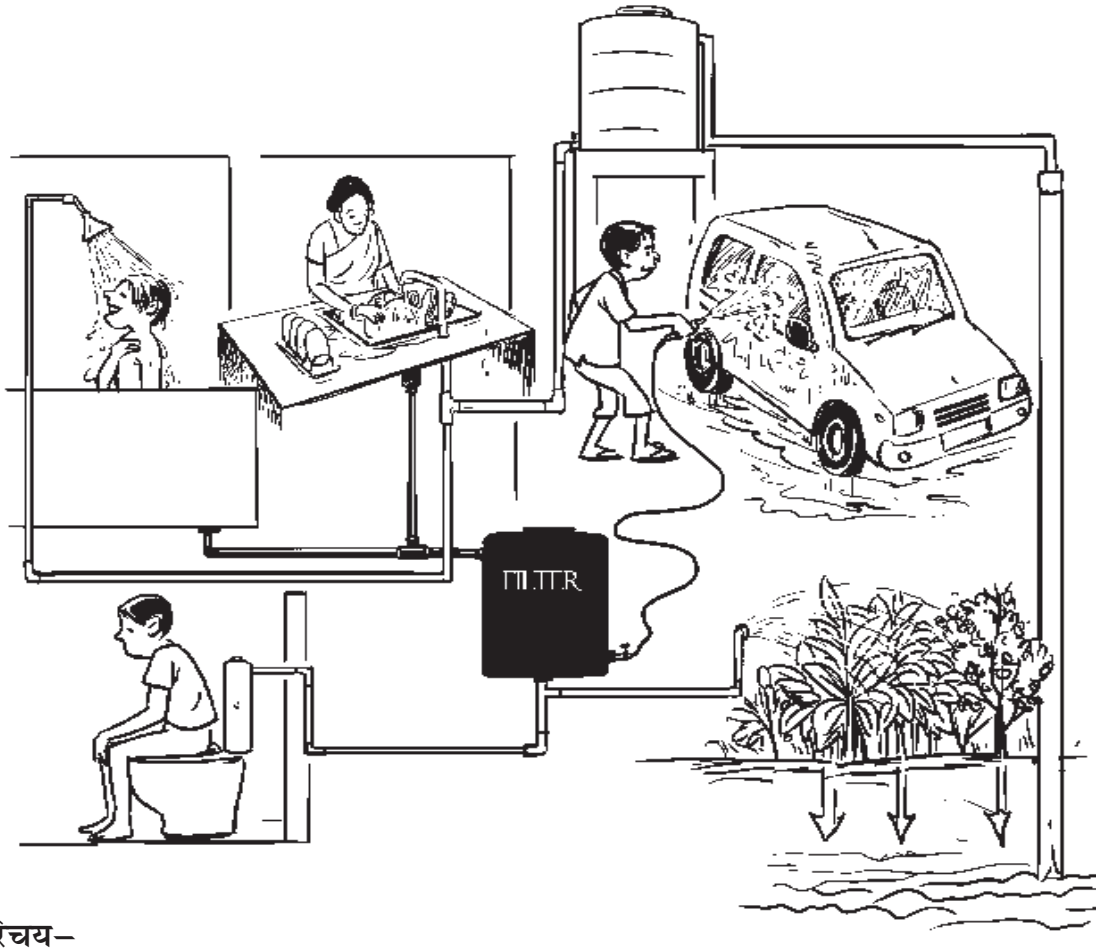

परिचय–

पीने के गुण वाले पानी का लगभग 30% उपयोग प्रतिदिन शौचालय में पानी डालने में होता है। घरेलू कार्य (रसोई, स्नानागार तथा कपड़े धोने) से निकले हुए धूसर पानी को अगर साफ करें तो इसे शौचालय में डालने तथा बागवानी में उपयोग में लाया जा सकता है। इसे रीड–बेड (Reed-bed) (एक नाली जो पत्थर के छोटे टुकड़ों से भरी रहती है तथा जिनपर जलीय पौधे उगते हैं) से साफ कर सकते हैं। इससे जल के पुनर्उपयोग के लिए उसकी गुणवत्ता बढ़ेगी।

उद्देश्य–

1) विभिन्न घरेलू उपयोग के लिए पानी के गुण और मात्रा के बारे में पता लगाना।

2) बढ़ते हुए सूक्ष्मजीवों तथा पादप समुदाय से होकर गुजरते हुए जल की गुणवत्ता पर उनका असर।

3) निकलते हुए पानी की गुणवत्ता पर जल के रहने के समय का असर।

कार्य प्रणाली–

1) धूसर पानी के नमूनों (रसोई, स्नानागार तथा धुलाई) को एकत्रित करें तथा इसके गुणों की जाँच करें (भौतिक और सूक्ष्मजैविक)।

2) प्लास्टिक के ड्रम में साफ पत्थर भर कर तथा आर्द्र भूमि में उगने वाले पौधों को लगाकर रीड बेड बनाएँ। (तालाब के डूबे हुए किनारे पर उगने वाले पौधे)।

3) इसमें धूसर पानी को नीचे से प्रवाहित करें जिससे वो ऊपर की तरफ निकल सके।

4) अंदर भेजे जाने वाले पानी तथा बाहर निकलने वाले पानी की गुणवत्ता के अंतर को देखें।

5) रीड बेड में धूसर पानी के रहने वाले समय को बढ़ाएँ और बाहर निकलने वाले जल की गुणवत्ता पर इसका असर देखें।

6) घरेलू रीड बेड के लिए महत्तम आकार की आवश्यकता निर्धारित करें।

संभावी परिणाम–

1) उन तरीकों को समझना जिस तरह से आर्द्र भूमि पानी को शुद्ध करती है।

2) पारिवारिक आवश्यकता को देखते हुए रीड बेड के डिजाइन तथा आकार के बारे में समझना।

3) घरेलू स्तर पर जल के पुनर्उपयोग तथा संरक्षण के लिए साधारण तथा किफायती तरीकों को बढ़ावा देना।

परियोजना संख्या-2

तालाब में पादप और जन्तु विविधता का पानी की गुणवत्ता के सूचक के रूप में अध्ययन :

परिचय–

जलीय जीव जन्तु पानी की गुणवत्ता के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। जैसे-जैसे पानी की गुणवत्ता कम होती जाती है, पादप और जन्तु समुदाय भी बदल जाते हैं। तालाबों में पादपवर्ग एवं जन्तुवर्ग का अध्ययन हमें प्रदूषण के प्रति इन जीवजन्तुओं की सहनशीलता को समझने में मदद करेगा।

उद्देश्य–

1) पानी की गुणवत्ता का जलीय जीव जन्तुओं पर पड़ने वाले प्रभाव को समझना।

2) जलीय पादपवर्ग तथा जन्तुवर्ग की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति का प्रदूषण के स्तर से संबंध स्थापित करना।

कार्य विधि–

1) अपने इलाके में विभिन्न प्रदूषण स्तर वाले तालाबों को खोजें।

2) उनमें उपस्थित बड़े पादपवर्ग एवं जन्तुवर्ग का अध्ययन करें तथा पहचानें।

3) तालाबों से जल के नमूनों को एकत्रित करें तथा उनकी गुणवत्ता की जाँच करें। (भौतिक, रसायनिक, जैविक–जीवाणुतत्व के साथ)

4) जलीय जीवजन्तु की उपस्थिति के साथ पानी की गुणवत्ता के संबंध को देखें।

संभावित परिणाम–

1) पानी की बदलती गुणवत्ता के साथ, जलीय जीवजन्तु की संवेदना को प्रश्रय देना।

2) जलीय पारितंत्र पर प्रदूषण के स्तर के प्रभाव को समझना।

3) जल की गुणवत्ता समझने के लिए जलीय जीवजन्तु की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति के उपयोग को समझना।

परियोजना संख्या- 3

व्यक्तिगत स्वच्छता–कक्षा में पढ़ाई नहीं छूटने के लिए :

उद्देश्य–

दैनिक जीवन में व्यक्तिगत स्वच्छता तथा स्वास्थ्य के बीच संबंध स्थापित करना–विशेष रूप से छात्रों के लिए।

कार्यविधि–

1) व्यक्तिगत स्वच्छता से संबंधित एक प्रश्नावली का प्रारूप बनाएँ तथा विकसित करें (हाथ धोना, नहाना, साबुन का उपयेाग, स्वच्छता-बाल, नाखून, अपने को साफ रखने की आदत इत्यादि।

2) निश्चित समय तक अनुपस्थित बच्चों की सीमा को रिकार्ड करें (एक महीना भी हो सकता है।)

3) इनकी अनुपस्थिति के कारणों को खोजें तथा बीमारी के कारण अनुपस्थिति की संख्या को देखना।

4) व्यक्तिगत स्वच्छता के पैमानों के साथ बीमारी के प्रकार का परस्पर संबंध देखना (बच्चों के लिए एक सामान्य कारण)।

5) अनुपस्थित छात्रों द्वारा कक्षाओं की संख्या तथा विभिन्न विषयों में छूटे हुए अध्यायों को रिकार्ड करें।

6) पूरे अध्ययन सत्र में उपस्थित छात्रों द्वारा अपनाई गई व्यक्तिगत स्वच्छता के स्तर को रिकार्ड करें।

7) व्यक्तिगत स्वच्छता के लिए उठाए जाने वाले कदम और इन्हें किस तरह से अपनाएँ, इसके लिए जागरूकता विकसित करें।

संभावित परिणाम–

छूटी गई पढ़ाई के साथ व्यक्तिगत स्वच्छता की भूमिका को स्थापित करना, जो दैनिक जीवन में व्यक्तिगत स्वच्छता के महत्त्व को बताए।

परियोजना संख्या-4

पीने के पानी की गुणवत्ता को बढ़ाना :

उद्देश्य–

विद्यालय / समुदाय में पीने के पानी की गुणवत्ता को जाँचना तथा इसे उपयोग में लाने के लायक सुविधाजनक तरीकों / प्रक्रिया से बनाना (अगर पीने योग्य नहीं है)।

कार्यविधि-

1) एक साफ और सूखी बोतल में 100 ml पानी के नमूने को एकत्र करें (किसी भी प्रकार के रसायनिक पदार्थ से मुक्त।

2) उसके भौतिक (रंग, गंध, गंदलापन), रसायनिक (pH, धातु इत्यादि) तथा सूक्ष्मजैविक (शैवाल, जीवाणु इत्यादि) गुणों की जाँच स्कूल / कॉलेज / रिसर्च इंस्टीच्यूट में करें।

3) पानी का नमूना की गई जाँच के आधार पर, पीने लायक है या नहीं इसे समझें।

4) अगर यह पीने लायक नहीं हो, तो उचित विधि / प्रक्रिया जैसे जैव-निस्पंदन (विशिष्ट प्रकार के पौध या उसी तरह के समान गुणों वाले पौधे से निस्पंदन) का उपयोग करें।

5) प्रक्रिया के बाद, गुणों की पुनः जाँच करें।

संभावित परिणाम–

जैव निस्पंदन की क्षमता को स्थापित करना।

परियोजना संख्या-5

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया से बढ़ते संलिप्तता के कारण बच्चों में संज्ञानात्मक विकास का अध्ययन करना :

उद्देश्य–

1) बच्चों के बीच में बदलती जीवनशैली की समझ विकसित करना।

2) बच्चों की पूरी मनोवैज्ञानिक समस्या को खोजना तथा समझना।

3) दैनिक गतिविधियों में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के संलिप्तता के असर का शहरी और ग्रामीण इलाके के बच्चों के बीच में तुलनात्मक अध्ययन।

4) क्या अधिक इंटरनेट/सेलफोन का उपयोग करने वाले बच्चों के व्यवहार में परिवर्तन जैसे माता-पिता से विरोध, दोस्त बनाने में कठिनाई अन्य सामाजिक बदलाव से कोई संबंध है।

पृष्ठभूमि–

बदलती जीवनशैली (शारीरिक गतिविधियों की कमी, डिजिटल यंत्रों का अत्यधिक अनियंत्रित उपयोग, ऑनलाइन सोशल मीडिया, घटता सामाजिक सम्पर्क, प्रतिस्पर्धा, विविध पृष्ठभूमि और अनेक कारण जो बच्चों के बीच तनाव, चिंता और विश्रृंखलता बढ़ा रहे हैं।

कार्यविधि-

1) ग्रामीण इलाके तथा शहरी इलाके में रहने वाले बच्चों का आधारभूत सर्वेक्षण।

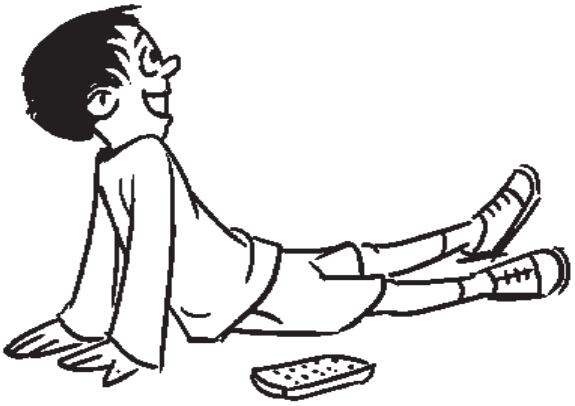

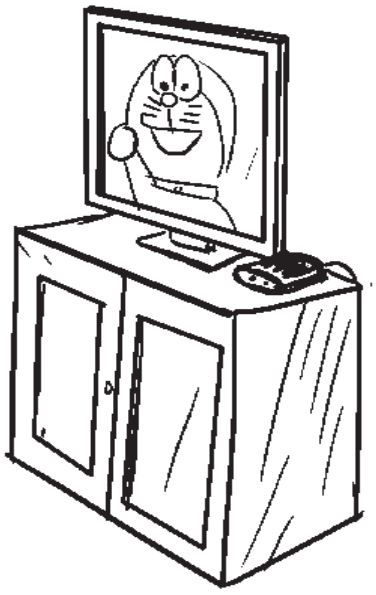

2) सर्वेक्षण, बच्चों के डिजिटल यंत्रों तथा ऑनलाइन सोशल मीडिया ऐप्स जैसे (फेसबुक, ट्वीटर, इंस्टाग्राम, वाट्सऐप) के साथ, संलिप्तता को समझने के लिए, एक प्रपत्र जैसा हो तथा जिससे उनकी प्रतिक्रया, गतिविधि और व्यवहारिक तरीकों को समझने में सहायता मिले।

3) प्रमुख जानकारियों के लिए साक्षात्कार / प्रश्नावली–बच्चे, अभिभावक तथा शिक्षक, ग्रामीण तथा शहरी दोनों समुदायों के।

संभावित परिणाम–

1) ग्रामीण और शहरी जीवनशैली में बदलाव, डिजिटल मीडिया और उसके असर के संबंध में।

2) इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के वर्तमान झुकाव का जनसांख्यिकीय (डेमोग्राफिक) स्थिति के लिए आकलन।

3) वैसे बच्चे जो इंटरनेट और सेलफोन का अत्यधिक उपयोग कर रहे हैं, उनके विचलित सामाजिक व्यवहार को रिपोर्ट करना।

नमूने का अध्ययन-1

हमारे देश की ही तरह, विकसित देशों और विकासशील देशों के अनेक उच्चवर्गीय परिवारों के लिए उम्र का बढ़ना एक सामाजिक विषय बन गया है। अकेले रहने वाले वृद्ध और बुजुर्ग अपने दैनिक जीवन में अनेक प्रकार की बीमारियों का सामना करते हैं। अकेले रहने वाले बुजुर्गों की सहायता के लिए लोग स्वयं अथवा सामाजिक कल्याणकारी संस्थाएँ, देखभाल करने वालों को रखते हैं, हाँलाकि अक्सर इन अनुभवी देखभाल करने वालों की कमी रहती है। उसका कारण बुजुर्गों की जनसंख्या में तेजी से वृद्धि तथा कम बजट होता है। प्रतिदिन बुजुर्गों को सहायता करने के लिए तथा इस समस्या को सुलझाने के लिए तुम एक सस्ती तकनीक पर आधारित समाधान निकालना चाहोगे।

नमूने का अध्ययन-2

स्वच्छता के व्यवहार में टिकाऊ परिवर्तनों के कारण क्या हैं ?

केरल (भारत) से एक अनुभागीय अध्ययन (Cairncrosset al., 2005)–

स्वच्छता को बढ़ावा देने के क्रियान्व्यन से जड़ी एक गैर सरकारी संस्था (NGO) ने इस कार्य की योजना बनाई तथा फील्ड वर्क के आधार पर अध्ययन किया। केरल में, स्वच्छता को बढ़ावा देने में आए बहुमुँखी हस्तक्षेप के निष्कर्ष के आधार पर, बदलते हुए स्वच्छता के व्यवहार पर टिकाऊपन का अध्ययन नौ वर्षों तक किया गया। इसके लिए अनेक तरीके जैसे-ज्ञान को परखने के लिए प्रश्नावली, मौके का अवलोकन, निवेदन के आधार पर कला का प्रदर्शन तथा घरेलू गुप्त मतदान अपनाए गए तथा तुलनात्मक अध्ययन से स्वच्छता के परिणाम को मापा गया। गुप्त मतदान से अच्छी आदतों के न्यूनतम प्रचलन के बारे में पता चला, जिसे हम सबसे महत्वपूर्ण हल (समाधान) मानते हैं। हस्तक्षेप वाले क्षेत्र में आधे से अधिक वयस्कों में हाथ धोने की अच्छी आदतों का पता चला, पर नियंत्रण वाले क्षेत्र में यह 10% से भी कम थी (<10%) हस्तक्षेप के समय से हाथ धोने के प्रचलन का गुजरे हुए समय के साथ कोई संबंध नहीं होना यह दर्शाता है कि व्यावहारिक परिवर्तन हुआ है और यह बना रहा है। स्वास्थ्य शिक्षा कक्षा में भागीदारी की याद अच्छी स्वच्छता से जुड़ी है-जैसा महिलाओं में हाथ धोने से आदत तथा अन्य परिणाम। यह बताता है कि विभिन्न वर्ग हस्तक्षेप का एक असरकारी घटक थे। घरेलू भ्रमण तथा जागरूकता अभियान का व्यवहार पर विशेष असर, के प्रमाण कम हैं, यद्यपि घरेलू भ्रमण में प्रभावशाली ज्ञान दिया गया था। व्यक्तिगत स्तर पर नहीं, बल्कि पारिस्थितिक तंत्र के स्तर पर, पुरुषों के हाथ धोने की आदत तथा हस्तक्षेप के बीच के संबंध को खोजना, यह बताता है कि पुरुषों पर हस्तक्षेप का असर अप्रत्यक्ष रहा होगा जैसे महिलाएँ अथवा पड़ोसी। स्वच्छता की आदत (व्यवहार) सालों तक रही, ऐसी खोज यह बताती है कि स्वच्छता को बढ़ावा देना, पहले की अपेक्षा अधिक फायदेमंद स्वास्थकर हस्तक्षेप है।

समस्या : सहज रूप से गिरने की निगरानी–

बहुत सारे वृद्ध जन घरों में अप्रत्याशित रूप से गिर जाते हैं। ऐसा माँसपेशियों तथा तंत्रिका के कमजोर होने से होता है। आंतरिक स्वास्थ्य के कारण जैसे–हृदयाघात के कारण भी यह समस्या हो सकती है। गिरना बुजुर्गों के लिए सबसे बड़ा खतरा है, खासकर वैसे लोगों के लिए जो अकेले रहते हैं क्योंकि उन्हें परिवार से तुरंत मदद नहीं मिल सकती है। तुम एक अचूक और मजबूत संवेद नियंत्रित प्रणाली बनाना चाहोगे जो, अगर कोई वृद्ध गिरे तो उनकी निगरानी करे। गिरने का पता चलने पर तुम्हारी प्रणाली अपने आप एंबुलेंस को बुला लेगी तथा पास के अस्पताल को खबर करेगी।

तुम्हारे सामने अपनी प्रणली को डिजाइन करने के लिए चार लक्ष्य हैं (i) दीर्घ क्षेत्रीय (पूरे अपार्टमेंट का क्षेत्र) (ii) कम लागत (संवेदी यंत्रों की कीमत 15000 रुपये से कम होनी चाहिए) (iii) झूठी ऋणात्मकता की कम दर (आदर्शत: सारे गिरने की अवस्था को पहचानना, तुम्हारे पास कुछ ही स्थिति ध नात्मक हो सकती है) (iv) निष्क्रिय निगरानी (बुजुर्ग इन उपकरणों को पहनना या पकड़ना नहीं चाहते हैं।)

कार्यविधि :

इस प्रणाली का मुख्य बिन्दु है गिरने की घटना की निगरानी। इसके लिए आवश्यकताएँ हैं–

(i) भयावह 'गिरना' को देखना जहाँ बुजुर्ग गिरने के बाद 30 सेकेण्ड से अधिक तक बेहोश रहते हैं या उठकर नहीं चल सकते हैं।

(ii) एक बेडरूप वाले अपार्टमेंट (1 मुख्य दरवाजा, 1 रहने का कमरा, 1 रसोईघर तथा 1 स्नानागार) जहाँ एक बुजुर्ग अकेले रहते है। तुम्हें उस स्थिति को नहीं लेना है जहाँ बुजुर्ग गिरते हैं और 30 सेकेण्ड के अंदर उठते हैं या उन घरों में लोग आते-जाते हैं और सहायता कर सकते हैं।

अतिरिक्त परियोजना विचार :

1) पीने के पानी में धातु / भारी धातु की उपस्थिति तथा उसका प्रबंधन।
2) पानी की गुणवत्ता का निर्धारण।
3) पुनर्चक्रण के लिए जैव निस्पंदन / बायो रेमेडिएशन प्रक्रिया द्वारा जल उपलब्ध कराना।
4) व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामुदायिक स्तर पर स्वच्छता तथा सामुदायिक स्वास्थ्य पर इसका असर।
5) नियमित आधार पर स्वच्छता बनाए रखने का आकलन।
6) विभिन्न मौसम में स्वास्थकर स्थितियों का स्तर।
7) स्वच्छता की स्थिति की कमी से होने वाली बीमारियों का होना तथा इसका प्रबंधन।
8) अपशिष्ट प्रबंधन (उदाहरण-डायपर)।
9) बीमारियों (सूक्ष्मजैविक/परजीवी) तथा सामाजिक / आर्थिक / पर्यावरणीय मापदंडों पर उसका असर।
10) पशुजन्य (zoonotic) बीमारियों का असर और प्रबंधन।
11) जरूरी पोषक तत्वों की कमी / अल्पपोषकता से उत्पन्न होने वाली स्थिति का प्रभाव और प्रबंधन।
12) व्यवहारिक परिवर्तन के संदर्भ में स्वच्छ भारत अभियान के पहले तथा बाद की स्थिति की सफाई व्यवस्था की तुलना।
13) खाना बनाने में उपयोग में लाए उपकरणों का स्वास्थ्य पर प्रभाव।
14) घर के अंदर होने वाले वायु प्रदूषण का स्वास्थ्य पर असर।
15) प्रसव के पहले तथा प्रसवोत्तर मातृ स्वास्थ्य और स्वच्छता।
16) लिंग विशेष से जुड़ा स्वास्थ्य और स्वच्छता और इसका नियंत्रण / प्रबंधन।
17) मानवजनित अपशिष्टों का कृषि में सुरक्षित उपयोग।
18) सार्वजनिक परिवहन के उपयोग का सामुदायिक स्वास्थ्य पर असर।
19) व्यावसायिक स्वास्थ्य को बढ़ाना।
20) सेंसिग (sensing) तकनीक से सिटी (शहर) के स्वास्थ्य को बढ़ावा देना।
21) वृद्धजनों के सहज रूप से गिरने की निगरानी।

स्वच्छ भारत अभियान

सन् 2019 में महात्मा गाँधी की 150वीं जयंती पर भारत द्वारा दी गई सर्वोत्तम श्रद्धांजलि होगी 'एक स्वच्छ भारत'। यह कहना था श्री नरेन्द्र मोदी जी का जब उन्होंने नई दिल्ली, राजपथ पर "स्वच्छ भारत मिशन" की शुरुआत की थी। 2 अक्टूबर सन् 2014 में स्वच्छ भारत मिशन कार्यक्रम की शुरुआत पूरे देश में एक राष्ट्रीय आन्दोलन की तरह की गई थी। इस प्रचार का उद्देश्य 2 अक्टूबर सन् 2019 तक "स्वच्छ भारत" बनाना है।

स्वच्छ भारत अभियान, लोगों के सहयोग से एक 'जन आंदोलन' बन गया है। बड़ी संख्या में नागरिक भी आगे आए हैं और साफ और स्वच्छ भारत बनाने का संकल्प लिया है। स्वच्छ भारत अभियान की शुरुआत के बाद, हाथ में झाड़ू लेकर गलियों की सफाई, कूड़ों को साफ करना, सफाई-व्यवस्था पर ध्यान देना, और स्वास्थकर वातावरण को बनाए रखना एक आदत सी बन गई है। लोगों ने भाग लेना शुरू कर दिया है तथा इस संदेश "स्वच्छ रहना ईश्वरीयता के समीप है" को फैलाने में सहयोग भी कर रहे हैं।

सत्यमेव जयते

मिशन इन्द्रधनुष

निरोध्य (Preventable) बाल्यावस्था की बीमारियों के विरुद्ध प्रतिरोधकता, हर बच्चे का अधि कार है। हर बच्चे को यह अधिकार मिले, इस उद्देश्य से, भारत सरकार ने सार्वभौमिक प्रतिरोधकता कार्यक्रम (Universal Immunization Program UIP), 1985 में शुरु किया। यह दुनिया में इस तरह का सबसे बड़ा स्वास्थ्य कार्यक्रम है।

30 वर्षों से अधिक से कार्यरत होने के बावजूद, UIP सिर्फ 65% बच्चों को जीवन के पहले साल में पूरी तरह से प्रतिरोधित कर पाया है तथा विगत पाँच वर्षों में यह वृद्धि औसतन 1% प्रतिवर्ष पर ही रूक गई है।

इस कार्यक्रम को दृढ़ और मजबूत बनाने के लिए तथा द्रुत गति से सभी बच्चों के लिए पूरी प्रतिरोधकता देने के लिए भारत सरकार ने मिशन इंद्रधनुष की शुरुआत दिसम्बर 2014 में की। मिशन इंद्रधनुष, दो वर्ष की उम्र के भीतर के सभी बच्चों तथा गर्भवती महिलाओं को सारी उपलब्ध वैक्सीन से प्रतिरोधित करना सुनिश्चित कराएगा।

राष्ट्रीय कृमिनाशक दिवस

राष्ट्रीय कृमिनाशक दिवस, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय भारत सरकार की एक पहल है, जो देश के प्रत्येक बच्चे को कृमि से मुक्त करेगा। यह जन स्वास्थ्य कार्यक्रमों का एक सबसे बड़ा कार्यक्रम है, जो कम समय में ही अधिक बच्चों तक पहुँच रहा है। विश्वभर में 836 मिलियन से अधिक बच्चों पर परजीवी कृमि संक्रमण का खतरा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार, भारतवर्ष में 1 से 14 वर्ष की आयु के 241 मिलियन बच्चों में परजीवी आँत कृमि का खतरा है, जिसे मिट्टी संचारित कृमि (Soil-Transmitted Helminths, STH) के नाम से जाना जाता है।

STH के बारे में

वैसे हेलमिन्थ (कृमि) जिनका संचरण, मल संक्रमित मिट्टी से होता है, मिट्टी संचरित कृमि (आँत परजीवी कृमि) कहलाते हैं। गोल कृमि (Round Worm) (Ascarislumbricoids, Whip Worm (*Trichuristrichiura*) तथा हुक कृमि (*Necatoranericanhus and Ancylostomaduodenale*) लोगों को संक्रमित करते हैं।

STH संक्रमण

- वयस्क कृमि मनुष्य की आँत में भोजन तथा जीवित रहने के लिए रहता है तथा प्रतिदिन हजारों कीमें अंडे देता है।
- संक्रमित व्यक्ति के मल में यह अंडा आ जाता है।
- संक्रमित व्यक्ति खुले में शौच के दौरान इन कृमि के अंडों को मिट्टी में फैलाता है।
- ये अंडे मिट्टी को दूषित करते हैं तथा अनेक तरीकों से संक्रमण फैलाते हैं–
- वैसी सब्जियों के खाने से जो अच्छी तरह से धोई नहीं गई हों, छीली नहीं गई हों तथा पकाई नहीं गई हों।
- प्रदूषित पानी के स्रोत से।
- बच्चे जो मिट्टी में खेलते हैं तथा बिना हाथ धोए मुँह में हाथ डालते हैं।

STH संक्रमण से एनीमिया, कुपोषण, बौद्धिक और संज्ञानात्मक विकास में कमी तथा विद्यालय में उनकी सहभागिता कम हो जाती है।

STH संक्रमण को रोका जा सकता है–

- सेनेटरी शौचालय के उपयोग से, बाहर खुले में शौच नहीं करने से
- खाने से पहले तथा शौचालय से आने के बाद हाथ धोने से
- चप्पल तथा जूते पहनने से
- फल तथा सब्जियों को साफ एवं सुरक्षित पानी से अच्छी तरह धोकर पकाने से
- अच्छी तरह से पका हुआ भोजन खाकर

राष्ट्रीय कृमिनाशक दिवस के उद्देश्य–

राष्ट्रीय कृमिनाशक दिवस का उद्देश्य सभी छोटे बच्चों तथा स्कूल जाने वाले उम्र के बच्चों (दाखिला लिया हुआ अथवा नहीं) को कृमि से मुक्त करना है। इन बच्चों की उम्र 1 वर्ष से 19 वर्ष के बीच की हो। विद्यालय तथा आँगनबाड़ी केन्द्रों के सहयोग से, इस कार्यक्रम का उद्देश्य बच्चों के सम्पूर्ण स्वास्थ्य, पोषण की स्थिति, शिक्षा तक पहुँच तथा जीवन की गुणवत्ता को सुधारना है।

References

1) World Health Organization. (2006). *Constitution of the World Health Organization – Basic Documents*, Forty-fifth edition, Supplement, October 2006.
2) MA (Millennium Assessment), 2005. Millennium Ecosystem Assessment (Synthesis Report). Island Press, Washington, DC)#www.millenniumassessment.org*#.
3) Brown, V. (1994) Health and environment. In Chu, C. and Simpson, R. (eds) *Ecological Public Health*. Centre for Health Promotion, Toronto.
4) Kickbusch, I. (1989) Approaches to an ecological base for public health. *Health Promotion,* 4, 265, –268
5) Hancock, T. (1993) Health, human development and the community ecosystem: three ecological models, *Health Promotion International,* , 8, 41–47..
6) Pandve HT. Environmental sanitation: An ignored issue in India. Indian J Occup Environ Med.2008;12:40.
7) ACDI/VOCA (2015) Health and nutrition – Crucial investments for stability and economic growth
8) Action against hunger (2015) International Organizations Call for Hygiene in Sustainable Development Goals
9) Black R, Victora C, Walker S, Bhutta Z, Christian P, de Onis M, Ezzati M, Grantham-McGregor S, Katz J, Martorell R, Uauy R, and the Maternal and Child Nutrition Study Group (2013) Maternal and child undernutrition and overweight in low-income and middle-income countries. *Lancet* 382 (9890):427-51
10) Boschi-Pinto C, Velebit L, Shibuya K (2008) Estimating child mortality due to diarrhoea in developing countries. *Bull World Health Organ* 86: 710–717
11) Cairncross S, Kolsky PJ (1997) Letter: water, waste and well-being. *American J Epidemiol*146:359–360
12) Cairncross Sandy, Shordt Kathleen, Zacharia Suma, GovindanBeenaKumari (2005) What causes sustainable changes in hygiene behaviour? A cross-sectional study from Kerala, India *Sociall Science & Medicine* Volume 61, Issue 10, November 2005, Pages 2212–2220
13) Cairncross Sandy and Bartram Jamie (2010) Hygiene, Sanitation, and Water: Forgotten Foundations of Health. PLOSChant R (2008) The role of water, hygiene and sanitation in neonatal mortality [MSc dissertation]. London: London School of Hygiene & Tropical MedicineCurtis V,Cairncross S (2003) Effect of washing hands with soap on diarrhoea risk in the community: a systematic review. *Lancet* Inf Dis 3: 275–281
14) Curtis V, Danquah L, Aunger R (2009) Planned, motivated and habitual hygiene behaviour: an eleven country review. *Health Educ Res* 24: 655–673
15) deOnis, M, Dewey K, Borghi E, Onyango A, Blössner M, Daelmans B, Piwoz E and Branca F. (2013) The World Health Organization's global target for reducing childhood stunting by 2025 : rationale and proposed actions. *Maternal and Child Nutrition*, 9 (Suppl. 2): 6–26. DOI: 10.1111/mcn.12075
16) Emerson PM, Lindsay SW, Alexander N, Bah M, Dibba SM, et al. (2004) Role of flies and provision of latrines in trachoma control: cluster-randomised controlled trial. *Lancet* 363: 1093–1098
17) Esrey SA, Potash JB, Roberts L, Schiff C (1991) Effects of Improved Water Supply and Sanitation on Ascariasis, Diarrhoea, Dracunculiasis, Hookworm Infection, Schistosomiasis and Trachoma. *Bull World Health Organ* 69: 609–621
18) Euroconference "Hygiene and Health' (2001) The Correlation between sustainable development and home hygiene *American Journal of Infection Control* Volume 29, Issue 4, August 2001, Pages 211–217
19) Fung IC, Cairncross S (2009) Ascariasis and handwashing. *Trans R Soc Trop Med Hyg*103:215–222
20) Global Nutrition Report (2014) Draft report prepared by the Institute for Development Studies, Sussex University, for the Department for International Development, United Kingdom. Mimeo
21) http://sustainabledevelopment.un.org/focussdgs.html OWG (Open Working Group for Sustainable Development Goals) 2014. *Proposal for Sustainable Development Goals*(Outcome Document, Draft dated 19 July 2014)
22) Smith L and Haddad L. (2014) Reducing Child Undernutrition: Past Drivers and Priorities for the Post-MDG Era. *IDS Working Paper* 441.Brighton: U.K.
23) UNICEF (May, 2013) Sustainable development starts and ends with safe, healthy and well-educated children
24) UNICEF-WHO-The World Bank (2014) Joint Child Malnutrition Estimates: Levels &Trends in Child Malnutrition (updated September 2014). New York, NY.
25) United Nations System: Standing Committee on Nutrition (October 2014) Nutrition and the post 2015 SDGs A technical note
26) Victora CG, Olinto MT, Barros FC, Nobre LC (1996) Fallingdiarrhoea mortality in Northeastern Brazil: did ORT play a role? *Health Policy Plan* 11: 132–141
27) Water, Sanitation and Hygiene: Centre for Sustainable Development, Earth Institute / Columbia University
28) World Bank. 2013. Improving Nutrition ThroughMultisectoral Approaches. Washington, D.C.: World Bank
29) Yeager BA, Huttly SR, Bartolini R, Rojas M, Lanata CF (1999) Defecation practices of young children in a Peruvian shanty town. *Soc Sci Med* 49: 531–541

उपविषय–III

कचरे से समृद्धि

कचरे से समृद्धि

3.1 भूमिका :

सामाजिक विकास एवं मानव जीवन-यापन का प्राकृतिक अपशिष्ट कचरा के रूप में है। कचरे को हम प्राथमिक उपयोग के बाद बचा हुआ अपशिष्ट या काम न आने लायक पदार्थ के रूप में हम देखते हैं। पेड़ अपनी पत्तियाँ गिराते हैं, जानवर मल त्याग करते हैं। मानव समूह अपने दैनिक जीवन में विभिन्न प्रकार के असीमित कूड़े के ढेर पैदा करते हैं। किसी भी देश के विकास हेतु औद्योगीकरण एक जरूरी रास्ता है। मानव के जीवन-स्तर एवं आवासीय परिसर के विकास में औद्योगिक वस्तुओं की मांग बढ़ती जाती है। जब उत्पादन बढ़ेगा तो उपभोग भी बढ़ेगा। इससे अपशिष्ट का उत्पादन भी विभिन्न रूपों में बढ़ जाता है तथा इसके कारण गम्भीर पर्यावरण का प्रदूषण एवं निम्नीकरण होता है। दिव्यांग व्यक्तियों के लिए भी अपशिष्ट कचरे को यहाँ-वहाँ फैलाना एक गम्भीर भय पैदा करता है। अपशिष्ट को फेंकने के लिए या उसके प्रबंधन का समुचित उपाय नहीं रहे तो कूड़ा कचरा एक भयभीत करने वाले दैत्य के रूप में सामने खड़ा हो जाता है।

यह सिर्फ हमारे आवासीय परिसर का सौन्दर्य ही नष्ट नहीं करता बल्कि प्रदूषण के रूप में सभी जीवों के स्वास्थ्य एवं जीवन पर बड़े खतरे के रूप में प्रभाव डालता है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति एवं नागरिकों के स्वास्थ्य के लिए एक क्षमतावान कचरा निष्पादन का तरीका महत्वपूर्ण है। स्वच्छ भारत मिशन के अंतर्गत कचरे का प्रभावी प्रबंधन एक प्रमुख कार्य है। इसके अंतर्गत हरेक नागरिक खास कर युवा को इस समस्या से अवगत कराना तथा साफ-सुथरे देश के निर्माण में सहभागी बनाना है।

कचरा हमारी जीवन शैली से गहराई से जुड़ा है। वैसा हर क्षण जब हम छपे हुए कागज के खाली सतह का उपयोग करते हैं-कमरे से निकलते वक्त पंखे एवं रोशनी को बुझा देते हैं। जल का उपयोग सोच-समझ कर करते हैं, खाने की थाली में उतना ही भोजन लेते हैं, जितना खा सकते हैं, प्लास्टिक की थैली का उपयोग बंद कर देते हैं उस समय हम कचरा कम कर रहे होते हैं या संसाधन का उचित उपयोग कर रहे होते हैं। पुराने जमाने से सभी मानव समाज एवं संस्कृतियाँ कचड़े के प्रभावकारी प्रबंधन करती आ रही हैं तथा कभी-कभी उसका सही ढंग से उपयोग भी करती रही हैं। विभिन्न समुदाय उपयोग के बाद अपशिष्ट सामग्रियों से सुन्दर उपयोगी साजो-सामान बनाते हैं। खाने से बचे हुए भोज्य सामग्री से नये भोजन बना लेते हैं। अपशिष्ट कपड़ों को जोड़ कर विभिन्न संस्कृतियों में, दुलाई या बिछाने के लिए गुदड़ी बनाते हैं, अपशिष्ट की मात्रा कम करना, उनका फिर से उपयोग, कचरे का पुनर्उपयोग, कचरों से मूल्यवान सामग्री चुन लेना, समाज में कार्यकुशलता मानी जाती रही है। इन गतिविधियों से प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण एवं ऊर्जा संरक्षण तो होता ही है साथ ही सामाजिक-आर्थिक विकास के क्रम में पर्यावरण की कम हानि होती है। अत: कचरा प्रबंधन हमारे टिकाऊ विकास (Sustainable development) के विचार से गहरे रूप में जुड़ा है।

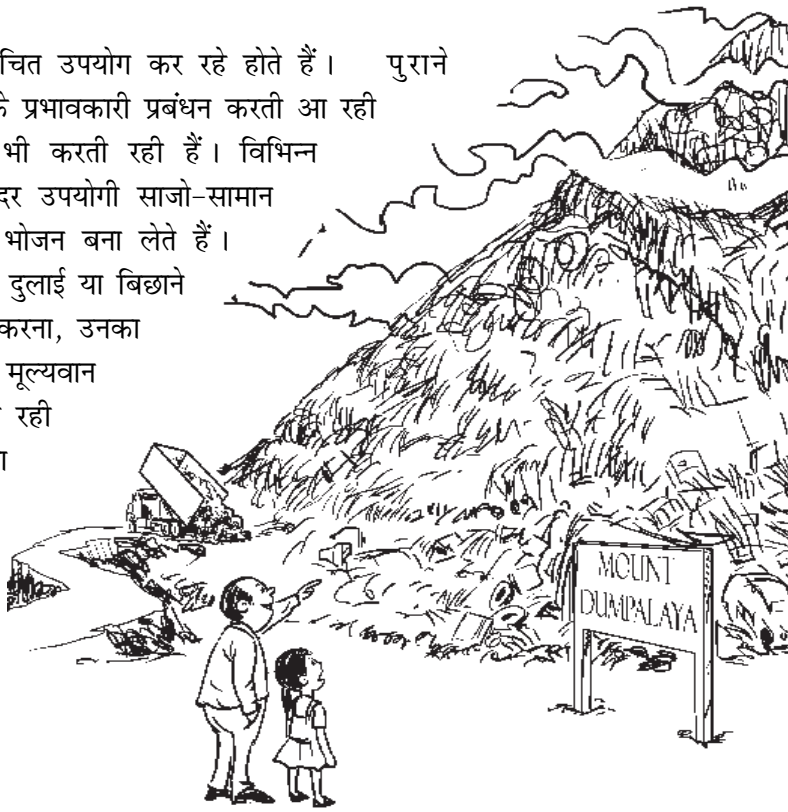

आज टिकाऊ विकास के लक्ष्यों को पूरा करना वैश्विक चुनौती है। कचरे के प्रभावी प्रबंधन/निष्पादन हेतु नवाचारी हल निकालना कठिन होता

जा रहा है क्योंकि कचरे को विभिन्न अंगों में तोड़ने में विशिष्ट प्रक्रियाओं को अपनाना जरूरी है तथा इसमें समय, ऊर्जा और खर्च भी बढ़ जाता है। नई अवधारणा ऐसी है कि हम कचरे को जमीनी तौर पर उसी जगह पर व्यवस्थित करें जहाँ वह पैदा हो रहा है। यह समझ विकसित हुई है कि आज हम कचरे को सिर्फ अपशिष्ट के रूप में फेंक नहीं दें पर उन्हें एक मूल्यवान संसाधन के रूप में देख कर उन्हें उपयोगी उत्पाद में परिवर्तित कर दें।

कचरे के रूप-परिवर्तन से यह साफ हो गया है कि प्राथमिक तौर पर 'कचरे' का रूप समृद्धि पैदा करने वाला हो जायेगा। अतः यह मुहावरा प्रचलित करें–'कचरे से समृद्धि'। जिस कचरा प्रबंधन प्रणाली से सामग्री या उपयोगी उत्पाद बना सकते हैं उसे हम रोजगार के नये उभरते क्षेत्र के रूप में देख सकते हैं तथा यह भारत की बढ़ती आबादी के लिए रोजगार उपलब्ध कराने वाली क्रिया बन सकती है।

कचरे के कुल मात्रा का आकार देखते हुए नवाचारी कचरा पुनर्उपयोग प्रक्रिया को एक बड़े पैमाने पर सूक्ष्म व्यवसायिक अवसर में बदला जा सकता है। भारत में 'कचरे से समृद्धि' व्यवसाय की क्षमता बहुत ज्यादा है। अभी इस क्षेत्र में बहुत प्रगति नहीं हुई है। यह व्यवसाय में बढ़ता हुआ सुअवसर है क्योंकि इसके बहुआयामी फायदे हैं। यह अनुपयोगी, फेंके जाने वाले अपशिष्ट उत्पाद को आर्थिक उपयोग में ला सकता है तथा इससे–

1) पर्यावरण पर कचरे का दवाब भी कम हो जायेगा।

2) आय के स्रोत का निर्माण होगा तथा नये क्षेत्र में रोजगार की सृष्टि होगी फलतः आर्थिक क्रियाशीलन बढ़ेगा एवं

3) हमारे जीवन की गुणवत्ता भी प्रभावित होगी।

3.2 लक्ष्य :

★ यह समझ बनाना कि कचरे की चुनौती एवं इसका पर्यावरण एवं स्वास्थ्य पर कैसा प्रभाव है।

★ हमारे दैनिक जीवन चर्या में किस प्रकार कचरे की सृष्टि हो रही है।

★ विभिन्न तरह के कचरों का वर्गीकरण एवं इनके निष्पादन (disposal) के तरीके।

★ 5R की अवधारणा – Refuse, Reduce, Reuse, Recycle एवं Recover.

★ कचरे के निष्पादन में सुरक्षित-क्रियाविधि जिससे स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर जोखिम कम किया जा सके।

★ वैसे नवाचारी तरीके जिससे कचरे से उपयोगी उत्पाद तैयार हो पाये।

★ नवाचारी प्रबंधन व्यवसाय के द्वारा आजीविका पैदा करना।

3.3 उपविषय का विस्तार :

इस उपविषय का प्राथमिक केन्द्र बिन्दु कचरा-प्रबंधन के विज्ञान एवं कला को समझना एवम् उपयोगी उत्पाद का विकास करना है। इसमें विभिन्न प्रकार के 'कचरे' का जीवनचक्र चिन्हित करेंगे तथा कचरा-उत्पादन से लेकर निष्पादन तक का जीवनचक्र रेखांकित करेंगे, इनको जैव निम्नीकरणीय एवं अजैव निम्नीकरणीय वर्ग में बाँटना, जोखिम भरा कचरा या सामान्य प्रबंधन के तरीके, पुनर्उपयोग करने हेतु उत्पाद, कचरे का स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर प्रभाव एवं सामाजिक-आर्थिक प्रश्न।

3.4 कचरा : इसके प्रकार एवं स्वभाव

परिभाषा : सामग्रियों के प्राथमिक उपयोग के बाद जो बेकार पदार्थ बचता है, जिसे फेंक दिया जाता है या उसका कोई मूल्य नहीं है, दोषपूर्ण है उसे कचरा कहते हैं। नगर निगम या म्युनिसपॉल्टी इनका निष्पादन राष्ट्रीय नियम के अनुसार करती है।

उदाहरण : म्युनिसिपल ठोस कचड़ा (MSW), जो कि घरेलू कचरा है, जोखिम वाला कचरा, अपशिष्ट जल (सीवेज जल जिसमें शरीर के कचरे, मल एवं यूरीन या सतही अपशिष्ट जल) रेडियोधर्मी कचरा, इलेक्ट्रोनिक कचरा एवं अन्य।

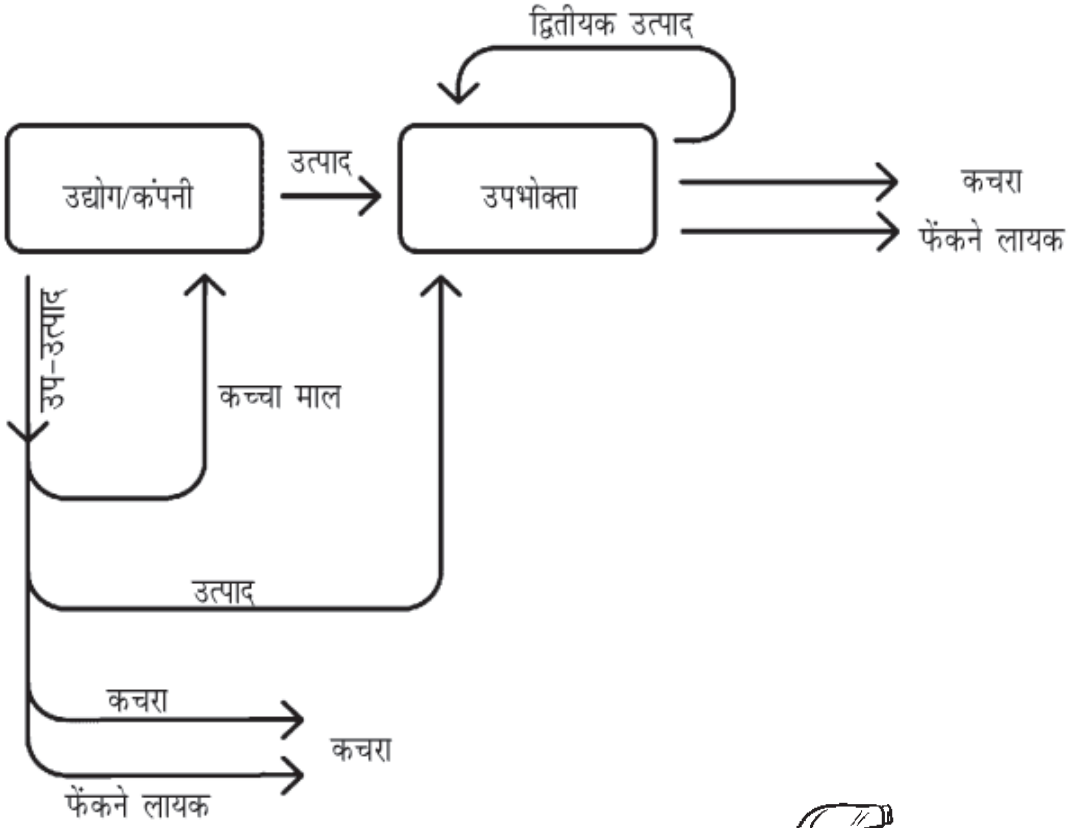

जोखिमयुक्त कचरा :

कोई भी कचरा जिसकी विशेषता हो कि वह भौतिकीय, रासायनिक, जैविक, क्रियाशील, जहरीली, ज्वलनशील, विस्फोटक या कोरोसिभ, खतरा उपस्थित करती है एवं स्वास्थ्य एवं पर्यावरण के लिए एकल या किसी दूसरे कचरे से मिल कर खतरनाक हो।

3.4.1जैवनिम्नीकरणीय (जैविक कचरा)

परिभाषा : जैवनिम्नीकरणीय सामग्री में जीवित (सूक्ष्मजीव) से निकला कचरा, जैसे पौधों से, जानवरों से दूसरे जीवों का कचरा जब उनकी जीवनलीला समाप्त हो जाती है।

उदाहरण : मानव एवं जानवरों का कचरा, पेड़-पौधों से निकला कचरा, पेड़-पौधों का उत्पाद, लकड़ी (बुरादा), कागज, भोजन सामग्री का कचरा, पत्ते, कटा हुआ घास एवं अन्य फलदार पेड़ों का कचरा एवं जानवरों का मृत शरीर, जीवों की मृत्यु के उपरांत।

जोखिम/खतरा : सामान्यत: हम कहते हैं कि जैव निम्नीकरणीय कचरे हानिकारक नहीं है एवं पर्यावरण को क्षति नहीं पहुँचाते हैं। हालाँकि हम अपने आवासीय पर्यावरण पर दृष्टि डालें तो देखेंगे कि अगर इन्हें सावधानी पूर्वक फेंका न जाये तो यह स्वास्थ्य पर खतरा उपस्थित करता है। जमा किया हुआ कचरा गलने से दुर्गन्ध देता है तथा यह मच्छरों का प्रजनन स्थल बन जाता है जिससे अन्य बीमारियों के पैदा करने वाले जीवों की उत्पत्ति होती है। सड़ा हुआ कचरा हरितगृह गैस देता है जैसे मीथेन, कार्बन डाइऑक्साइड एवं अमोनिया गैस पैदा करता है। अगर जल में ज्यादा जैव निम्नीकरणीय कचरा मिला हो तो यह घुलनशील ऑक्सीजन कम कर देता है तथा जलीय जीवों के जीवन पर प्रभाव डालता है। अगर जानवरों का गोबर भी ज्यादा मात्रा में है तो इससे स्वास्थ्य समस्यायें हो सकती है। एक बड़ी समस्या यह है कि अगर जैव निम्नीकरणीय कचरा को अलग न किया जाय तो कचरा-फेंकने के स्थान पर या जमीन को कचरा से भरने पर यह अजैव निम्नीकरणीय कचरे के नीचे दब जाता है तथा उस स्थिति में सूक्ष्मजीवों द्वारा इन्हें अवयवों में तोड़ना भी रूक जाता है।

जैव निम्नीकरण या कचरे के विभिन्न अवयवों में टूटना यह प्रक्रिया जैवनिम्नीकरणीय पदार्थ/सामग्री का उपयोगी संसाधन में बदलाव करती है। किसी भी पारितंत्र पर दृष्टि डालें तो पाते हैं कि विभिन्न जीवों के बीच वृहद रूप में आपसी लेन-देन चलता रहता है। एक जीव के अपशिष्ट दूसरे किसी प्रजाति के लिए स्वस्थ पर्यावरण का निर्माण करते हैं, उनके पोषण एवं उनके बचाव तथा फलने-फूलने को सहायता प्रदान

करते हैं। जैविक सामग्री/पदार्थ के सड़ने पर (कम्पोस्ट) उसे पौधों के लिए खाद या फर्टिलाइजर के रूप में उपयोग करते हैं। इस कम्पोस्ट से मिट्टी की संरचना उन्नत हो जाती है तथा पौधों को यह पोषक तत्व देता है। कम्पोस्ट तैयार करने की विधि में हम भींगे जैविक पदार्थ, जिसे ग्रीन कचरा भी कहते हैं (जैसे पेड़ों के पत्ते, भोजन अपशिष्ट) का ढेर बनाते हैं तथा कुछ हफ्ते या महीने भर इंतजार करते हैं कि यह टूट कर ह्यूमस में बदल जाए। इस विघटन की गति को अन्य जीवों जैसे बैक्टीरिया, फन्जाई, कीड़े, केंचुए इत्यादि का उपयोग कर तेज किया जा सकता है। इसके अवयवों में टूटने की प्रक्रिया में अजैव प्राचल जैसे तापमान, जल वाष्प, ऑक्सीजन, परा बैंगनी रोशनी का भी उपयोग किया जाता है।

टिकाऊ समृद्धि का निर्माण

जैविक खेती (कृषि) :

आज टिकाउ विकास के संदर्भ में चिन्ता करने के कारण कृषि-पारितांत्रिक विधि से फसल लेना ज्यादा लोकप्रिय हो गया है। इन विधियों में मिट्टी के स्वास्थ्य को पारितंत्र की प्रक्रिया द्वारा टिकाउ बनाया जाता है, साथ ही कृषि को समग्र, एकीकृत, एवं आपसी रूप से जुड़ा हुआ खाद्य उत्पादन गतिविधि के रूप देख कर फसल का महत्तम पैदावार तथा पोषण एवं संसाधनों का पुनर्उपयोग किया जा रहा है। जैविक खेती में रासायनिक उर्वरक एवं पीड़कनाशी रसायन की जगह पर कम्पोस्ट, हरित खाद एवं अस्थि चूर्ण का उपयोग एवं कीट-नियंत्रण के लिए जैव पीड़कनाशी एवं कीट नियंत्रक का बीमारियों से बचाव हेतु उपयोग करते हैं।

स्वस्थ जीवन शैली की चेतना के संदर्भ मे भारत में जैविक फार्म उत्पादन एवं इनका व्यापार आज भारत में एवं विश्व के अन्य देशों में एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में उभर रहा है। ASSOCHAM के अनुसार 2016 में जैविक खाद्य-पदार्थ का व्यापार लगभग 3350 करोड़ का अनुमानित है तथा पिछले चार वर्षों में इसकी मांग तीन-गुनी बढ़ी है।

बायो इंधन :

जैविक अपशिष्ट एवं जैविक कचरे से जैविक इंधन बनाना, सतत् विकास की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। बायो-गैस एक निम्न कार्बन तकनीक है जो जैविक कचरे से स्वच्छ पुनर्चक्रीकरणीय बायो-गैस उत्पन्न करती है एवं जैविक खाद का स्रोत भी है। बायो-गैस जानवरों के गोबर एवं अन्य जैविक पदार्थ जैसे पत्तियाँ आदि अन्य कचरे के ऑक्सीजन रहित (Anaerobic) पाचन क्रिया से निकलती है एवम् यह खाना बनाने, रोशनी, शीतलीकरण, विद्युत ऊर्जा उत्पादन एवं यातायात में ऊर्जा इंधन के रूप में उपयोग की जाती है।

हमारे देश में 'बायोमास' हमेशा से ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्रोत रहा है। Ministry of New and Renewable Energy (MNRE) के अनुसार देश में स्थानीय प्राथमिक ऊर्जा उपयोग का 32% आज भी बायोमास से ही मिलता है तथा आबादी का 70 प्रतिशत अपनी ऊर्जा जरूरतों की पूर्ति हेतु बायोमास पर ही निर्भर है। MNRE इस क्षेत्र में क्षमतावान तकनीक के विकास को बढ़ावा दे रहा है जिससे इसका उपयोग हमारे अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में हो पाये। स्थानीय विद्युत उत्पादन में उपयोग में लगाये गये विभिन्न बायोमास सामग्री हैं जैसे गन्ने की सिठ्ठी (Bagasse), धान की भूसी, पुआल, कपास के पौधे का डंठल, नारियल खोल, सोया की भूसी, तेल पेरने के बाद अपशिष्ट (oil cakes), कॉफी का अपशिष्ट, जूट-अपशिष्ट, चीनियाबादाम की खोई, लकड़ी का बुरादा (Saw Dust) इत्यादि।

बायो इंधन का प्रमुख उपयोग ग्रामीण/शहरी रसोई बनाने से लेकर ग्रिड पावर उत्पादन तक है जिससे चीनी मिल की ऊर्जा-जरूरत, एक पूरे गाँव की बिजली, या एक स्मार्ट शहर को बिजली प्रदान की जा सकती है। इस उद्योग (विद्युत उत्पादन) में लगभग प्रति वर्ष 600 करोड़ का निवेश हो रहा है तथा प्रतिवर्ष 500 करोड़ विद्युत इकाई का उत्पादन हो रहा है जिससे 1 करोड़ मानव दिवस को रोजगार मिल रहा है। इस क्षेत्र में महाराष्ट्र सबसे उच्च स्थान पर है जहाँ 1220 मेगावाट बायोमास पावर का उत्पादन हो रहा है।

3.4.2 अ-निम्नीकरणीय कचरे :

वैसे कचरे जो अवयवों में टूटते नहीं या प्राकृतिक रूप से गलते नहीं हैं वे अनिम्नीकरणीय कहलाते हैं, इसका अर्थ है कि इन्हें सूक्ष्मजीव या अजैव तत्व तोड़ नहीं पाते तथा प्राकृतिक तौर पर घुलनशील नहीं हैं या जैविक प्रक्रिया का हिस्सा नहीं हैं।

उदाहरणार्थ : इन कचरों में, शीशा, धातु, पके मिट्टी के बर्तन, चीनी मिट्टी, प्लास्टिक के सामान हैं। चिकित्सा के अपशिष्ट (बायो मेडिकल कचरा), इलेक्ट्रोनिक/बिजली के उपकरण (E–कचरा), निर्माण या तोड़ने की प्रक्रिया के कचरे (C and D), जितने भी अजैविक कचरे हैं, वे अनिम्नीकरणीय हैं क्योंकि इनका नाश कुछ हफ्ते या हजारों शताब्दियों में भी नहीं हो पाता। हमारा प्राचीन सभ्यता के बारे में ज्ञान मुख्यत: अनिम्नीकरणीय सामग्रियाँ जो कि प्राचीन काल में उपयोग में लाई जाती थी, उन पर ही आधारित है।

प्लास्टिक : भारत में प्रतिदिन 15,342 टन प्लास्टिक कचरा निर्मित होता है, जिसका 6,137 टन, चुना नहीं जाता तथा फैला रहता है, 9205 टन का पुर्नचक्रीकरण हो जाता है। हमारी जनचेतना में कमी तथा उन्हें चुन लेने के प्रभावी औजार नहीं रहने के कारण प्लास्टिक सामग्री एवं पैकेट बनाने वाले पदार्थ यहाँ-वहाँ फैले रहते हैं तथा इनका निस्पादन नहीं हो पाता है।

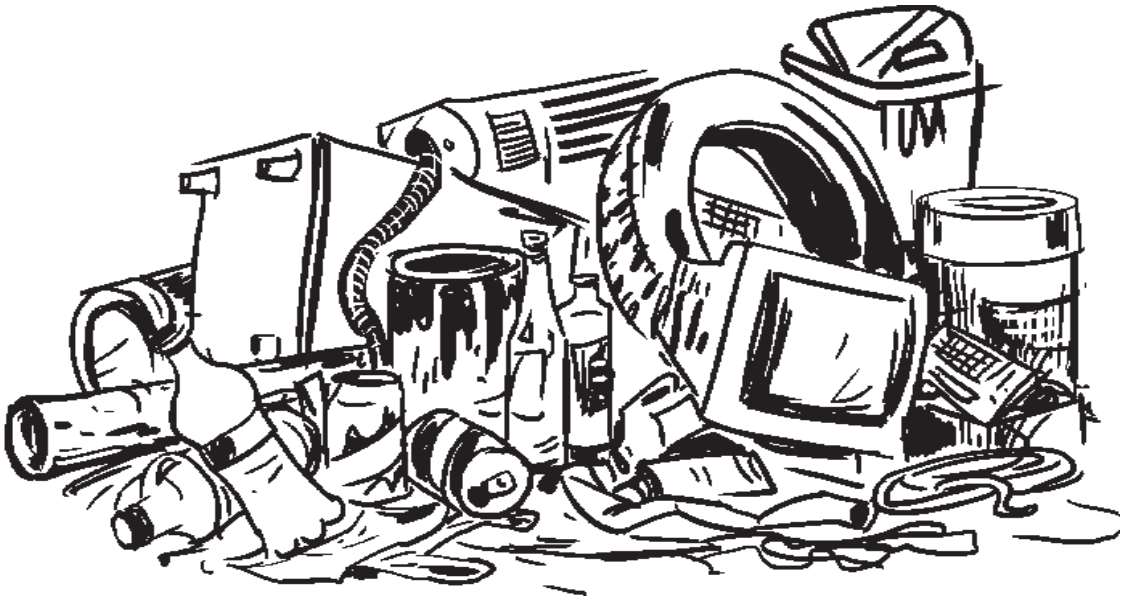

बायो मेडिकल कचरा मनुष्यों और जानवरों की चिकित्सा या टीका देने या बीमारी का पता लगाने की जाँच शोध प्रक्रिया के दौरान निकलता है। इसके उदाहरण हैं–डायपर्स, सैनिटरी पैड, सीरिंज, शेविंग ब्लेड, ear buds, नाखुन, बैंड एड, पट्टियाँ, रूई, सूखे कपड़े, चीर-फाड़ से संबंधित कचरे, हड्डियाँ, प्लास्टर ऑफ पेरिस इत्यादि।

E–कचरा : इलेक्ट्रोनिक उत्पाद जब उपयोग करने लायक नहीं रहता तो ई-कचरा कहलाता है। उदाहरण–कम्प्यूटर, मॉनीटर, मदरबोर्ड, कैथोड किरण ट्यूब, टेलीविजन, वी०सी०आर०, प्रिन्टेड सर्किट बोर्ड, मोबाइल फोन, चार्जर, सी०डी०, हेडफोन, एल०सी०डी० डिस्प्ले, एयर-कंडीशनर, रेफ्रीजरेटर एवं अन्य, भारत में कम्प्यूटर उपकरण ई-कचरा का बड़ा हिस्सा है।

निर्माण एवं तोड़ने (C and D) का कचरा :

इसके अंतर्गत वैसी सामग्री आती है, जिसका उपयोग नहीं है, भवन निर्माण के दौरान टूट गई है या भवन तोड़ने में से निकली है। इनकी लंबी सूची है–जैसे गिट्टी, नाली से निकला पदार्थ, संगमरमर के टुकड़े,

ईंट, कंक्रीट के टुकड़े, टाइल, काठ, कांटी, पाइप, छत निर्माण के टुकड़े, प्लास्टर करने का छत्ता, बिजली के तार, इनसुलेशन इत्यादि, निर्माण स्थल की तैयारी में गड्ढे खोदना तथा पेड़ काटना, निर्माण से संबंधित कचरे में, लेड, एसवेस्टस, पेंट इत्यादि। ऐसे आकलन है कि साधारणतया भवन निर्माण में 10 से 15 प्रतिशत सामग्री कचरे के रूप में अपशिष्ट बन जाती है।

कचरे से खतरा :

अजैव निम्नीकरणीय कचरे का निष्पादन हमारे सामने मुख्य चुनौती के रूप में उपस्थित होता है। यह जगह घेरता है तथा आवासीय परिसर को अस्त-व्यस्त कर देता है, भूमि को बेकार बना देता है या इनको जलाना पड़ता है, जल-जमाव वाले क्षेत्र में फेंकते हैं, भूमि में बने गड्ढे में भर देते हैं। इस तरह के कचरे के फेंकने से भूमि एवं जल प्रदूषित हो जाती है तथा पर्यावरणीय एवं स्वास्थ्य समस्यायें पैदा हो जाती हैं।

प्लास्टिक : साधारणतया उपयोग किए गये प्लास्टिक को लें। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद प्लास्टिक सामग्री बहुलता में सामने आई। यह सामान ढोने की थैली, बोतल, दूसरे पैकेजिंग, खिलौने, सेलफोन, रेफ्रीजरेटर, गाड़ियाँ, पाइप, निर्माण सामग्री, पतले धागे, इत्यादि के रूप में सामने आया। उपभोक्ता की जरूरतों के आधार पर नये-नये प्रकार के प्लास्टिक एवं पॉलीस्टर कपड़े बने हैं जो कि मजबूत एवं ज्यादा समय तक टिकने वाले थे। एक आकलन के अनुसार 1950 के बाद से 9.1 बिलियन टन प्लास्टिक का उत्पादन हुआ है। इसका 7 बिलियन टन अब उपयोग नहीं हो रहा है। लगभग 9% का पुर्नचक्रीकरण हुआ है। 12% प्लास्टिक को जला दिया गया है। तब भी 5.5 बिलियन टन प्लास्टिक भूमि पर कचरे के रूप में फैला है या जमीन में भरा है या जल सतह पर तैर रहा है। अगर उन्हें पतले टुकड़ों में भी काट दिया जाय तब भी वे हजारों साल तक पर्यावरण में रहेंगे।

चूँकि प्लास्टिक का निर्माण polypropylene or polyethylene से होता है, यह जहरीली रसायन जमीन एवं जल के अंदर पहुँच जाती है। जानवर जो प्लास्टिक खा लेते हैं वे सांस रूकने से मर सकते हैं। सरोवर, नदियाँ, समुद्र में प्लास्टिक जलीय जीवों, मछलियों एवं समुद्री पक्षियों को नुकसान पहुँचाते हैं–क्योंकि वे इसे खाने की चीज समझ लेते हैं। इनसे हरितगृह गैस भी निकलती है तथा इनसे dioxin एवं Furans (जैविक सूक्ष्म प्रदूषक) एवं भारी तत्वों का देशान्तर गमन भी होता है।

ई-कचरा : यह सामग्रियों एवं कम्पोनेन्ट का जटिल मिश्रण है तथा इनका उठाना उत्पादन से लेकर फेंकने तक सावधानीपूर्वक करना पड़ता है-अगर बैटरी को वैसे फेंक दिया जाय तो शीशा एवं दूसरे जहरीले प्रदूषक मिट्टी तथा भूमि जल में मिल जायेंगे। इनके बनाने की क्रिया में रसायन जैसे अम्ल, कॉस्टिक सोडा, सायनायड का उपयोग होता है तथा इनका सावधानीपूर्वक प्रबंधन जरूरी है। इलेक्ट्रोनिक उपकरण के बनाने में उन पर नये कोटिंग चढ़ाते हैं या पेंट करते हैं, अतः रसायनों का उपयोग इस प्रक्रिया में जरूरी होता है।

भारत में ई० कचरे का 5% ही सामान्यतः पुर्नचक्रीकृत होता है। बाकी अनियमित क्षेत्र में किया जाता है जिससे स्वास्थ्य पर जोखिम बढ़ जाती है। इन कचरों में 100 से अधिक विभिन्न पदार्थ रहते हैं। इनमें अधिकांश जहरीले हैं–जैसे लेड, hexavalent क्रोमियम, कैडमियम, पारा, प्लास्टिक, PVC, BFR's बेरियम, बेरीलियम एवं कैंसर पैदा करने वाले प्रदूषक जैसे कार्बन black एवं भारी तत्व। इनसे भूमिजल एवं मिट्टी प्रदूषित होती है एवं इन प्रदूषकों का प्रभाव रूप में-लीवर, किडनी एवं न्यूरो समस्यायें इन कचरों के संपर्क में आने वाले को होती है। उदाहरण के लिए Printed Circuit Board (PCB) में भारी तत्व जैसे As, Au, Ag, Cr, Zn, Pb, Sn एवं Cu रहता है। इनसे इन तत्वों को निकालना भी खतरे से खाली नहीं है। अनियमित पुनर्चक्रीकरण कर्त्ता ऐसी पुरानी खतरनाक विधि यों का उपयोग करते हैं–जैसे अम्ल के द्वारा घुला लेना या खुले में जलाना जिससे पर्यावरण को ज्यादा नुकसान पहुँचता है और यह प्रक्रिया असुरक्षित भी है।

3.4.3टिकाउ समृद्धि का निर्माण :

अजैव निम्नीकरणीय कचरे पृथ्वी एवं सभ्यता पर एक बड़ी चुनौती के रूप में है। कचरे में विभिन्न सामग्री की विशिष्टतायें उनसे समृद्धि-उत्पादन की क्षमता दिखलाती है।

पुर्नचक्रीकरणीय कचरे :

वैसे अजैव निम्नीकरणीय सामग्रियाँ जिन्हें अपने पुराने रूप में या नये रूप में फिर से उपयोग किया जाये या उनका नवीनीकरण कर या पुनर्चक्रीकृत किया जा सकता है उन्हें "पुनर्चक्रीकरणीय कचरा" कहते हैं। अजैविक अपशिष्ट जैसे PET एवं प्लास्टिक, रद्दी कागज, टेट्रा बोतलें-इनका ज्यादातर पुनर्चक्रीकरण किया जा रहा है। संगठित या असंगठित क्षेत्र में इनसे नवाचारी उत्पाद सूक्ष्म स्तर पर बनाया जा रहा है। कचरे का पुनर्चक्रीकरण करना, उन्हें फिर से उपभोक्ता के पास पहुँचाना है। बहुत से कार्यरत इलेक्ट्रोनिक उपकरण नये मॉडेल के बाजार में आने पर फेंक दिए जाते हैं। इन्हें फिर से उपयोग में लाया जा सकता है।

इस तरह के पुनर्उपयोग से हमारे कम मात्रा में उपलब्ध एवं मँहगे संसाधनों / कच्चे माल पर का दबाव भी कम जायेगा। इससे ऊर्जा खर्च में भी कमी आयेगी। इस तरह की प्रक्रियायें हमारी अर्थव्यवस्था एवं पर्यावरण पर धनात्मक प्रभाव डालती है।

प्लास्टिक कचरे की मात्रा न्यूनतम करने हेतु सरकार ने नये नियम लागू किये हैं जिससे नवाचारी रास्ते निकाले जा सकते हैं। प्लास्टिक उत्पादकों को नई जवाबदेही दी गई है कि वे कचरे को जमा करें तथा टिकाऊ कचरा प्रबंधन के उपाय लागू करें तथा सड़क-निर्माण में प्लास्टिक कचरा का उपयोग हो पाये। साथ ही ऊर्जा एवं तेल उत्पादन में कचरा लगाया जाय। एक दूसरे तरीके का पुनर्चक्रीकरण जिसमें जटिल उत्पाद से कुछ सामग्रियाँ बचा या निकाल ली जाये, जैसे–

(i) कार-बैटरी से लेड या PCB से सोना निकाल लेना जिनका मूल्य ज्यादा है। क्योंकि PCB बनाने मेविश्व का 10% सोना उपयोग हो रहा है।
(ii) या अगर इनका खतरनाक स्वभाव है जैसे पारा–थर्मामीटर से या थर्मोस्टेंट से पारा निकाल लेना।

अपुनर्चक्रीकरणीय (Non-recyclable) कचरा :

उस तरह की सामग्री जो अजैव निम्नीकरणीय नहीं है तथा किसी उपयोग में नहीं लाये जा सकते हैं–उन्हें 'अपुनर्चक्रीकरणीय कचरा' कहा जाता है। पारंपरिक तौर पर इन्हें निम्नलिखित तौर पर निष्पादित किया जाता है।

(i) आबादी से बहुत दूर ले जाकर जमीन के अंदर डाल दिया जाता है।
(ii) ताप-भट्टी में जला देना, या खुले में ही जलाना।

पर पर्यावरण प्रदूषण के संदर्भ में म्यूनिसपाल्टी द्वारा इन कचरों के प्रबंधन का बेहतर तरीका विकसित किया गया है। इन कचरों से ऊर्जा उत्पादन पर ध्यान केन्द्रित कर, इन्हें संसाधन के रूप में देखा जा रहा है। उदाहरणार्थ– जमीन के गड्ढे में आधार-लाइनर बनाना है जिससे कचरों से घुल कर रसायन पर्यावरण में न पहुँच पाये। रिसते हुए द्रव हेतु (Leacheate Tank) बना कर एवं मीथेन निकालने के लिए पाइप लगाकर ऊर्जा स्रोत के रूप में इनका उपयोग किया जाता है। म्यूनिसपैल्टी के ठोस कचरा भट्टी (MSWI) के द्वारा कचरे को राख में बदल कर–इस राख को विभिन्न उपयोग में ला सकते हैं। जो गर्म गैसे निकलती हैं उनसे ब्यालर में भाप बनाने के कार्य में लगाते हैं–इसके बाद एक टरबाइन को घुमाकर बिजली का उत्पादन किया जाता है। ईंधन गैस Scrubbing तकनीक for MSWI, जहरीली गैसों को साफ करता है जिससे, इन्हें पर्यावरण में छोड़ा जा सके।

उपरोक्त सभी तकनीक के द्वारा संसाधन क्षमता तो बढ़ती ही है, साथ ही समृद्धि पैदा हो रही है, इसलिए इसे चक्रीय अर्थव्यवस्था भी कहा जाता है।

3.5 तार्किक संरचना :

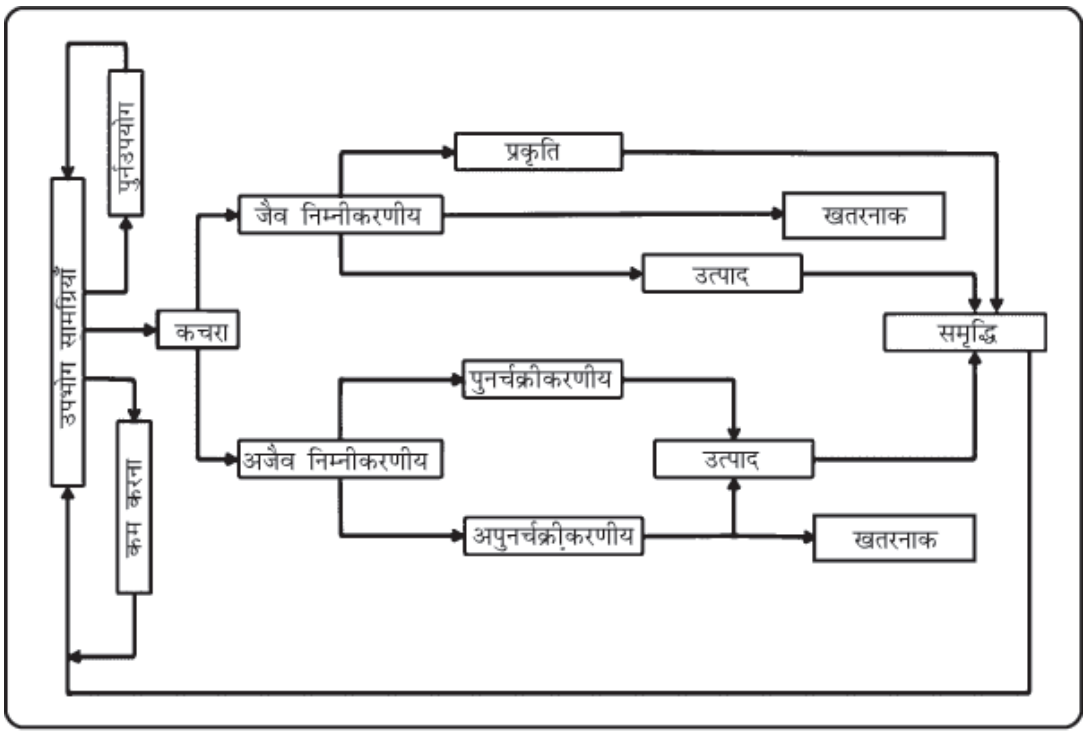

चित्र-3.1 : कचरे से समृद्धि को बढ़ाने की विभिन्न प्रक्रियायें।

3.6 कचरा प्रबंधन – एक विहंगम दृष्टि

हम सभी लोग दैनिक जीवन में ज्यादा मात्रा में कचरे का उत्पादन करते हैं तथा अपने आस-पास की समस्याओं तथा कचरा के बढ़ते प्रकोप को नजरअंदाज कर देते हैं। हमारे दैनिक कचरे में प्लास्टिक की बोतल, प्लास्टिक-कप, Styrofoam कप, प्लास्टिक थैलियाँ, धातु से बनी डिब्बी, टेट्रापैक, धातु के टुकड़े एवं निर्माण से अपशिष्ट सामग्री रहती है। हम यह नहीं सोचते कि हमारे घर के कचरे का अधिक भाग अजैव निम्नीकरणीय है। हम इन्हें जैवनिम्नीकरणीय कचरे के साथ ही फेंक देते हैं तथा आने वाले खतरे की चिन्ता नहीं करते। अजैव निम्नीकरणीय कचरा जैसे उपयोग की हुई बैटरी, aerosols, बल्ब, Flourescent tubes, पॉलिश, चिपकाने वाले adhesives, सफाई-घोल, नाली साफ करने वाले रसायन, Solvents, टूटा थर्मामीटर, दवाइयाँ, सीरिंज, घाव की पट्टी, चीर-फाड़ दस्ताने, डायपर, सेनिटरी पैड इत्यादि में खतरनाक रसायन रहता है तथा इन्हें सावधानी पूर्वक हुनर के साथ छूने-फेंकने की जरूरत है।

कचरे के विभिन्न प्रकार को अलग करना :

कचरे का ट्रीटमेंट इसके स्वभाव एवं इनके अवयवों में टूटने की विशेषताओं पर निर्भर करता है। अत: कचरे के निष्पादन में कचरे के स्रोत पर ही उन्हें अलग-अलग करना श्रेयस्कर है। एक साधारण तरीका है कि सूखे और गीले कचरे को घर में ही अलग-अलग बरतनों में जमा किया जाय तथा फेंकने के समय इनका झोला अलग-अलग हो। बहुत से परिवारों में रसोई घर के गीले कचरे से कंपोस्ट बनाते हैं या मिट्टी की उर्वरकता बढ़ाने में इसका उपयोग करते हैं।

उपरोक्त गीले-सूखे कचरे को अलग करना पर्याप्त नहीं है। इस तरह के घरेलु सूखे एवं गीले कचरे में खतरनाक सामग्रियाँ हो सकती हैं जिन्हें सावधानीपूर्वक अलग किया जाय। नीचे के चित्रों में विभिन्न कचरे का उनके अवयवों में टूटने की विशेषता के आधार पर वर्गीकरण किया गया है।

WET WASTE
DRY WASTE

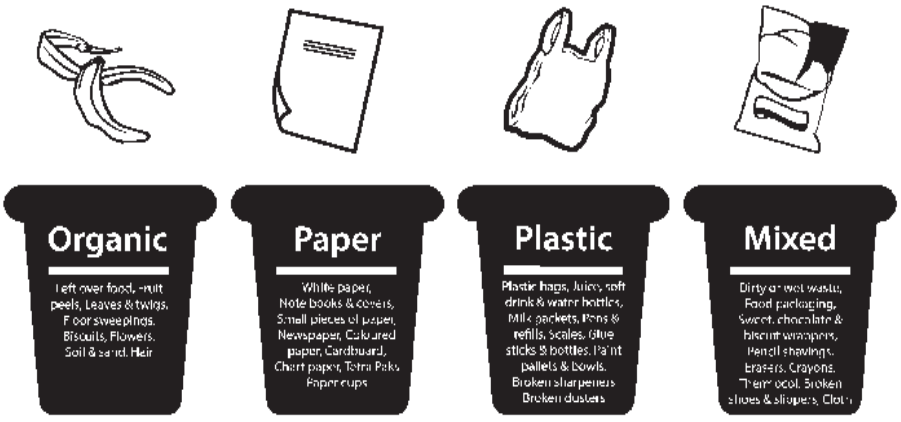

Organic
Left over food, Fruit peels, Leaves & twigs. Floor sweepings. Biscuits, Flowers. Soil & sand. Hair
Paper
White paper, Note books & covers, Small pieces of paper, Newspaper, Coloured paper, Cardboard, Chart paper, Tetra Paks Paper cups
Plastic
Plastic bags, Juice, soft drink & water bottles, Milk packets, Pens & refills, Scales, Glue sticks & bottles. Paint pallets & bowls. Broken sharpeners Broken dusters
Mixed
Dirty or wet waste, Food packaging, Sweet, chocolate & biscuit wrappers, Pencil shavings. Erasers. Crayons. Thermocol. Broken shoes & slippers, Cloth
Glass
Glass jars, Dettol Bottles, Pipettes, Test tubes, Lab bottles, Drinking glasses. Ink bottles
Metal
Aluminium foil cans, Paper clips, Thumb tacks , Metal bottle caps, Metal accessories Broken hole punchers, Broken staplers
E-waste
Printer cartridges, Mouse, Computer monitors, Laptops. Mobile phones
Sanitary
Used tissue paper, Soiled toilet paper, Sanitary pads, Diapers

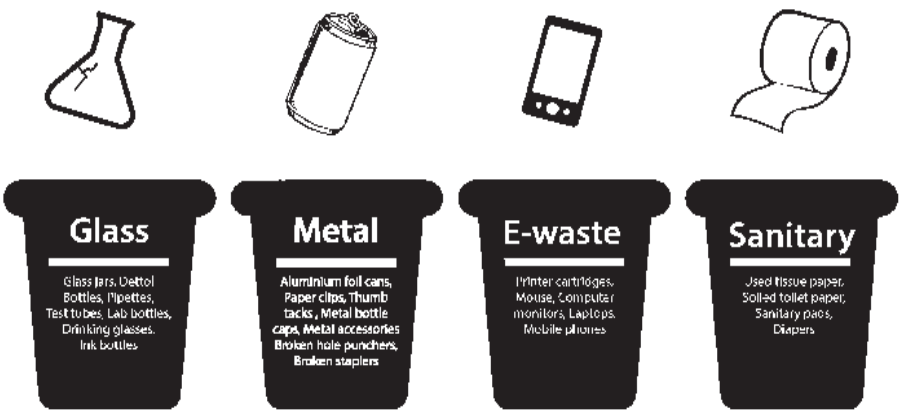

कितने समय में इनका विखंडन होता है

प्राचीन सामग्रियाँ (इन्डस तराई के समाज का)
(3300 से 1300 BC)

ईंट से निर्माण | बैलगाड़ी-टेराकोटा | बैलगाड़ी-धातु का

तत्व एवं हड्डी के गहने | बरतन-पकाया हुआ गारा | पत्थर की मूर्ति | टेराकोटा

समाज एवं संकृति

कचरा निष्पादन क्षेत्र

कचरे से समृद्धि (उपयोगी साज-सामान तैयार करना)

पुर्नचक्रीकरण किये गये पदार्थ से आश्चर्यजनक निर्माण

3.7 कचरा प्रबंधन :

केन्द्रीय पर्यावरण प्रदूषण बोर्ड के वर्ष 2014-15 की रिपोर्ट के अनुसार, देश में 519 लाख टन कचरा उत्पादित हुआ था। इस कचरे का 91% ही जमा किया गया, तथा 27% का उपचार किया गया तथा बचा हुआ 73% कूड़े के ढेर पर फेंक दिया गया।

भारत में कचरे के लिए एक टिकाऊ 'कचरे से समृद्धि' मॉडेल विकसित करने की नितांत आवश्यकता है। हमारी क्षमता बहुत ज्यादा है। ऐसा आकलन है कि भारत का कचरा-प्रबंधन बाजार वर्ष 2025 तक अमेरिकी डॉलर में 13.62 बिलियन का हो जायेगा। यह संभावना है कि सरकार का मिल कर किया हुआ प्रयास तथा उद्योग का लाभ एवं प्रतिभागिता बढ़ाने से, संगठनों एवं समुदायों की पेशकदमी से भारत का छिपा हुआ कचरा प्रबंधन उद्योग एक नया विकास का मोड़ ले सकता है। पर हमें म्यूनिसिपल ठोस कचरा के वैज्ञानिक विधि / निस्तारण / पुर्नउपयोग / पुर्नचक्रण के साथ-साथ 100% उठाव पर जोर देना होगा। इस अवधारणा को सफलतापूर्वक जमीन पर उतारने हेतु, सरकार के द्वारा म्यूनिसिपल निकायों को हर संभव सहायता दी जा रही है, जिससे वे कचरा निष्पादन की नई रूपरेखा, कार्य करने के तरीके एवं क्रियाशील योजना लेकर आयें।

पूँजी निवेश तथा सेनेटरी केन्द्रों के रख-रखाव के लिए इस क्षेत्र में निजी-क्षेत्र की सहभागिता पर जोर दिया जा रहा है तथा उत्पादन केन्द्र से शुरू कर PPP (Public Private Participation) पर भी जोर दिया गया है। विभिन्न उद्योग भी कचरा प्रबंधन की जरूरतों को समझ कर इसकी नई रूप-रेखा विकसित करें। कचरे के लाभप्रद सामग्री के रूप परिवर्तन से टिकाऊ विकास के लक्ष्य भी पूरे होंगे। उद्योगों के बीच के आदान-प्रदान से कचरों को उत्पादन-केन्द्र से या उनके बाहर से उठाया जा सकता है। कुछ भौतिकीय एवं रासायनिक तकनीक विकसित हुए हैं जिनसे अपशिष्ट सामग्री को निकला जा सकता है जैसे Reverse Osmosis विद्युत-विच्छेदन (Electrolysis), घनीकरण (Condensation), Electrolytic recovery, छानना, Centrifugation इत्यादि। उदाहरणार्थ– एक PCB बनाने वाला उद्योग, विद्युत विच्छेदन क्रिया का उपयोग कर ताँबा या टिन- lead plating bath से निकाल सकता है। हालाँकि खतरनाक सामग्रियों को निकालने से हमारे पर्यावरण को फायदा नहीं है क्योंकि यह एक उत्पाद से बाहर आ कर नये द्वितीय उत्पाद में पहुँच जाते हैं, जहाँ इसका फिर निस्तारण करना जरूरी है।

कोई सामग्री-संसाधन का रूप ले पाये, इसके लिए यह जरूरी है कि जहाँ तक संभव हो यह स्वच्छ एवं शुद्ध हो। इसलिए समृद्धि प्राप्त करने हेतु अगर एक स्थान पर कोई सामग्री उपयोगी नहीं है तो उन्हें अलग रखा जाता है जिससे यह दूसरे कचरों में या बेकार सामग्री में मिल न पाये। इस विधि को छाँटना कहते हैं। उदाहरण के लिए–भींगे कचरे से, जो घरेलू बाजार, शिक्षण संस्थान, होटल, रेस्तरां इत्यादि में उत्पादित हो रहे हैं उनसे कंपोस्ट बनाने की क्रिया में यह ध्यान रखा जाता है कि 'जहरीली' सामग्रियाँ जैसे बैटरी, पेंट, कीटनाशक, मरकरी ट्यूब एवं दूसरे खतरनाक रसायन इसमें न मिल पाए। तभी हमारे कंपोस्ट की गुणवत्ता अच्छी होगी एवं इनका जैविक-मीथेनीकरण एवं कंपोस्टिंग कर, ठोस या द्रव कचरे से बड़ी आमदनी पैदा की जा सकती है।

अगर हम उत्पादन के क्षेत्र में ज्यादा क्षमतावान उपकरण या प्रक्रिया का उपयोग करें या अभी के साजो-सामान को बदलकर उत्पादन के नये तकनीक का उपयोग करें तब भी कचरे के उत्पादन की मात्रा में समुचित कमी लाई जा सकती है। नया और परिस्कृत औजार/मशीनरी के द्वारा कच्चे माल का क्षमतावान उपयोग होगा तथा कचरे की मात्रा में कमी होगी। अगर अभी के उपकरण / मशीन में थोड़ा परिवर्तन कर इन्हें क्षमतावान बनाया जाय–किसी साधारण से परिवर्तन के बाद जैसे सामग्रियों को किस प्रकार एक जगह से दूसरे जगह ले जाया जाता है जिससे यह सुनिश्चित हो कि इस प्रक्रिया में सामग्रियों की बरबादी नहीं हो रही हो, तब हम कचरे का उत्पादन कम कर सकते हैं।

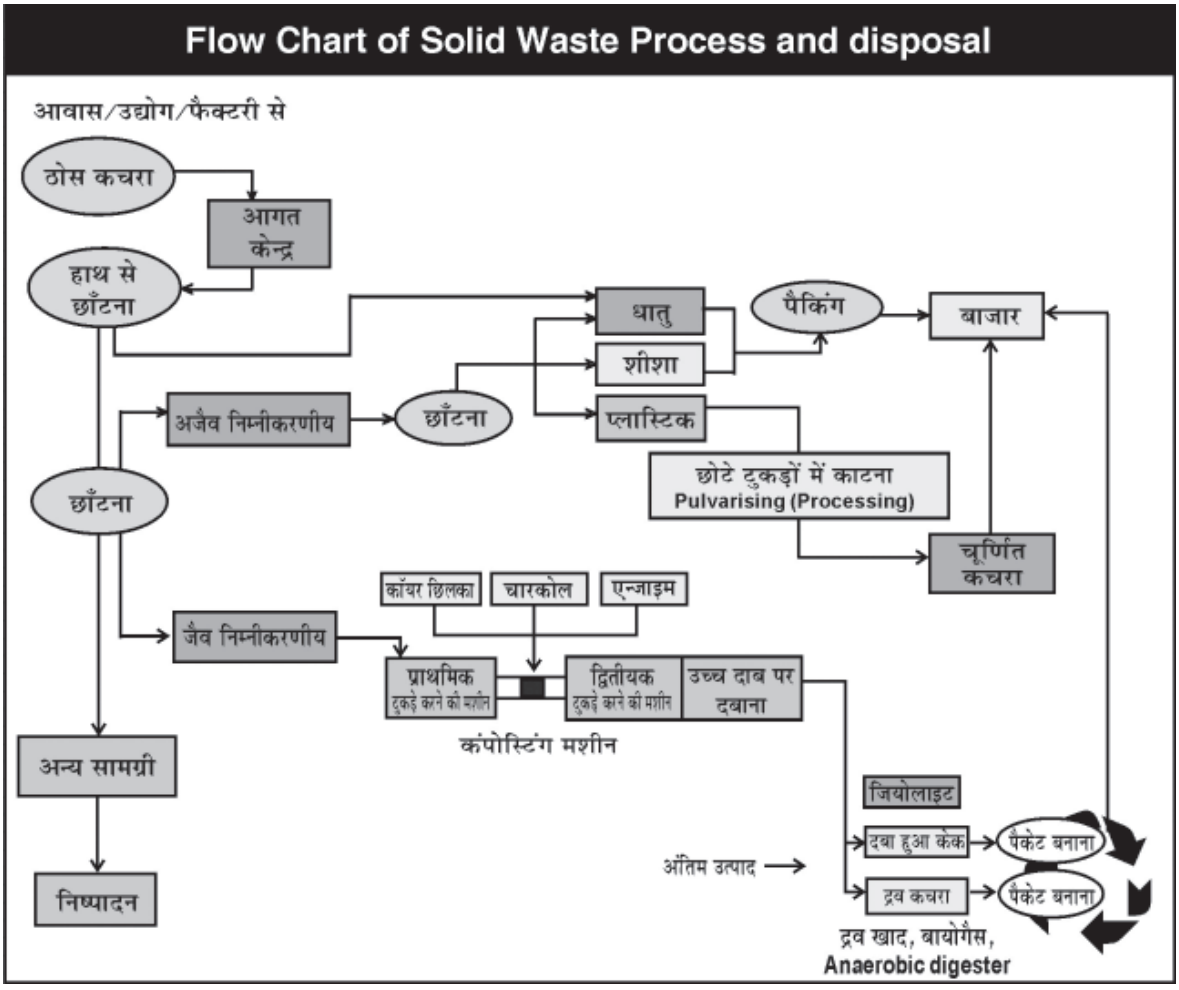

BOX-I

अचक्रीकरणीय कचरे से उपयोगी वस्तुएँ बनाना तथा भराव क्षेत्र में कचरा डालना : ऊर्जा उत्पादन

भराव क्षेत्र बनाने के तरीके –

★ स्थान, भूगर्भीय प्रकार, भूमि जल का स्तर, जल के अन्य स्रोतों से दूरी एवं कचरे का घनत्व, इनके उपर वैज्ञानिक शोध करना।
★ स्थान से मिट्टी निकाल देना।
★ गढ़ा खोदना - (इसका आयतन इस पर निर्भर करेगा कि प्रथम शोध का परिणाम कैसा है)
★ स्थान के चारों ओर बाड़ लगाना।
★ अस्तर एवं निथारा हुआ द्रव (Leacheate) प्रबंधन प्रणाली बनाना।
★ High density Polyethene – का अस्तर डालना जिससे निथारा हुआ द्रव पास के पर्यावरण में नहीं रिस कर जा सके।
★ निथारा हुआ द्रव एवं मीथेन के निकलने का पाइप बैठाना।
★ हर भराव क्षेत्र के सेल के साथ निथारे हुए द्रव का टैंक बनाना।
★ पावर जेनरेटर एवं आग लगाने की प्रणाली (विद्युत उत्पादन हेतु) या compressor स्टेशन (जिससे मीथेन को बेचा जा सके) बनाना।

जलाना : (उच्च ताप भट्टी में जलाना) –

इसमें कचरा निम्नलिखित प्रक्रियाओं से निष्पादित होता है।

★ कचरे को गढ़े में ट्रक द्वारा गिराया जाता है।
★ एक क्रेन से कचरा उठाकर हॉपर में डालते हैं, जो एक घूमने वाले गेट से कचरे को भट्ठी में डालता है।
★ कचरे को 10 – 12 GJ इंधन से जलाया जाता है।
★ कचरे का 70% भाग बाधित हो जाता है।
★ 1 GJ इंधन के द्वारा ऑगैनो क्लोरीन स्वभाव के जहरीले रसायन को कम कर सकते हैं।
★ कचरा सूखा - राख के रूप में मिलता है तथा इसका पुनर्चक्रीकरण किया जाता है।
★ जो जलने से धुआँ / वाष्प निकला उससे एक उबालने वाले बरतन द्वारा भाप में बदलते हैं।
★ वाष्प से एक टरबाइन घुमा कर विद्युत पैदा किया जाता है।
★ जहरीली गैसों को विद्युत स्थैतिक अवक्षेपक (Electrostatic Precipitator) से संचारित किया जाता है जिससे धूल कण छन जाते हैं।
★ जहरीली गैसें flue gas तथा दूसरे साफ करने की प्रणाली से गुजारी जाती है जिसके बाद उन्हें चिमनी से वायुमंडल में छोड़ दी जाती है।

प्लाज्मा आर्क द्वारा गैस बनाना एवं Vitrification (Vitrification – एक प्रक्रिया है जिससे सामग्रियों को शीशे के तरह के पदार्थ में बदल दिया जाता है - रवादार ठोस के रूप में)

प्लाज्मा आर्क संयंत्र निम्नलिखित चरणों में कचरे का निष्पादन करते हैं।

★ कचरा लिया जाता है तथा एक बंद बरतन रूपी आगार में रखा जाता है।
★ कचरे से धातु के टुकड़े एवं खतरनाक कचरे को अलग कर लिया जाता है।
★ कचरे को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट कर एक कन्वेयर बेल्ट से गैस बनाने वाले बरतन में पहुँचा दिया जाता है।
★ पहले अपशिष्ट को ताप देकर बाद में प्लाज्मा बनाना गैसीफायर बरतनों में ही संपन्न होता है।
★ प्लाज्मा आर्क में गैस डालने पर गैस अवयवों में टूटता है तथा तात्विक स्तर पर यह समृद्ध बनावटी गैस में परिवर्तित होता है। जो राख बचती है उसे अलग प्लाज्मा बरतन में द्रव अवस्था में परिवर्तित किया जाता है और यह ठंढा करने पर कांच जैसा बन जाता है–शीशे जैसा ठोस मिलता है इसे स्लैग कहते हैं।
★ Synthetic गैस को शुद्ध कर जहरीले अवयवों में अलग-अलग कर लेते हैं।
★ शुद्ध कृत्रिम गैस को जेनरेटर इंजन में इंधन के रूप में उपयोग करते हैं।
★ इस प्रक्रिया से जितना ताप (प्लाज्मा आर्क बरतन एवं जेनरेटर के इंजन से) उत्सर्जित होता है उससे एक वाष्प टरबाइन चला कर अतिरिक्त विद्युत ऊर्जा प्राप्त करते हैं।

5R का सिद्धांत : Refuse, Reduce, Reuse, Recycle, Recover

जितनी पुरानी हमारी सभ्यता है–उतना ही पुराना कचरे की समस्यायें हैं। कचरा-उत्पादन सामग्री की हानि के साथ-साथ ऊर्जा की हानि है। इसके कारण समाज का पर्यावरणीय खर्च बढ़ जाता क्योंकि इसके उठाव, शोधन तथा निस्तारण में खर्च होता है। किसी भी 'उत्पाद' (Product) के जीवन-चक्र में इसके बनाने से लेकर अंतिम निष्पादन तक यह कचरा तथा पर्यावरण में अपशिष्ट (residuals) पैदा करता है।

कचरे की चुनौती का सामना करने में यह 5R का सिद्धांत एक टिकाऊ, पर्यावरण मित्रवत वैकल्पिक रास्ता देता है जिससे कि कचरे का नकारात्मक प्रभाव मानव-स्वास्थ्य, पर्यावरण एवं प्राकृतिक पारितंत्र पर न पड़े। यह सिद्धांत कचरे को जीवन-चक्र के हर पड़ाव पर एक संसाधन के रूप में देखता है।

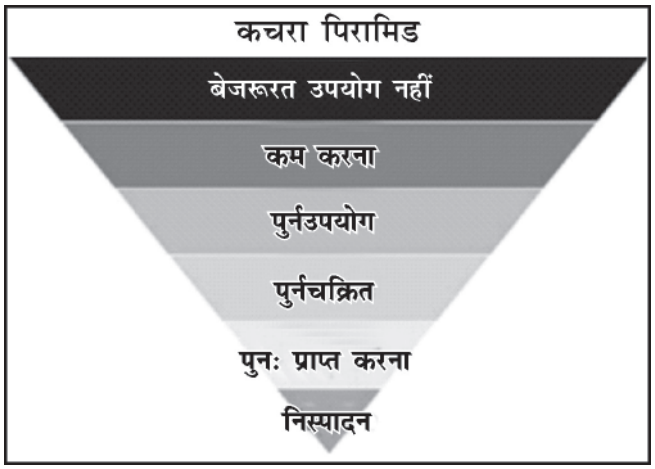

अतः कचरे की विभिन्न स्तरों की परिभाषा ही बदल जाती है तथा यह इसके क्षमतावान उपयोग की विशिष्टता परिभाषित करता है–जिसके आधार में कचरा प्रबंधन एवं समृद्धि उत्पादन का लक्ष्य है।

बिना जरूरत उपयोग नहीं (Refuse) : यह समुदाय को बेजरूरत उपभोग को कम करने को प्रेरित करता है तथा जीवन शैली की समझदारी से वैसी सामग्रियों का चुनाव करने पर बल देता है जिसकी सबसे कम पैकेजिंग हो, उत्पादन में कम संसाधन का उपयोग हो तथा उत्पाद का बार-बार उपयोग किया जा सके। यह वैसे उत्पाद को खरीदने को बढ़ावा देते हैं जो पुनर्चक्रित हो सके, पुनर्चक्रीकरणीय हो, मरम्मत किया जा सके, पुर्नभरण करने योग्य, पुनर्उपयोग किया जा सके या जैवनिम्नीकरणीय हो।

कचरा कम करना (Reduce) : अगर उत्पादन प्रक्रिया को सक्षम तथा ज्यादा क्षमतावान बनाया जाय तथा इसमें कचरे उत्पादन की मात्रा कम हो तो यह सही रास्ता होगा। इसकी तुलना में कि हम फिर कचरे के पुनर्उपयोग, पुनर्चक्रीकरण या निष्पादन एवं निस्तारण में ऊर्जा खर्च करें।

पुनर्उपयोग (Reuse) : इस तरह के संसाधन का उपयोग करें जो कि बिना किसी प्रक्रिया के फिर से उपयोगी हो जाय-जिससे इसके पुर्नचक्रीकरण में श्रम, सामग्री, जल एवं ऊर्जा कम लगे। उदाहरणार्थ बहुत से घरेलु एवं औद्योगिक उपकरण सामग्रियों की मरम्मत हो सकती है, पुनर्उपयोग हो सकता है तथा बेचा जा सकता है या संस्थाओं को दान में दिया जा सकता है जिससे यह उत्पाद अर्थतंत्र का हिस्सा बने रहें।

पुनर्चक्रीकरण (Recycle) : इस प्रक्रिया में संसाधनों का स्वरूप बदल कर एक नई प्रक्रिया के शुरू में लगाया जाय-अर्थात् पदार्थ या सामग्री के अंतिम उपयोग के बाद इसे उपयोगी कच्चा माल के रूप में उपयोग कर दूसरा उत्पाद बनाया जाय, जैसे–पेय पदार्थ के डब्बे से अल्मुनियम या प्लास्टिक निकाल कर इसे किसी रसायनिक प्रक्रिया में डाल कर उपयोग करें या अपशिष्ट जल को साफ कर द्वितीयक उपयोग के लिए ले जायें।

पुनः प्राप्त करना (Recovers) : जब कम करना, पुनर्उपयोग एवं पुनर्चक्रीकरण तीनों का उपयोग हो चुका है तब हम निकालने की ओर जा सकते हैं। इसमें हम कचरे की सामग्री को परिवर्तित कर संसाधन निकाल लें–(जैसे तापीय एवं जैविक तरीकों से विद्युत, ताप, कंपोस्ट एवं ईंधन) या धातु, ग्लास इत्यादि निकाल लें।

निस्तारण एवं कचरे का उपचार (Disposal or Treatment : अंत में कचरे के विभिन्न स्तर को यह मालूम है कि कुछ खतरनाक रसायन या एस्बेस्टस हैं जो कि सुरक्षित ढंग से पुनर्चक्रीकृत या सीधा उपचार किया नहीं जा सकता अतः सुरक्षित निस्तारण ही करना उचित है।

चक्रीय अर्थतंत्र (Circular Economy)

संसाधनों का उपयोग 'क्षमतावान' बनाने हेतु एवम् कम भौतिकिय संसाधनों का उपयोग करना तथा एक ही उत्पाद या सेवा देने हेतु कम कचरा का उत्पादन प्रमुख है। एक क्षमतावान संसाधन उपयोग का अर्थतंत्र तथा समाज में पारंपरिक तौर पर 'बिना मूल्य का' या बेकार कचरा को नये अर्थतंत्र के लिए संसाधन के रूप में देखते हैं। उन्हें हम निकाल सकते हैं (या खो-जाने से बचा लेंगे) जब हम ज्यादा क्षमतावान प्रबंधन का उपयोग उत्पादन एवं उपभोग के हर स्तर पर करेंगे।

कुछ खतरनाक एवं जहरीले सामग्रियों को भी पुनर्चक्रित किया जा सकता है या उसका स्वरूप बदल कर पुनर्उपयोग कर सकते हैं। उदाहरणार्थ–लगभग 10 मिलियन कंप्यूटर में 135,000 मेट्रिक टन पदार्थ निकालने योग्य है जैसे धातु, सिलिकान, ग्लास, प्लास्टिक एवं बहुमूल्य धातु।

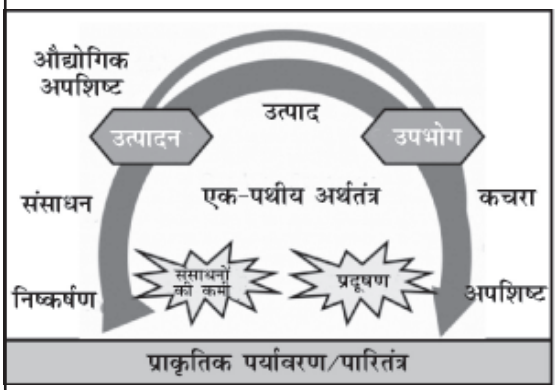

चित्र : रैखिक या एक-पथीय अर्थतंत्र

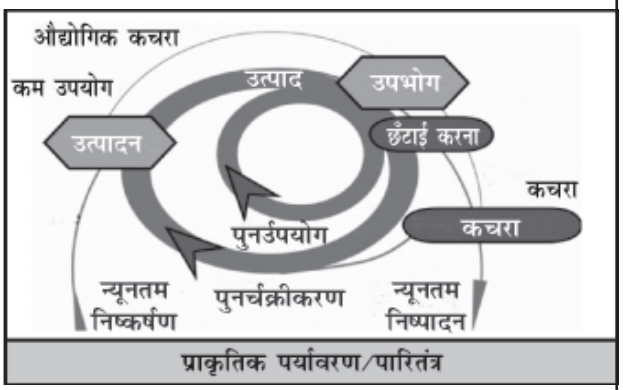

चित्र : वृत्तीय या बंद परिपथ अर्थतंत्र

यह हमें रैखिक अर्थतंत्र से (जो Take-make-waste) एक बंद पथीय अर्थतंत्र की ओर ले जाता है जिसमें पदार्थ, अवयव एवं सामग्री का जीवन एक से ज्यादा उपयोग में आता है तथा कम करना, मरम्मत किया हुआ, पुर्नउत्पादित, फिर से ठीक कर उपयोग एवं अंत तक अर्थतंत्र के विभिन्न हिस्सों में भाग लेता है। इसमें संसाधन क्षमता बढ़ जाती है क्योंकि उपभोग एवं अपशिष्ट कम हो जाता है एवं उप-उत्पाद का पुनर्उपयोग एवं पुनर्चक्रीकरण किया जा रहा है।

कचरा प्रबंधन एवं टिकाऊ समृद्धि पैदा करने का गणित

एक समुदाय जिसकी आबादी 1 लाख हो लें।

– औसत कचरा प्रतिदिन 50 टन जिसमें 70% भींगा कचरा है अर्थात (35 टन)।

– भींगे कचरे से कंपोस्ट बनायें या मीथेन गैस उत्पादन करें, तब इसका भार 1/5 हो जाता है।

अत: 7 टन कंपोस्ट प्रतिदिन तथा 210 टन एक महीने में।

– अगर कंपोस्ट को Rs. 3/- kg बेचा जाय तो रू० 6,30,000 प्रति महीने की आमदनी होगी।

– लगभग प्रतिदिन 3 टन सूखा कचरा को उपयोगी सामग्री बनाने में उपयोग करेंगे।

– शहरी स्थानीय निकाय की आमदनी 7,50,000 प्रति माह या 90,00000/- वार्षिक होगी।

दूसरी ओर अनुपचारित कचरा एवं ठोस कचरा मिश्रित कचरे का प्रबंधन में म्यूनिसिपैल्टी/कॉरपोरेशन को 700 रु० प्रति टन का खर्च अर्थात् 12,600,000 प्रतिवर्ष करना होगा जिसके बदले उसे प्रदूषण एवं स्वास्थ्य समस्या मिलेगी।

BOX-II

कचरे से समृद्धि : भारत के समुद्रीतट पर स्थित एक शून्य-कचरा (Zero Garbage) ग्राम की कहानी –

वेंगुरला, एक म्यूनिसिपाल्टी है। यह गोवा (एक सैलानियों का केन्द्र) से लगभग आधे घंटे में पहुँचने वाली दूरी पर है। यह एक ऐसा उदाहरण है कि कोई समुदाय किस प्रकार अपने कचरे का निस्तारण आदर्श तरीके से कर सकते हैं। प्रतिदिन इस ग्राम में 7 टन कचरा उत्पन्न होता है पर इसका पूरा का पूरा पुनर्चक्रित किया जाता है। ग्राम को इससे एक अच्छी आमदनी होती है तथा इस पैसे को म्यूनिसिपाल्टी के क्रियाशीलन में लगाई जाती है। इस परियोजना के मुखिया है रामदास कोकरे, जो वेंगुरला म्यूनिसपाल्टी के मुख्य अधिकारी है तथा यह परियोजना संयुक्त राष्ट्र के UNDP कार्यक्रम के अंतर्गत चलाई जा रही है। श्री कोकरे के अनुसार 'कचरा' कोई समस्या नहीं है। विभिन्न प्रकार के मिले हुये कचरे तथा इन्हें अवयवों में बाँटना ही मुख्य चुनौती है। इन उपलब्धियों के प्रमुख अंश निम्नलिखित हैं–

★ कचरे के प्राथमिक स्रोत (अर्थात् घर / आवास) को वहीं पर अलग-अलग जमा किया जाता है।

★ लगभग 3000 परिवार अपने यहाँ चार विभिन्न रंग के डिब्बों में कचरा जमा करते हैं। सप्ताह में 6 दिन, म्यूनिसिपल कर्मचारी कचरे का उठाव कर उन्हें म्यूनिसिपल कचरा जमा करने की जगह पर ले जाते हैं। इस केन्द्र के साथ हरित-बाग जुड़ा है जहाँ कि जैविक खाद का उपयोग होता है। यहाँ पर 20 कर्मी उन्हें 23 विभिन्न श्रेणियों में अलग करते हैं।

★ भींगे कचरे से बायो-गैस उत्पादन किया जाता है जिससे 30 विद्युत ऊर्जा इकाई प्रति टन कचरा से बनता है। इस विद्युत ऊर्जा से कचरा भराव क्षेत्र की सभी मशीने चलती हैं।

★ एक मशीन प्लास्टिक के टुकड़े करने के लिए है। इससे प्रतिदिन 180 Kg हल्के प्लास्टिक को टुकड़ा किया जाता है।

★ प्लास्टिक के टुकड़ों को बिटुमेन में मिलाकर मजबूत सड़कें बनाई जाती है। इस तरह की सड़कें मौसमी परिवर्तन को झेल सकती है एवं इसमें कम लागत भी लगती है। एक किलोमीटर सड़क बनाने में लगभग 1 टन प्लास्टिक कचरे का उपयोग होता है, या 1 मिलियन कैरी बैग तथा यह भारतीय मुद्रा में 10,000 रु० बचाता है।

★ वेनगुरला में 12 कि०मी० का 'प्लास्टिक' सड़क बना है तथा Rs. 15/- per kg के दर से सड़क बनाने वाले इसे खरीद लेते हैं, क्योंकि आस-पास के इलाके में भी इसकी खपत है।

★ वैसे कचरे जो सूखे रहते हैं–जैसे कपड़ा, कागज, कार्डबोर्ड, इन्हें एक मशीन से गुल (brickette) बनाया जाता है–यह भी आस-पास के उद्योग वाले खरीद लेते हैं, क्योंकि व्यालर को गर्म करने में यह वैकल्पिक ईंधन के रूप में काम में आता है।

★ मोटा/भारी प्लास्टिक को सीमेंट उद्योग खरीदता है जहाँ यह 3000ºC पर द्रव में परिणत किया जाता है।

★ म्युनिसिपाल्टी को प्रति महीने इन कचरों से 150,000.00 रु० की आमदनी होती है जिसे ग्राम के कचरे प्रबंधन में विकास हेतु लगाई जाती है।

★ 'कचरे के निष्पादन' की इस सुविधा को देखने के लिए अभी तक 700 पर्यटक आये हैं।

3.8 कचरे से समृद्धि : विभिन्न क्षेत्र के कुछ उदाहरण

1. प्लास्टिक कचरे से द्रव हाइड्रोकार्बन/ऊर्जा तैयार करना –

प्रो० अल्का जदगांवकर एवं डॉ० उमेश जदगांवकर ने एक विधि की खोज की है जिससे प्लास्टिक कचरे को उपयोगी सामग्री में बदला जा सकता है जैसे LPG गैस एवं इंधन-तेल। यह विधि Random depolymerisation के सिद्धांत पर आधारित है तथा इसमें चुनकर C-C बंधन को तोड़ा जाता है। प्लास्टिक एवं पेट्रोलियम इंधन दोनों हाइड्रोकार्बन स्वभाव के हैं। लेकिन प्लास्टिक के अणु में लंबे कार्बन-बंधन (चेन) रहते हैं पर LPG, पेट्रोल एवं डिजेल-इंधन में यह छोटा रहता है। अत: अगर प्लास्टिक के कचरे को चुन कर अलग किया जाय तो इस कचरे के कार्बन बंधन को तोड़ कर हम ईंधन में बदल सकते हैं। इस तरह की प्रतिक्रिया आक्सीजन रहित माध्यम में संभव है कि बड़े अणु वाले पॉलीमर को कम अणु भार वाले टुकड़ों में बाँट दें।

सामग्री : प्लास्टिक थैली, टूटी हुई बाल्टी एवं कुर्सियाँ, PVC पाइप, CD's, कम्प्यूटर की बोर्ड एवं दूसरे इलेक्ट्रोनिक कचरे।

1 kg प्लास्टिक से उत्पादन

अंतिम उत्पाद का नाम	मात्रा	उपयोग करने वाले
द्रव हाइड्रोकार्बन	600 – 800 gm	कृषि पंप, D. G. Sets., ब्यालर-इंधन, मेरीन ईंधन रिफाइनरी में डाले जाने वाले तेल, इंधन-तेल।
कोक	70 – 100 gm	नजदीक के उद्योग जो LPG का उपयोग करते हैं, घरेलु उपयोग।
गैस	2.5 विद्युत इकाई के बराबर	ताप विद्युत संयंत्र, धातु कर्म उद्योग

लाभ :

- ★ कचरे का 100% नये मूल्य के उत्पाद में परिणत हो जाता है।
- ★ प्लास्टिक कचरे की समस्या का हल, तथा यह वैश्विक आर्थिक स्वरूप में बदलाव ला सकता है।
- ★ कचरे को साफ करना या अलग-अलग करने की जरूरत नहीं है।
- ★ एक जगह से दूसरी जगह आसानी से ले जाया जा सकता है।
- ★ जो ईंधन बनता है उसके सल्फर का मान .002 ppm से कम है।
- ★ द्रवीय सामग्री पर्यावरण में नहीं फैलता है।
- ★ अंतिम आसवित द्रव की गुणवत्ता उच्च रहती है - यह सल्फर हटाया हुआ कच्चे तेल के बराबर है।

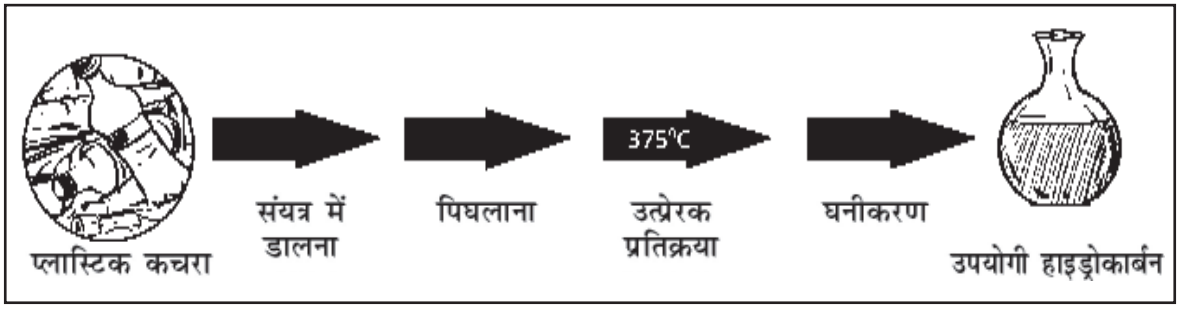

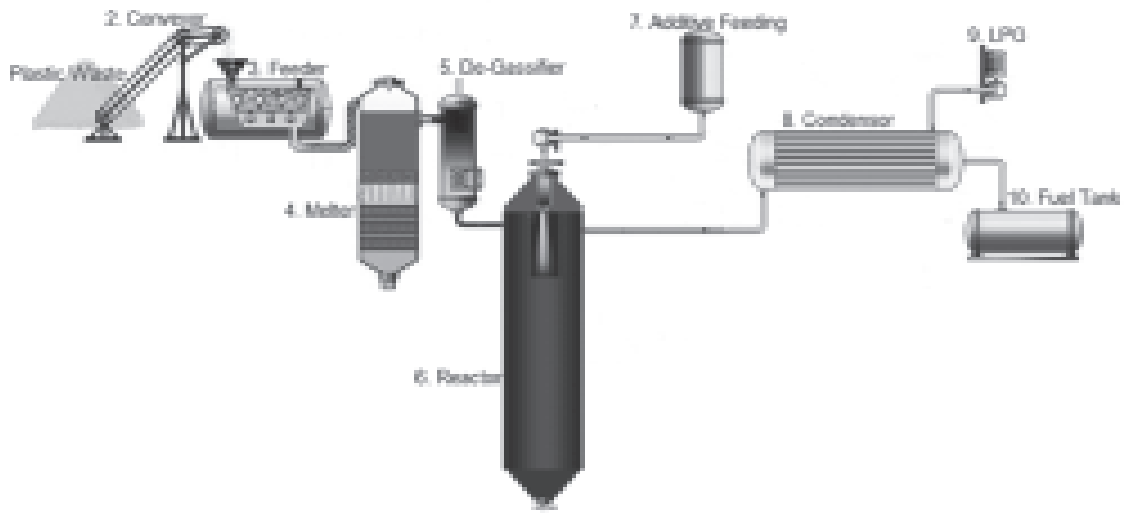

जदगांवकर विधि

कचरा प्लास्टिक से बहुमूल्य हाइड्रो कार्बन बनाना

Source : http://www.ipiindia.org/recycling/intem/plastic-fuel-alka-zadgaonkar-pdf

2. **कोयम्बेडु थोक बाजार में बायो-मिथेनेशन संयंत्र –**

कोयम्बेडु के थोक बाजार (चेन्नई, तमिलनाडु) में बायो-मिथेनेशन संयंत्र लगाया गया है–जो एक राष्ट्रीय स्तर का अनोखा प्रदर्शन है जिसमें जैविक कचरे (जो कि बाजार की गतिविधि से उत्पन्न होता है) का उपयोग विद्युत ऊर्जा उत्पादन हेतु किया जा रहा है।

यह परियोजना चेन्नई शहरी विकास प्राधिकार एवं गैर पारंपरिक ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार की संयुक्त गतिविधि है। यह संयंत्र प्रतिदिन 30 टन जैविक कचरा लेकर औसतन 2375 M^3 गैस बनाता है–इसकी विधि Bio Gas Induced Mixing Arrangement (BIMA digester) पर आधारित है तथा इससे 5000 ईकाई विद्युत ऊर्जा प्रति दिन उत्पादित हो रही है। यह ऊर्जा तमिलनाडु विद्युत बोर्ड के ग्रिड में प्रवाहित की जाती है। यह संयंत्र 4 सिंतबर 2005 से ही चालू है।

<Source : *http://www.cmdachennai.gov.in/mmc.html*>

3. पर्यावरण शिक्षा केन्द्र (CEE) द्वारा संचालित प्लास्टिक पुनर्चक्रीकरण इकाई –

प्लास्टिक हमारे पर्यावरण में नहीं पहुँचे उसके लिए पुनर्चक्रीकरण विधि अपनाई जाती है। CEE ने एक 'polyloom' करघा विकसित किया है–जिससे प्लास्टिक से बुनकर विभिन्न उपयोगी सामग्री बनाई जाती है। इससे प्लास्टिक की थैलियाँ पुनर्चक्रीकृत हो जाती हैं। प्लास्टिक से बुनी हुई विभिन्न स्वरूप का कपड़ा एवं उससे बने झोले, पाउचेज, बोतल रखने का बैग इत्यादि बनाया जाता है।

स्रोत : *Zero Waste System–booklet published by Centre for Environment Education (CEE)*

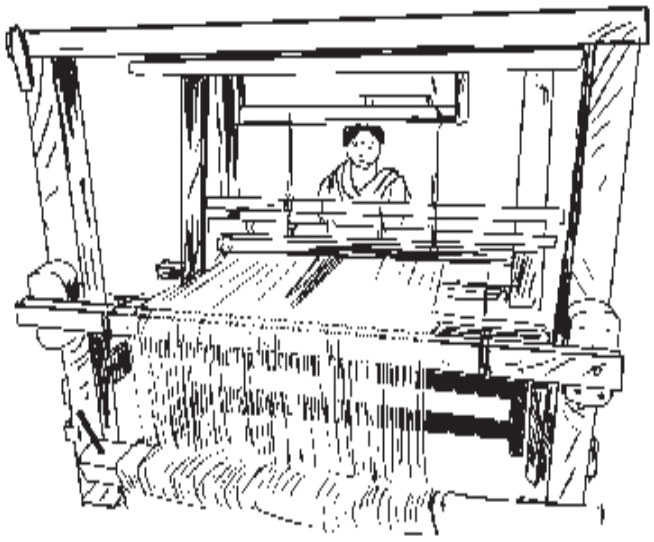

3.9 परियोजना विचार :

परियोजना संख्या-1

मध्याह्न भोजन से बचे हुए भोज्य-सामग्री को पशु-प्रोटीन में बदलना :

भूमिका–

देश के बहुत सारे विद्यालयों में बच्चों को मध्याह्न भोजन दिया जाता है। जितना खाना तैयार होता है उसका 10 से 15% प्रतिशत बर्बाद होता है। भारत जैसे देश में जहाँ की आबादी का अच्छा प्रतिशत कुपोषण या अल्पपोषण

या इससे जुड़ी बीमारियों का शिकार है–यह बचा हुआ खाना जो कि कचरे जैसा फेंक दिया जाता है उसका पुर्नउपयोग हम पशु के भोजन के रूप में कर सकते हैं–जिससे यह फिर प्रोटीन के स्रोत के रूप में हमें प्राप्त होंगे तथा कचरे के सड़ने एवं पर्यावरण प्रदूषण की जगह हमें सकारात्मक प्रभाव उपलब्ध होगा। इसलिए विद्यालय के आस-पास हरित एवं स्वच्छ पर्यावरण पाने के लिए इस बचे हुए भोजन का सक्षम उपयोग कर सकते हैं। इस अध्ययन की योजना में कुछ घरेलु जानवर के भोजन के रूप में उपयोग कर हम गरीब लोगों के लिए पशु-प्रोटीन का उत्पादन कर सकते हैं।

हमारे समुदाय के बहुत से अंग गरीबी रेखा से नीचे की (BPL) श्रेणी के हैं तथा उनके लिए सूअर पालना ही आजीविका है अत: इस घरेलु पशु को इस अध्ययन में लिया जा सकता है।

अवधारणा–

बचा हुआ अपशिष्ट भोज्य सामग्री की मदद से पशुओं का विकास एवं भार में बढ़ोतरी तथा इससे पशु प्रोटीन प्राप्त करना।

लक्ष्य–

1) प्रायोगिक पशु के विकास एवं शारीरिक भार के विकास दर पर विभिन्न भोजन के प्रभाव का अध्ययन।
2) पशु के भोजन सामग्री में उपलब्ध पौष्टिक मूल्य का तुलनात्मक अध्ययन।

विधि–

पायदान-I :

(i) मध्याह्न भोजन से बचे हुये भोज्य-सामग्री का प्रकार एवं मात्रा का लगभग 1 महीने तक की सूची बनाना। (छुट्टी के दिन को छोड़कर)
(ii) स्थानीय पशुपालक से पशु के सामान्य आहार का प्रकार एवं मात्रा के बारे में सूचना एकत्र करना।
(iii) पशु के भोजन पर खर्च / प्रतिमाह निकालना।
(iv) पशुओं के सामान्य विकास हेतु भोजन-सामग्री / प्रति पशु का आकलन।
(v) दोनों प्रकार के भोजन-अपशिष्ट एवं सामान्य आहार का पोषण मूल्य निकालना (किसी प्रयोगशाला की सहायता से)

पायदान-II :

घरेलू पशु (सूअर उसके बच्चे) जिन्हें प्रयोग हेतु लिया गया है।

सामग्री–

(i) एक ही प्रजाति के 15 सूअर (लगभग समान उम्र के)।

(ii) 4 बाड़ा (2.5 मी० × 105 मी०) बांस के खपचियों से बनाना जो कि सुरक्षित क्षेत्र में हो (विद्यालय के परिसर दीवार के अंदर)।

(iii) भोजन सामग्री।

(iv) ट्रे (4 की सख्या में)- एक बाड़ा में एक।

(v) 4 - पानी का बर्तन।

(vi) मापने वाला फीता।

(vii) प्लास्टिक का टैग।

(viii) नोटबुक, कलम इत्यादि।

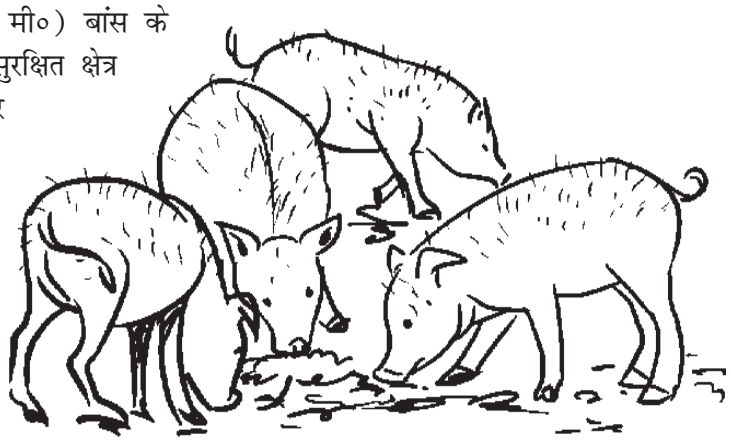

पायदान-III :

(a) अध्ययन हेतु 15 की संख्या में जानवरों को 5 समूह में बांट दें–एक समूह में 3 पशु।

(b) इन समूहों को चिन्ह A, B, C, D, ... दें।

★ समूह-A — मध्याह्न भोजन से अपशिष्ट खाना खायेंगे।

★ समूह-B — पशुपालक द्वारा सामान्य भोजन दिया जायेगा।

★ समूह-C — कंट्रोल ग्रुप है जो कि खुले क्षेत्र में अपना खाने का इंतजाम खुद करेंगे।

अशुद्धि कम करने के लिए हर समूह के सदस्य को $P_1P_2P_3$ चिन्ह दें।

(c) चारों बाड़े को बिना किसी वरीयता के A_1, A_2, B_1, B_2 लेबल लगा दें।

(d) उपरोक्त उपचार को दुहरायें।

(**नोट :** किसी प्रयोग में अशुद्धि कम करने के लिए वह दुबारा या तीन बार किया जाता है। न्यूनतम 3 अवलोकन तो लेना ही चाहिए, पर बच्चों को देखते हुए यहाँ दो बार का उदाहरण दिया गया है)।

पायदान-IV :

(a) शुरू में बच्चे 3 पशु को एक बाड़े में रखेंगे तथा बाकी 3 को कंट्रोल के रूप में बाहर छोड़ देंगे।

(b) 4-5 दिन तक सभी बाड़े वाले पशुओं को पशुपालक का खाना देंगे जिससे वे इसके आदी हो जायें या नये स्थान पर व्यवस्थित हो जायें।

(c) बच्चे पशुओं का मोटाई एवं शारीरिक लंबाई (गले से पूँछ की जड़ तक) की माप लेकर सूचीबद्ध करेंगे।

(**सावधानी :** माप लेते समय कोई पशु चिकित्सक या पशुपालक को साथ रखें जिससे पशु को पकड़ने में आसानी हो और बच्चों को कोई हानि न पहुँचे)

पायदान-VI :

(i) 5 दिनों तक (सोमवार से शुक्रवार) उपचार के आधार पर खाना दें।

(ii) अगले सोमवार फिर माप लें, इसके बाद फिर 5 दिन उपचार का भोजन दें।

(iii) हरेक 5 दिन के बाद उसी तरह का मापन करें एवं उसी तरह की सारणी बनायें।

पायदान-VII :

(i) सारणी 1 एवं 2 के सूचना अनुसार शरीर-भार निकालें ।W = (G^2 × L) / 69.3 in kg; W – शरीर का भार kg में; G – मुटाई मीटर में; L – ल० मीटर में; 69.3 – FPS में Conversion factor है ।

(ii) कंट्रोल की तुलना में शारीरिक विकास की तुलना करें ।

(iii) आंकड़ों में साधारण सांख्यिकी एवं गणित का उपयोग करें ।

(iv) आकलन के बाद के मान को सारणी में निरूपित करें, उसके बाद औसत मान लिखें ।

(v) शरीर भार को प्रोटीन में परिवर्तित करें– (Indian Council of Medical Research का WHO के प्रमाणिक गुणांक का उपयोग करें) ।

(vi) आंकड़ों का विश्लेषण साधारण सांख्यिकी के आधार पर करें ।

निष्कर्ष–

1) आंकड़ों के विश्लेषण के बाद इस तरह के निष्कर्ष मिल सकते हैं–

क्या अपशिष्ट भोजन सामग्री पशुपालक के आहार की तुलना में पोषण के परिप्रेक्ष्य में बेहतर था और इससे पशु के विकास में बढ़ोतरी हुई–जिससे समुदाय की प्रोटीन उपलब्धता पर असर पड़ेगा ।

2) बचा हुआ मध्याह्न भोजन जो कि विद्यालय के पास फेंका जाता था, वह मच्छरों का प्रजनन स्थल बन गया था और इस क्रिया से हम उसकी एवज में पशु-प्रोटीन पा सकते हैं ।

सारणी-1 : पशुओं के मुटाई (मीटर में) की प्रथम सूचना

Treatment		P1	P2	P3	औसत
	A1				
A	A2				
	औसत				A का औसत
	B1				
B	B2				
	औसत				B का औसत
C	C				C का औसत

सारणी-2 : पशुओं की शरीर-लंबाई (मीटर में) का प्रथम मान

Treatment		P1	P2	P3	औसत
	A1				
A	A2				
	औसत				A का औसत
	B1				
B	B2				
	औसत				B का औसत
C	C				C का औसत

सारणी-3 : शरीर-भार की प्रारंभिक सूचना

Treatment		P1	P2	P3	औसत
	A1				
A	A2				
	औसत				A का औसत
	B1				
B	B2				
	औसत				B का औसत
C	C				C का औसत

परियोजना संख्या-2

कचरे के जैविक सामग्री से कम्पोस्ट बनाना :

प्लास्टिक थैली में बंद भोजन-अपशिष्ट जो कि कचरा के भूमि पर फेंका जाता है वह पूरी तरह विघटित नहीं हो पाता है। इससे मीथेन का उत्सर्जन होता है तथा मीथेन एक हरित गृह गैस है, जो वैश्विक तापन में मदद करता है तथा एक द्रव 'leacheate' मिलता है जो हमारे जल वितरण प्रणाली को प्रदूषित करता है। पर हमारे रसोई घर का कचरे का कंपोस्टिंग करना आसान है तथा इसमें समय भी कम लगता है। अगर हम सही प्रणाली का उपयोग करें तो यह जगह नहीं घेरता, मेहनत नहीं करनी पड़ती।

यह कंपोस्ट हमारे बगीचे की मिट्टी या गमले के पौध के लिए बहुमूल्य है। यह अपने आप में मिट्टी के लिए सही प्राकृतिक भोजन है। यह मिट्टी की संरचना को बेहतर बनाता है, मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ाता है तथा मिट्टी को स्वस्थ रखता है।

कंपोस्टिंग विधि में जैविक सामग्री (भोजन-कचरा) वायु एवं जल की उपस्थिति में सूक्ष्मजीव एवं कीड़ों द्वारा अपने अवयवों में टूटता है। यह जैवनिम्नीकरण क्रिया से बना कंपोस्ट है तथा यह पौधों को उपयोगी पोषण प्रदान कर स्वस्थ मिट्टी बनाता है।

कंपोस्टिंग में उपयोग हेतु सामग्रियाँ–

- ★ सब्जियों एवं फलों के छिलके ।
- ★ चाय की पत्तियाँ एवं कॉफी का चूरा।
- ★ अंडे का छिलका।
- ★ घास (कटा हुआ) एवं पत्तियाँ।
- ★ कागज, कागज का तौलिया, अखबार का कागज।
- ★ non-coniferous पेड़ की पत्तियाँ एवं झाड़ियाँ।
- ★ काठ का बुरादा।
- ★ पुआल, सूखे डंठल, उन, पालतू जानवर के बिछावन।
- ★ निर्वात सफाई पम्प का धूल।

नोट : उपरोक्त में मीट, मछली एवं पका हुआ खाना, खर-पतवार के बीज, बीमार पौधों की सामग्री, डायपर (फेंकने वाले), रंगीन/चमकदार अखबार एवं कोयले का राख न मिलायें। खट्टे (Citrus) फल एवं प्याज के छिलके (इससे अम्लीय अवस्था बनती है), पौधों के बीज, मीट, मछली, दूध की सामग्री, कुत्ते/बिल्ली का मल, टिसु पेपर, बीमार पौधे एवं कोई भी चीज ज्यादा न डालें।

कंपोस्ट बनाने वाले सूक्ष्मजीव निम्नलिखित चार सामग्रियों का उपयोग करते हैं–

1) कार्बन जो कि सूखे पत्ते, लकड़ी का छिलका, बुरादा, कागज से मिलता है।
2) नाइट्रोजन जो फल एवं सब्जियों चाय पत्ती, कॉफी पाउडर के कचरे से मिलता है।
3) ऑक्सीजन जो हवा से मिलता है।
4) जल जो सही मात्रा में दिया गया है।

अपने रसोईघर का कचरा-कंपोस्ट करें :

1) एक A बरतन में खाद्य सामग्री/अपशिष्ट इकट्ठा करें। (जैसे सब्जियों का छिलका फलों का छिलका, अपशिष्ट भोजन कम मात्रा में)
2) सूखे जैविक सामग्री (सूखी पत्तियाँ, लकड़ी का बुरादा) एक अलग बरतन में लें।
3) एक मिट्टी का बरतन या बाल्टी लें और उसमें 4-5 जगह विभिन्न ऊँचाई पर छेद कर दें, जिससे उसमें हवा जा सके।
4) बरतन के नीचे तल पर मिट्टी की परत बिछाएँ।
5) अब भोज्य सामग्री का कचरा डालना शुरू करें तथा भींगे कचरे (खाद्य सामग्री, सब्जी, फल छिलका) और सूखे कचरे (पुआल, काठ का बुरादा, सूखे पत्ते) को बारी-बारी से लेयर करें।
6) इस बरतन को ढँक दें, एक प्लास्टिक शीट से या काठ के तख्ते से जिससे ताप एवं जलवाष्प उसमें रहे।

कुछ दिनों के अंतराल पर एक बेलचा से कचरे को थोड़ा अस्त-व्यस्त कर दें (अगर आपको लगता है कि यह बहुत सूखा है तो कुछ पानी छिड़क दें)। दो से तीन महीने के अंदर में, आपका कचरा कंपोस्ट बनाना शुरू कर देगा जो कि सूखा होगा, गहरा भूरा रंग होगा तथा टुकड़े-टुकड़े होने लायक रहेगा और उसमें मिट्टी की महक होगी।

अगर हम अपना कचरा अलग-अलग कर दें तथा पुर्नचक्रीकरण करें तो 4 व्यक्तियों के परिवार के द्वारा 1000 किलोग्राम कचरा (प्रतिवर्ष) को हम (100 किलोग्राम प्रतिवर्ष) तक कम कर सकते हैं।

1) हम आकलन कर सकते हैं कि कितनी मात्रा में कंपोस्ट उत्पादित होगा तथा कितने जैविक सामग्री का उपयोग होगा।
2) सक्षम कंपोस्ट बनाने के लिए कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात (C : N) को 30 : 1 से 40 : 1 के बीच में रहना चाहिए। कंपोस्ट के (C : N) अनुपात को मिट्टी जांच किट के द्वारा माप सकते हैं।
3) अंतिम उत्पाद (कंपोस्ट) में सूक्ष्मजीवों के विभिन्न प्रकार एवं उनकी संख्या चिन्हित की जा सकती है। इसे प्रतिशत या अन्य उपयुक्त रूप में बदला जा सकता है।

परियोजना-3

घरेलू कीड़ों से बचने हेतु आलमारी में बिछाने हेतु पुर्नचक्रित कागज में प्राकृतिक मिलावटी-सामग्री का उपयोग :

भूमिका–

यह हर घर में देखा जाता है कि तेलचट्टा, सिल्वर फिश, चीटीयाँ, फतिंगा इत्यादि कीड़ों का आक्रमण होते रहता है। इस तरह के कीट से कोई परिवार मुक्त नहीं है। शहरी घनी आबादी वाले क्षेत्रों में यह समस्या गहरी हो जाती है, जैसे अपार्टमेंट में तथा वैसे घरों में भी जहाँ खुली जमीन भी है। बाजार में उपलब्ध कीट-नियंत्रण हेतु रसायनों की क्षमता संदेह के घेरे में रहता है। वे जहरीली होती हैं तथा अगर घरेलु बर्तनों के संपर्क में आ जाये तो स्वास्थ्य पर खतरा उपस्थित करती हैं या कभी-कभी खाद्य सामग्री, कपड़े या लिखने-पढ़ने की सामग्री जो खुले आलमारी में रखा है या बंद कैबिनेट में भी हैं वे भी दूषित हो जाते हैं।

पारंपरिक तौर पर भारतीय घरों में पौधा-आधारित कीट-नियंत्रक का उपयोग किया जाता रहा है। उदाहरणार्थ-नीम के पत्तों को आलमारी में कागज बिछाने के नीचे रखा जाता है, या कपड़े की आलमारी में रखा जाता है। नीम तथा लवंग को कपड़े में बांध कर ड्रावर आदि में रखते हैं, चावल एवं अनाज के बर्तन

में भी रखते हैं। इनके प्राकृतिक तेलों का भी उपयोग ड्रावर के कोने में लगा कर कीट भगाने के रूप में करते हैं। हालाँकि इनकी क्षमता वैज्ञानिक ढंग से प्रामाणिक नहीं की जाती है। इस तरह के कीड़ों का फैलाव रोकना एक वैश्विक चुनौती है।

लक्ष्य–

1) साधारणतया उपलब्ध जड़ी-बूटी एवं प्राकृतिक कचरा जैसे नीम के पत्तों (*Azadirachta Indica*) का उपयोग कर अगर पुर्नचक्रित कागज बनाया जाय एवं इसका उपयोग (आलमीरा के सेल्फ पर किया जाय)।
2) हर्बल कागज के उपयोग कर घरेलु पेस्ट जैसे चींटी, तिलचट्टा एवं सिल्वर फिश पर इसके प्रभाव की जांच करना।

आवश्यक सामग्री–

अपशिष्ट कागज के नोटबुक, रद्दी कागज, बाल्टी, गर्म पानी, अरारोट का स्टार्च, फिटकिरी पाउडर, मापक चम्मच, रसोई के मिक्सर ग्राईंडर, कैंची, भारमापक, तार की जाली (60 cm × 60 cm), जो लकड़ी में लगाई गई है (चलनी) (60 × 60) cm^2, मलमल का कपड़ा।

विधि–

(क) नीम कागज बनाना–

1) उपयोग किए गये कागज, रद्दी कागज को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट दें इन्हें एक बाल्टी में रखें, इसमें पानी डालकर मिलायें जिससे भींग जायें। इसे रात भर पानी में फुलने के लिए छोड़ दें।
2) भींगे कागज को मिक्सर ग्राईंडर में पीस दें तथा उसकी लुगदी (pulp) बना लें। लगभग 600 ग्राम कागज की लुगदी से 6 शीट पुर्नचक्रित कागज तैयार होगा।
3) नीम के पत्तों को लें तथा इन्हें मिक्सर ग्राईंडर में पीस कर 200 ग्राम की लुगदी बना लें।
4) छः बर्तन लें–जैसे C, A1, A2, A3, A4, A5; C – बर्तन कंट्रोल कागज की लुगदी का होगा जिसमें

सामग्री (ग्राम में)	बरतन	A1	A2	A3	A4	A5
कागज की लुगदी	A1	A2	A3	A4	A5	
नीम लुगदी	A1	A2	A3	A4	A5	
अरारोट का स्टार्च	A1	A2	A3	A4	A5	
फिटकिरी पाउडर	A1	A2	A3	A4	A5	

नीम नहीं मिलाई गई है। सभी में घटक निम्नलिखित तरीके से मिला दें।

अब हमारे पास कागज बनाने का mix है जिसमें 5 विभिन्न संपृक्तता में सामग्रियाँ दी गई है।

5) तार की जाली का छलनी लें तथा C – बरतन के लुगदी को इस पर बराबर से फैला दें। इसके लिए एक बड़े नाद में पानी लेकर समरूप ढंग से फैलायें। एक मलमल के कपड़े का टुकड़ा लें जो कि छलनी से थोड़ा बड़ा हो। जब अतिरिक्त जल निकल जाये तो कागज के तह को कपड़े के साथ उठा लें। इसे प्लाई बोर्ड या टेबल पर रख दें तथा एक लकड़ी के तख्ते से दबायें जिससे सतह बराबर हो जाय इसे बोर्ड के अंदर से हटा कर सूखने के लिए अलगनी पर लगा दें। जब यह पूरी तरह सूख

जाय तो मलमल का कपड़ा हटा दें।

6) उपरोक्त विधि को दुहरायें–बाकी लुगदी के लिये भी जिनमें नीम पेस्ट मिलाई गई है। ऐसा हम एक शीट के उपर दूसरे को रख कर मलमल के टुकड़े की लाइनिंग के साथ दबा कर अतिरिक्त पानी को निकाल सकते हैं तथा सुखा सकते हैं।

7) जब सूख जाय तो उनमें चिन्ह लगा दें जैसे, C, A1, A2, A3, A4, A5। किनारों को कैंची से काट

सारणी-1 : नीम की पत्ती मिलाये गये पुर्नचक्रित कागज का कीड़े (चीटियों) पर प्रभाव

चिन्ह	% मिलाई गई सामग्री	कीड़ों द्वारा कागज पर बिताया समय (मिनट में)									
		दिन 1	दिन 2	दिन 3	दिन 4	दिन 5	दिन 6	दिन 7	दिन 8	दिन 9	दिन 10
C											
A1											
A2											
A3											
A4											
A5											

कर बराबर आकार का बना दें।

(ख) घरेलू कीड़ों पर इनके प्रभाव की जाँच करना–

1) घरेलू कीड़ों को पकड़ कर एक बोतल में रख दें।

2) टेबुल या जमीन पर शीट-C को फैला दें। कागज पर गिन कर कीड़ों को डालें-इनके गतिविधि का अवलोकन लें तथा कागज पर यह कितना समय रहते हैं, नोट करें। उनकी गतिशीलता को भी नोट करें, इस तरह कीड़ों द्वारा 10 दिन तक का अवलोकन लें।

3) उनकी गतिशीलता का वीडियो भी बना सकते हैं।

4) उपरोक्त क्रिया को हर कागज A1, A2, A3, A4, A5 पर दुहरायें।

5) यह प्रयोग ज्यादा समय अंतराल के लिए भी किया जा सकता है जिससे पता चलेगा कि मिलाई गई सामग्री कितने दिनों तक प्रभावी रहती है।

6) दूसरे कीड़ों से प्रयोग को दुहरायें। सारणी में अवलोकन का रिकार्ड रखें–

(ग) दूसरी जड़ी-बूटियों मिलाने का प्रभाव :

उपरोक्त प्रयोग को अन्य जड़ी-बूटियों को मिलाकर देखें जैसे–पुदीना के पत्ते (*Mentha*), Ganjini/ Malabar/Guchch (*Citroncella* घास), हल्दी, turmeric (*Curcuma Longa*), संतरा (*Citrus reticulata*) के छिलके, नींबू (*Citrus Lemon*) के छिलके, खीरा (*Cucumis Sativus*) के छिलके।

अपने अवलोकनों पर उपरोक्त प्रकार की सारणी में अंकित करें तथा विभिन्न कीड़ों के लिए सारणी बनाएँ।

निष्कर्ष–

उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष लें कि कौन-सा जड़ी-बूटी युक्त कागज घरेलु कीड़ों से बचने के लिए सर्वोत्तम है। कुछ निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दें–

(i) हर्बल कागज की विभिन्न कीड़े भगाने की क्षमता कैसी है ?

(ii) मिलाई गई सामग्री के प्रतिशत बदलने का क्या प्रभाव है ?
(iii) कागज (हर्बल) अपना प्रभाव कितने दिनों तक रखता है ?
(iv) क्या एक सामग्री सभी प्रकार के कीट पर एक समान प्रभाव डालते हैं ?
(v) किसी खास कीड़े के लिए कौन-सा हर्बल पेपर सबसे ज्यादा कारगर है ?
(vi) अगर कागज नहीं बना कर जड़ी-बूटी की गोली बना ली जाये, तो क्या यह उसी प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करते हैं ?

कीट नियंत्रण हेतु प्राकृतिक सामग्रियाँ मिलाकर कागज बनाना

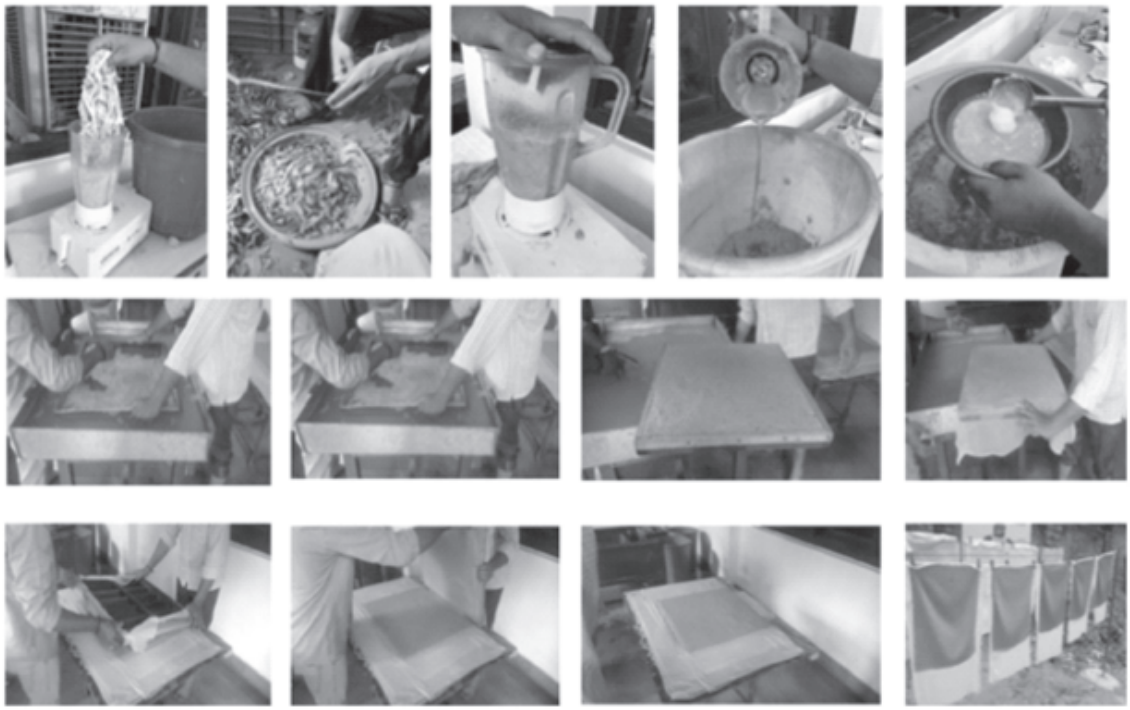

परियोजना-4

बड़े जीवों (केंचुआ) के आबादी घनत्व पर विभिन्न कचरे का (मल्च के रूप में) प्रभाव

भूमिका–

बड़े जीव जैसे केंचुआ किसानों के मित्र रूप में माना जाता है। उनके द्वारा मिट्टी के विकास के साथ-साथ, जैविक पदार्थों का पुर्नचक्रण तथा खाद्य श्रृंखला के अवयवों का निर्माण होता है। 'मल्च' मिट्टी के उपर सतह के रूप में रहता है तथा यह मिट्टी की नमी को संरक्षित करता है, उर्वरा शक्ति एवं स्वास्थ्य बढ़ाता है, खर-पतवार कम करता है। मल्च साधारणतया जैविक स्वभाव का होता है।

लक्ष्य–

1) विभिन्न कचरे की सामग्री को पहचानना/चिन्हित करना जिनका उपयोग मल्च के रूप में किया जा सकता है।
2) विभिन्न सामग्रियों से तैयार मल्च का केंचुआ आबादी के घनत्व पर प्रभाव का अध्ययन।

आवश्यक सामग्री–

कृषि-फार्म या बगीचे में (1m × 1m) का सात भूखंड, रस्सी एवं खूंटे, कचरा-सामग्री जिनका उपयोग मल्च के रूप में करना है, जैसे–नारियल छिलका, फल एवं सब्जी कचरा, पॉलीथीन बैग 1kg प्रति भूखंड, भार मापक तुला, स्पेड, ट्रे।

विधि–

1) प्रयोग हेतु क्षेत्र की पहचान, किचेन गार्डेन, विद्यालय का बगीचा।

2) (1m × 1m) का सात भूखंड लें तथा उनके बीच 1-2 मी० की दूरी रखें।

3) भूखंड का नामकरण C, A_1, A_2, B_1, B_2, D_1, D_2 बिना भेद-भाव के कर दें।

4) C – भूखंड कंट्रोल है जबकि A_1, A_2, B_1, B_2, D_1, D_2 भूखंडों को विभिन्न प्रकार के 'मल्च' से ढंकना है।

5) हरेक उपचार को दो बार करना है (वैसे हमेशा 3 बार प्रयोग दुहराना चाहिए पर बच्चों के सुविधा के लिए हमने दो बार ही रखा है)

6) अब 5 नमूना लें। बेलचा का उपयोग कर 15 cm गहरी मिट्टी खुदाई कर दें तथा सावधानीपूर्वक मिट्टी (जीवों सहित) जमा कर दें।

7) जमा की गई मिट्टी को ट्रे में रखें तथा केंचुओं की संख्या गिन लें।
दी गई सारणी में उनकी संख्या नोट कर लें। गिनने के बाद मिट्टी को फिर भूखंड पर फैला दें।

सारणी-1

केंचुओं के आबादी-घनत्व की प्रथम सूची

नमूना	केंचुओं की संख्या	औसत (केंचुओं की कुल संख्या / नमूनों की संख्या)

8) अब भूखंडों को प्रयोग हेतु तैयार करना है।
भूखंड A_1A_2 में नारियल का रेशा डालें।
भूखंड B_1B_2 में सब्जियों एवं फलों का कचरा डालें।
भूखंड D_1D_2 में टुकड़े किये गये पॉलीथीन डालें।

9) एक महीने के समय में अवलोकन लें। हरेक हफ्ते के बाद मिट्टी का नमूना लें (हरेक भूखंडों से) तथा केंचुए की संख्या गिन लें। अवलोकनों को सारणी-2 में नोट कर लें।

10) अगली क्रिया में आबादी घनत्व की तुलना कंट्रोल समूह C से करेंगे।

11) आंकड़ों को साधारण सांख्यिकी एवं गणित के उपयोग से प्रस्तुत करेंगे।

सारणी-2

उपचार		केंचुआ की संख्या					औसत
		हफ्ता-1	हफ्ता-2	हफ्ता-3	हफ्ता-4	हफ्ता-5	
	A_1						
A	A_2						
	औसत						A का औसत
	B_1						
B	B_2						
	औसत						B का औसत
C							C का औसत

निष्कर्ष –

विश्लेषित आंकड़ों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि विभिन्न 'मल्च' का केंचुओं के आबादी-घनत्व पर प्रभाव पड़ता है या नहीं।

3.10 अन्य परियोजना विचार :

1) पशुओं के गोबर एवं अन्य जैविक इंधन से इंधन प्राप्त करना।
2) इलेक्ट्रोनिक कचरे का निस्तारण।
3) किसी खास क्षेत्र में इलेक्ट्रोनिक सामग्री, जो उपयोग नहीं हो रही है उनको चिन्हित करना, प्रलेखीकरण, वर्गीकरण तथा उनके निस्तारण या पुर्नउपयोग का तरीका निकालना।
4) ठोस कचरे का निस्तारण।
5) गुल (Briquettes) बनाना तथा बिना मिट्टी के पौधे लगाने का क्षमतापूर्ण उपयोग।
6) मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ा कर सिंचाई जल की बरबादी कम करना इसके लिए विभिन्न कचरे का उपयोग जैसे लकड़ी का बुरादा, गुल, धान-पुआल, भूसी, नारियल के रेशे इत्यादि।
7) अपशिष्ट जल का बायो-रेमेडियेशन।
8) नाली का पानी या गंदा पानी से हाइड्रोपोनिकक्स।
9) रसोई के अपशिष्ट जल से वसा, तेल, ग्रीज हटाने का उपचार।
10) पत्ते, फूलों, खर-पतवार के फलों का उपयोग कर प्राकृतिक रंग बनाना।
11) फेंके गये फूलों से उपयोगी सामग्री बनाना।
12) खर-पतवार (weeds) के बीजों से तेल निकालना एवं रोशनी हेतु इनसे लैंप जलाना।
13) मिट्टी में नमी का संरक्षण करना इसके लिए लकड़ी का बुरादा, छिलका, गुल, धान की भूसी, नारियल भूसी, जलकुंभी आदि का कृषि भूमि में उपयोग करना।
14) मशरूम की खेती में पुआल का भूसा के रूप में उपयोग।
15) बैटरी के सूखे सेल के ग्रैफाइट का उपयोग।
16) विभिन्न कचरों से कृषि भूमि की उर्वरता बढ़ाना।
17) बैक्टीरिया का उपयोग कर प्लास्टिक का विघटन।
18) मिट्टी में जल धारण एवं पौधे लगाने हेतु Sponge का उपयोग।
19) निस्तारित कार्डबोर्ड से टाइल, पैनेल-बोर्ड बनाना।
20) टेट्रा पैक एवं प्लास्टिक बोतल कचरे का उपयोग कर टाइल या पैनेल बोर्ड बनाना।
21) जानवरों के शव से खाद बनाना या अन्य उपयोगी सामग्री तैयार करना।
22) कृषि-कचरे से नवाचारी विधि द्वारा उपयोगी सामग्री बनाना।

सर्वेक्षण आधारित परियोजनायें–

1) घरेलु कचरे का औसत परिमाण निकालना इस 'अवलोकन' को ग्राम, ब्लौक, जिले के आधार पर आकलन करना।

2) समाज में पैकेट बनाने के तरीकों का अध्ययन तथा इस गतिविधि से निकले कचरे का आकलन।

3) कचरा–भूमि एवं कचरा–स्थल के स्थान के वायु–गुणवत्ता का अनुश्रवण।

4) कचरा–भूमि क्षेत्र के आसपास के जीवों/सूक्ष्मजीवों, जानवरों के विविधता का अध्ययन एवं इनका मच्छरों से पैदा हुए बीमारियों से संबंध।

5) कचरा फेंकने के स्थान के द्वारा जल–प्रदूषण प्रभाव एवं सामुदायिक स्वास्थ्य पर प्रभाव।

संदर्भ सामग्री–

http://www.in.undp.org/content/india/en/home/ourwork/environmentandenergy/successstories/from-waste-to-wealth.html?cq_ck=1497002606082

Information Sources :

https://www.engineersgarage.com/blogs/plastic-road-revolutionary-concept-build-roads (Retrieved on 27 June 2017)

http://www.ipiindia.org/recycling/item/plastic-fuel-alka-zadgaonkar-pdf (Retrieved on 27 June 2017)

http://www.thehindu.com/features/homes-and-gardens/koyambedus-biomethanation-plantwill-be-the-first-in-the-country-to-supply-biogas-to-houses-in-the-neighbourhood/article6990042.ece (Retrieved on 25 June 2017)

https://pearl.niua.org/sites/default/files/books/GP-IN3_SWM.pdf

http://cdn.downtoearth.org.in/library/0.89650700_1463994246_sample-pages.pdf (Retrieved on 25 June 2017)

http://www.assocham.org/newsdetail.php?id=5642 (Retrieved on 25 June 2017)

http://cpcb.nic.in/NGT-orderdatedFeb-05-2015.pdf (Retrieved on 25 June 2017)

http://ec.europa.eu/environment/waste/weee/index_en.htm (Retrieved on 25 June 2017)

http://www.dtsc.ca.gov/HazardousWaste/upload/HWMP_DefiningHW111.pdf (Retrieved on 25 June 2017)

http://www.gcpcenvis.nic.in/PDF/Towards_Resource_Efficient_Economies_in_Asia_and_Pacific.pdf (Retrieved on 25 June 2017)

उपविषय–IV

समाज, संस्कृति एवं आजीविका

समाज, संस्कृति एवं आजीविका

4.1 प्रस्तावना :

समाज, मानव के सम्पूर्ण जटिल संबंधों को प्रदर्शित करता है जो उसकी क्रियाओं से विकसित होता है। इसे निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है–"समाज व्यक्तियों का वह समूह है जो कुछ संबंधों एवं व्यवहार के आधार पर एक-दूसरे से सम्बद्ध है या जो दूसरे जीव समूहों से इस आधार पर भिन्नता प्रदर्शित करता है कि अन्य जीव ऐसे समूह बनाकर नहीं रहते हैं या मानव के समान सामाजिक व्यवहार एवं आचरण नहीं करते हैं।"

यह जटिल रूप से संगठित समुदाय या संस्थानों को भी प्रदर्शित करता है। समाज को हम मनुष्यों के ऐसे समूह के रूप में भी वर्णित कर सकते हैं, जो आपस में समान संस्कृति के आधार पर भी एक दूसरे के साथ आचार एवं व्यवहार करते हैं। संस्कृति समान अवधारणाओं, परम्पराओं एवं आचरणों का प्रारूप है। इसके साथ ही जीवन शैली को भी प्रदर्शित करता है जो किसी विशिष्ट व्यक्ति के द्वारा समाज में अपनाया जाता है।

समाज के पाँच मूलभूत अवयव हैं–आबादी, जनसमूह, संस्कृति, उत्पादित पदार्थ, सामाजिक संगठन एवं सामाजिक संस्थाएँ।

यहाँ आबादी का तात्पर्य व्यक्तियों के संख्यात्मक समूह से है। इसके अन्तर्गत व्यक्तियों का उम्र, लिंग, कौशल, शिक्षा, पेशा इत्यादि है।

पदार्थ उत्पाद के अन्तर्गत मनुष्य की संपत्ति एवं सामग्री शामिल है। सामाजिक संगठन व्यक्तियों के बीच पारस्परिक संबंधों के प्रारूप या व्यक्तियों के समूह या समाजिक समूहों के पारस्परिक संबंधों को प्रदर्शित करता है। सामाजिक समूह का तात्पर्य दो या अधिक व्यक्तियों के बीच एकता की भावना से है।

सामाजिक संस्थाएँ वह प्रणाली है जिसमें व्यक्तियों का क्रिया-कलाप, उत्तरदायित्व, अधिकार, पारितोषिक के संरक्षण के लिए उत्तरदायी है।

संस्कृति, जीवन मूल्यों या सामाजिक मूल्यों, आचार व्यवहार, अवधारणा (विश्वास) ज्ञान, भाषा, प्रतीकों को प्रदर्शित करता है, जो सामाजिक जीवन हेतु प्रत्येक व्यक्ति के लिए वांछनीय या अपरिहार्य है।

नियम (कायदा) वह आदर्श मानक है, जिससे समाज के सभी सदस्यों के बीच वांछित व्यवहार को नियंत्रित किया जाता है। या यह जनसमूह अथवा व्यक्ति के द्वारा अपनाया जाने वाला स्थापित जीवन मूल्यों की दार्शनिक अवधारणा है। ज्ञान-जानकारी, कौशल कुछ अवधारणाओं की समझ, क्रिया प्रणाली संबंधों को दर्शाता है।

भाषा–व्यक्तियों के बीच संवाद एवं विचार संचार का माध्यम है। प्रतीक (Symbol)-विशिष्ट अवधारणाओं एवं विचार धाराओं को व्यक्त करता है। आजीविका (Livelihood)-जीवन निर्वाह हेतु वे आवश्यक कार्य जो मानव की मूलभूत आवश्यकताओं को पूर्ण करते हैं, जैसे खाद्य सुरक्षा, आश्रय, वस्त्र, स्वास्थ्य एवं शिक्षा। विशेष अर्थों में हम कह सकते हैं कि आजीविका के अन्तर्गत जीवन यापन की वे सारी क्षमताएँ शामिल हैं जो मानव को इसके लिए आवश्यक सम्पत्ति अर्जित करने में सहायक है।

एक टिकाऊ आजीविका वह है, जो सभी प्रकार के वर्त्तमान एवं भविष्य में आने वाले दबाव एवं आघात को सहने में सक्षम हो, जो जीवन की सभी आवश्यकताओं को पूर्त्ति करने में तत्पर हो एवम् जिसमें प्राकृतिक संपदा का आधार भी उपलब्ध एवं सुरक्षित हो।

समाज, संस्कृति एवं आजीविका–मानव, मुख्यतः जिस वातावरण मे रहता है, उससे भी सम्बद्ध है। मानव जिस क्षेत्र विशेष में रहता है, वहाँ का पर्यावरण स्वरूप, वहाँ के सामाजिक एवं सांस्कृतिक व्यवहार एवं आचरण पर निर्भर करता है। सामाजिक समूह के
निर्माण एवं उसका संरचनागत प्रारूप क्षेत्र-दर-क्षेत्र, पारिस्थितिकीय संदर्भ में परिवर्तनीय होता है।

उदाहरणार्थ, एक लघु जाति, गोत्र, कुटुम्ब (clan) आधारित जन समूह लोगों की वह लघु संख्या है, जो एक ही मूल, लघु क्षेत्र एवं जनसंख्या घनत्व धारण करते हैं। इस संदर्भ में, प्राकृतिक संपदाओं पर मालिकाना हक भी परिवर्त्तनीय होता है। प्राकृतिक संपदा की अधिकांश मात्रा गाँव, समुदाय या कुटुम्ब के अधिकार क्षेत्र में रहता है। ग्रामीण वन, सामुदायिक वन, कुटुम्ब वन जो भारत के हिमालयी क्षेत्र में विद्यमान हैं, इसके कुछ सामान्य उदाहरण हैं। इसके विपरीत, वह क्षेत्र विशेष, जहाँ जनसंख्या घनत्व अधिक है, वहाँ का सामाजिक संरचना प्रारूप पृथक प्रकार का होता है।

उदाहणार्थ, गंगा-ब्रह्मपुत्र के बेसीन क्षेत्र में जहाँ सघन आबादी है, वहाँ के गाँवों का सामाजिक प्रणाली तात्कालीन समसामयिक सरकारी प्रणाली के द्वारा निर्धारित होता है। परिणामतः कोई भी विशिष्ट संस्थागत प्रणाली नहीं विकसित हो पायी क्योंकि संसाधन व्यक्तिगत स्वामित्व के नियंत्रण में रहता है।

प्राकृतिक संसाधनों में कमी एवं अन्य पर्यावरणीय तनाव (दबाव) जैसे सुखाड़, बाढ़, आँधी इत्यादि विभिन्न सामाजिक प्रणाली एवं संस्थाओं को जैसे कि रीति-रिवाज आजीविका के तरीकों को प्रभावित करता है। साथ ही लचीलापन, आपदा संकट में कमी या निम्नीकरण हेतु रणनीति बनाने में मददगार हो सकता है।

कई जल की कमी वाले क्षेत्रों में जल संरक्षण एवं प्रबंधन हेतु सामुदायिक व्यवस्था आधारित सामाजिक संस्थाएँ हैं जो जल संसाधन का सामुदायिक रूप से प्रबंधन करते है–यथा, पारंपरिक डाँड़ व्यवस्था समिति जो असम के उत्तरी मैदानी इलाके में "बोडो" जनजाति समुदाय में प्रचलित है। आधुनिक "जल पंचायत (पानी पंचायत) प्रणाली स्वयंसेवी संगठन के द्वारा एक पहल के रूप में भूमिगत जल प्रबंधन हेतु विकसित किया गया है। इसी तरह पारिस्थितिकी विविधता के संदर्भ के अनुरुप आजीविका की प्रक्रिया भी बदलती रहती है।

उदाहरणार्थ, जम्मू एवं कश्मीर के हिमालयी पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाली गुज्जर एवं बकरबाल जैसी जातियों में पालतू पशुओं के ढोर की व्यवस्था (Nomadic herding practices), प्रचलित है। आजीविका हेतु ऐसी ही व्यवस्था अरुणाचल प्रदेश के "मोम्पा" जनजाति के घुम्मकड़ ब्रोकपा (Brokpa) पशुपालक समुदाय में भी देखी जाती है।

इसी तरह समुद्री किनारों के क्षेत्रों, नदी घाटी क्षेत्रों या आर्द्रभूमि क्षेत्र में कई ऐसे जनसमुदाय हैं जो मछली का शिकार अपनी आजीविका का सहारा बनाए हुए हैं। इस आजीविका संबंधी पेशा की व्यवस्था हेतु इनके कई सामाजिक समूह एवं संस्थाएँ हैं। जैसे कि बंगाल की खाड़ी के समुद्री किनारे क्षेत्रों में "पत्तनवार" मछुआरों का प्रमुख समुदाय है, जो आँध्रप्रदेश के कृष्णा नदी के पूर्वी किनारे से लेकर तमिलनाडु के नागपत्तनम क्षेत्र तक फैला हुआ है। इनकी अपनी आंतरिक प्रशासन व्यवस्था है। इनके बीच किसी भी पारस्परिक विवाद का समाधान एक या अधिक प्रधान के माध्यम से सम्पन्न होता है। जिसे "योजामनन" (Yojamanan) या नत्तामयी (Nattamayi) कहा जाता है। इनके सहयोग हेतु "ठंडाकरण" (Thandakaran) या "परियान चलावती" (Paraiyan Chalavati) उपलब्ध रहते हैं। इन संस्थाओं का मूल कार्य समुदाय की सामाजिक सुरक्षा कायम रखना है। क्योंकि इन समुदाय के लोगों को समुद्री किनारों या तटवर्ती क्षेत्रों में रहने के कारण कई प्रकार के पर्यावरणीय या प्राकृतिक आपदाओं का सामना करना पड़ता है।

कई परिस्थितियों में समाज के सभी घटक या अवयव इन समस्याओं का निवारण करते हैं या सामाजिक परिवर्तन अथवा सामाजिक विकास को उत्प्रेरित करते हैं। बहुधा, पारिस्थतिकीय संदर्भ में परिवर्तन या विशेषकर प्राकृतिक संसाधनों के आधार में परिवर्तन लोगों की आजीविका के तरीकों में परिवर्तन लाता है, जो अंततः सामाजिक पहलू एवं सांस्कृतिक व्यवहार में भी बदलाव लाता है। उदाहरणार्थ, देश के सूखाग्रस्त या बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों से लोगों का आजीविका के वैकल्पिक साधन की प्राप्ति हेतु, शहरी अथवा औद्योगिक क्षेत्रों में पलायन को उल्लेखित किया जा सकता है। क्योंकि, उनके मूल ग्रामीण क्षेत्रों में उनकी मूल आजीविका के तरीकों पर संकट उपस्थित हो जाता है। जब लोग शहरी या औद्योगिक क्षेत्रों में पलायन करते हैं तो उनके पेशा में परिवर्तन होता है, फलस्वरूप वृहद् संदर्भ में सामाजिक परिवर्तन भी लाता है। कुछ विशिष्ट तकनीक का समावेश एवं समुदाय के द्वारा इसको अपनाना, उनके आजीविका के तरीकों में परिवर्तन लाता है जो अंततः सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन का कारक होता है। इसी तरह प्राकृतिक आपदा (जैसे, बाढ़ एवं सुखाड़) जैसे पर्यावरणीय संकट के कारण परिवार के पुरुष सदस्य शहरी क्षेत्रों में आय के वैकल्पिक स्रोत हेतु आब्रजन करते हैं। इसका असर परिवार की संरचना में बदलाव (पलायन) एवं परिवार के मुखिया का दायित्व परिवार के महिला सदस्य पर स्थानान्तरित हो जाता है। परिणामतः सामाजिक परिवर्तनशीलता एवं सांस्कृतिक आचरण में बदलाव दिखने लगता है। अतः बहुआयामी पहलू एवं संभावनाएँ समाज, संस्कृति एवं आजीविका से जुड़े हुए हैं। तथापि वर्तमान परिस्थितियों में प्रस्तुत उपविषय (Sub Theme) निम्नांकित अवयवों के बीच पारस्परिक संबंधों को रेखांकित करके एक समझ को प्रस्तुत करता है एवं ऐसे संबंध सतत् विकास के अनुकूल है।

सारणी-4.1

समाज	संस्कृति	आजीविका
व्यक्ति	विश्वास या मान्यता प्रणाली (सामाजिक/धार्मिक)	प्राथमिक (खनन/कृषि/मछली शिकार/पशुपालन)
परिवार (संयुक्त/एकल)	संचार साधन	द्वितीयक (मूल्य संवर्धन क्रियाकलाप)
गोत्र/वंश	प्रतीक/उद्देश्य	तृतीयक (व्यापार एवं वाणिज्य, विविध सेवा इत्यादि)
पेशागत समूह	तकनीक	
सांस्कृतिक समूह	आय के साधन	
आदिम जातीय समूह	भोजन प्रणाली	
दिलचस्पी समूह	त्योहार	
राष्ट्रीय रोजगार मिशन से सम्बन्धित संस्थाएँ एवं आजीविका	कला एवं हस्तशिल्प	

4.2 उपविषय के प्रमुख बिन्दु :

इस उपविषय का मूल उद्देश्य समाज एवं संस्कृति के सभी अवयवों के महत्व (योगदान) की खोज, प्रलेखन एवं विश्लेषण करना है। कैसे यह जीवन को विश्वसनीय, गुणवत्तापूर्ण एवं गरिमापूर्ण सतत् जीवन शैली बनाने हेतु सहायक है। साथ ही यह उपविषय इस तथ्य पर भी जोर देता है कि समाज के सभी अवयव (इकाई) या लोगों के लिए पर्यावरणीय अनुकूलता आजीविका के तरीके को उत्प्रेरित कर सतत् एवं टिकाऊ जीवन शैली के साथ-साथ पारिस्थितिक तंत्र की सुरक्षा को कैसे संभव बनाता है।

हम समाज, संस्कृति और आजीविका के सभी अवयवों के बीच अन्योन्याश्रय अंर्तसंबंधों को दर्शा सकते हैं तथा जीवन शैली प्राप्ति हेतु उत्तरदायित्व पूर्ण उत्पादन एवं खपत (उपभोग) प्रणाली विकसित करने के साथ ही अंधविश्वास एवं भ्रम निवारण के उद्देश्य हेतु सांस्कृतिक मूल्य पुनर्स्थापन के उपायों की पहचान कर सकते हैं।

4.3 तर्कसंगत प्रारूप :

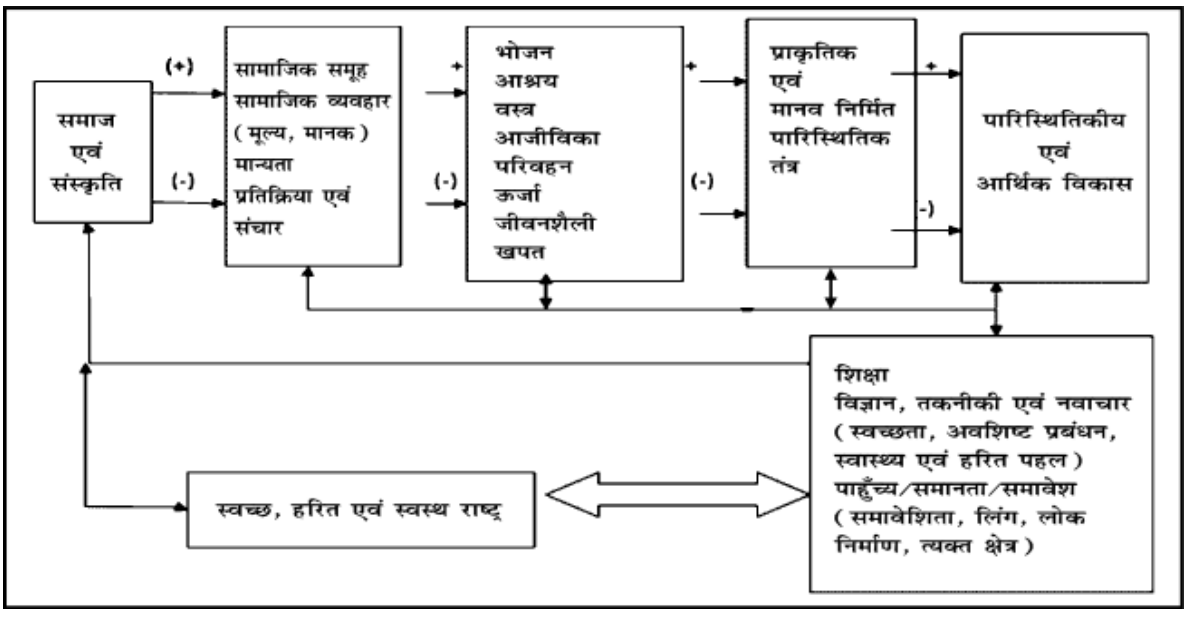

4.4 अवसर :

4.4.1प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन–

कुछ समुदायों एवं समाजों में संस्कृति एवं परम्परा का उद्‌भव लोगों की आजीविका के इर्द–गिर्द विकसित होता है। तदनुसार ये आजीविका एवं प्राकृतिक संसाधनों पर इनका प्रभाव इन समुदायों को इनके लिए उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन हेतु विशिष्ट तकनीकी को विकसित करने के लिए उत्प्रेरित करता है। उदाहरणार्थ, असम के "हीरा" समुदाय के लोग पारम्परिक कुम्हार होते हैं, उन्हें इन तथ्यों की जानकारी में प्रवीणता होती है कि मिट्‌टी के बर्त्तनों के निर्माण हेतु किस प्रकार की मिट्‌टी कहाँ से और वर्ष के किस समय एकत्रित करना चाहिए। कई प्रकार के रीति–रिवाजों का अनुपालन इस समुदाय के लोगों के द्वारा किया जाता है। जैसे कि–इस समुदाय की महिलाओं के द्वारा मिट्‌टी के बर्तन का निर्माण कार्य तथा पुरुष सदस्यों के द्वारा विशिष्ट प्रकार की मिट्‌टी के एकत्रीकरण का कार्य किया जाता है। हीरामनु (Hiramanu) मिट्‌टी के बर्तन निर्माण न सिर्फ इनके लिए एक पेशा है, वरन् यह पारम्परिक ज्ञान, रीति–रिवाज, रचनाशीलता, हस्त कला शिल्प एवं इनकी विशिष्ट जातीय पहचान का भी द्योतक है। साथ ही, इनके द्वारा, इनके लिए जरूरी मृदा संसाधन के प्रबंधन के ज्ञान को भी प्रदर्शित करता है।

इसी तरह, बहुत से समुदायों के पास ऐसी पारम्परिक संसाधन एवं प्रबंधन प्रक्रिया है, जो सार्वजनिक सम्पत्ति संसाधन (CPR–Common Property Resource) से संबंधित है। जो उन्हें भोजन, चारा, ईंधन, रेशा (Food, fodder, fuel, fibre) इत्यादि प्रदान करता है एवं उनकी आजीविका को सतत् रूप से संचालित करता है। मेघालय के "खासी" समुदाय, अरुणाचल प्रदेश के आपतानी (Apatani) समुदाय, छत्तीसगढ़ एवं झारखण्ड के "गोंड" जनजाति इसके सुंदर उदाहरण हैं। वर्तमान परिवर्तनशील परिदृश्य में नवीन, नवाचार युक्त पहल आजीविका के नए अवसरों को तलाशने में योगदान दे सकते हैं और यह प्राकृतिक संसाधनों के बेहतर प्रबंध न के माध्यम से संभव हो सकता है।

प्रतिभागी भी अपने संबंधित, भू–पारिस्थितिकीय क्षेत्र में इसी अवधारणा के दिशा में अपने परियोजना क्षेत्र का विचार कर सकते हें।

4.4.2 जैवविविधता / वन्य जीवन संरक्षण–

किसी समाज में व्याप्त पारम्परिक रीति-रिवाज एवं अवधारणाएँ जो जैव विविधिता संरक्षण को बढ़ावा देते हैं, वे अंततः उस समुदाय के लोगों के लिए बहुत हद तक टिकाऊ आजीविका प्रदान करने में सहायक होते हैं। अनुभव एवं अवलोकन के आधार पर देशज समुदाय के लोग (आदिवासी, जनजाति) प्रकृति के साथ तारतम्य बना कर रहते हैं। उनकी मान्यता है कि जैव संसाधनों का संरक्षण उनके अपने जीवन एवं आजीविका के लिए आवश्यक है। इस सत्य से परिचय के कारण ही खेती किए जाने वाले फसलों की विविधता इत्यादि का रूप लिया है और इसे समाज की संस्कृति एवं देशज परम्पराओं से सम्बद्ध किया गया। उदाहरणार्थ यहाँ पर प्रजनन मौसम में मछलियों की प्रजातियों का संरक्षण का उल्लेख किया जा सकता है। इसके परिणामस्वरूप स्थानीय संदर्भ में स्थानीय मछलियों की प्रजातियों की उपलब्धता मछुआरा जनजातियों को आजीविका की गारंटी देता है।

इसी तरह असम की बोडो जनजातियों में जिनके नाम के Mushahary टाइटिल है, यह मत प्रचलित है कि उनका कुछ संबंध बाघों से है इसलिए उनके समुदाय में बाघों का शिकार करना एक पाप समझा जाता है। इस तरह "कार्बी" जनजाति के लोगों में उनका उपाधि नाम "Teron (टेरोन)" है। वे अपने को हार्नबिल (Hornbill) की संतान समझते हैं। इसलिए Teron जनजाति के लोगों के द्वारा Hornbill के शिकार पर प्रतिबंध है। राजस्थान के "विश्नोई" समुदाय के लोगों में "रैवेजरी" नामक वृक्ष एवं काले हिरण तथा चिंकारा को पवित्र माना जाता है। मालावार एवं त्रावणकोर में सर्प-उपवन (Sarpakkavu) या snake groves के संरक्षण की परम्परा है। ये सभी उदाहरण संस्कृति एवं जैव विविधता संरक्षण के बीच अन्योन्याश्रय संबंध को प्रदर्शित करता है।

समसामयिक संदर्भ में भी सांस्कृतिक आदर्श, सामाजिक परम्परा एवं जैव विविधता संरक्षण के माध्यम से आजीविका के नए साधन उपलब्ध हो सकते हैं। जैसे पारिस्थितिक-सांस्कृतिक आमोद यात्रा, सामुदायिक संस्कृति एवं परम्पराएँ, जनजातीय पाक शैली (Ethnic cuisines) इत्यादि सभी जैव-विविधता संरक्षण के इर्द-गिर्द केन्द्रित हैं और इनमें आधुनिक अवधारणाओं के लिए भरपूर संभावनाएँ निहित हैं, जैसे–पारिस्थितिक पर्यटन फोटोग्राफी इत्यादि।

गृह प्रवास (Home stay), ग्राम्य यात्रा (Village tour) जैसी अवधारणाओं ने सांस्कृतिक आचार-व्यवहार के साथ-साथ, जैव विविधता एवं उनके संरक्षण को अर्न्तस्थापित करते हुए बेहतर आजीविका अवसरों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इसलिए, इन तथ्यों के लिए एक नवीन एवं नवाचारी दृष्टिकोण सतत् विकास में योगदान दे सकता है।

4.4.3 जलवायु परिवर्तन लचीलापन अथवा आपदा संकट निम्नीकरण–

आदिवासी समुदाय स्वदेशी समुदाय (Indigenous Communities) में उनके वातावरण में किसी प्रकार का परितर्वन के संबंध में अपनी स्वयं की अनुकूलन प्रक्रिया है या किसी भी आपदा से निपटने की अपनी विशिष्ट प्रणाली या तरीका है। यह ज्ञान एवं तरीका बहुधा उनकी अपनी संस्कृति एवं सामाजिक व्यवस्था का अभिन्न अंग है जो उनकी आजीविका से भी सम्बद्ध है। इन समूह एवं समुदायों में प्रचलित रीति-रिवाज एवं परम्पराएँ आपदा प्रबंधन में और संकट न्यूनीकरण की तैयारी में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है और जलवायु लचीलापन विकास में सहायक हो सकता है। ये परम्पराएँ और संस्कृति पीढ़ी दर पीढ़ी, वंशानुगत रूप से प्राप्त होती है एवं इसका उपयोग सचेतन रूप से या कभी इसके बिना भी होता है। उदाहरणार्थ, चांगघर (Bamboo Platform House) एक पारम्परिक गृह निर्माण है जो असम के "मिशिंग" (Mishing) समुदाय में प्रचलित हैं। ये चांगघर इनकी सामाजिक प्रणाली का अभिन्न हिस्सा माना जाता है एवं उनका सांस्कृतिक व्यवहार, त्योहार, रिवाज, इनके जीवन का समग्र प्रारूप होता है। तथापि यह जानना महत्वपूर्ण है कि ये चांगघर बाढ़ के खतरों से बचाव के दृष्टिकोण से उपयोगी है। क्योंकि ये बाढ़ के स्तर से अधिक ऊँचाई पर बाँस के पोल पर बने होते हैं। इसी प्रकार का तरीका अन्य समुदायों में भी उपलब्ध है। भवन-निर्माण का कई देशज तरीका जैसे "कोटी बनाल" (Koti Banal) उत्तराखंड में एवं धाजी दिवारी

(Dhaji Diwari) कश्मीर में, बोन्गास (Bongas) कच्छ में Brick nog तकनीकी भवन-निर्माण की वह तकनीकी है, जिसें काठ के फ्रेम के बीच ईंटों का उपयोग filler के रूप में किया जाता है। इसी तरह बाँस आधारित EKra निर्माण विधि असम में प्रचलित है। भारतीय कई सांस्कृतिक तकनीकी को अपनाते हैं। ये परम्पराएँ उन्हें आपदा व्यवस्थापन में उपयोगी बनाता है। दूसरी तरफ पारम्परिक पाककला (Culinary) का तरीका आपदा संकट न्युनीकरण (DDR) हेतु समरनीति (योजना) बनाने में महत्वपूर्ण संभावनाओं से युक्त है। कई समुदायों में मौसमी खाद्य सामग्रियों को धूप की गर्मी में सुखाने की विधि या धुएँ में सुखाने की विधि के द्वारा खाद्य सामग्रियों को संरक्षित करने की पारम्परिक पद्धति प्रचलित है।

ये भोज्य पदार्थ सामग्रियाँ कई उद्देश्यों की पूर्त्ति करती हैं–जैसे कि पारम्परिक व्यंजन एवं संस्कृति का संरक्षण/बाढ़ एवं सुखाड़ के समय भोज्य सामग्रियों की उपलब्धता बनाए रखने इत्यादि में। राजस्थान के मरुस्थल क्षेत्रों में रहने वाले समुदायों में फसलों के जंगली प्रजातियों या पौधों की विशिष्ट जातियों की पहचान एवं समझ होती है, जिसे वे सुखाड़ की स्थिति में भी दुर्भिक्ष की समस्या से निपटने हेतु पैदा कर खेती कर सकते हैं।

भारत की पारम्परिक सामाजिक प्रणाली में लोग एक से अधिक पेशागत कार्यों में प्रवीणता रखते थे जिसके कारण वे आपदा एवं जलवायु संबंधी तनाव या कठिनाइयों के प्रभाव को झेलने में सक्षम होते थे। अध्ययन से पता चलता है कि ऐसे लोगों में जिन्हें एक से अधिक पेशागत कार्यों में कुशलता हासिल है उनमें, मजबूरीवश पलायान की समस्या कम है, वनिस्पत कि किसी खास पेशा में ही प्रवीणता रखने वाले समुदाय के लोगों में। इसलिए पूरे भारत के लोगों में एक से अधिक पेशागत कुशलता में प्रवीणता जैसे कि–खेतों की जुताई, बाँस कलाकृति निर्माण, नाव निर्माण, घरेलू कार्यों में प्रयुक्त होने वाले उपकरण निर्माण इत्यादि महत्वूर्ण माना जाता रहा है, ताकि लोगों में वैकल्पिक आय की संभावना बनी रही।

इन सकारात्मक तथ्यों के विपरीत भारतीय ग्रामीण समाज में कुछ नकारात्मक प्रथा एवं परम्पराएँ विद्यमान हैं जो उन्हें जलवायु अनुकूल बनने एवं आपदा संकटों को कम करने के कार्य में प्रतिरोध उत्पन्न करता है। भारत की कई सामाजिक प्रणाली में महिलाओं को निर्णयकर्त्ता नहीं समझा जाता है और न ही उन्हें घर की चारदिवारी की सीमा से बाहर रहने दिया जाता है। उन्हें जुताई, नौका-चालन, वृक्षों पर चढ़ने जैसे कार्यों की मनाही है। इसलिए ऐसे नियंत्रणों एवं प्रथाओं के कारण उन्हें आपदा के समय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसलिए इन तथ्यों का सावधानीपूर्वक पर्यवेक्षण करने की आवश्यकता है, जिससे कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति जलवायु अनुकूल एवं जलवायु संबंधी या जलवायु से इतर आपदा को सहने में सक्षम हो।

4.4.4 ऊर्जा संरक्षण एवं प्रबंधन–

ऊर्जा संरक्षण हेतु समाज का अपना पारम्परिक एवं सांस्कृतिक तरीका होता है। सतत् आजीविका की उपलब्धता, संस्कृति, प्रकृति एवं लोगों की बीच पारस्परिक संबंध पर निर्भर करती है। समाज, संस्कृति के माध्यम से ही नयी नवाचारी तकनीक, कौशल एवं तरीका विकसित करता है जिससे ऊर्जा संरक्षण किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश परिवार भोजन पकाने के लिए लकड़ी पर निर्भर हैं। ऊर्जा संरक्षण

एवं संसाधन प्रबंधन हेतु उनके पास धूप में "अचार" एवं अन्य खाद्य सामग्रियों को सुखाकर संरक्षित करने की वैकल्पिक विधि उपलब्ध है, जिसके माध्यम से वे ऊर्जा संरक्षण एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थ भी प्राप्त करते हैं। भारत के कई भू-परिस्थितिकीय क्षेत्रों–जैसे पहाड़ी, समुद्री किनारे, नदी घाटी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों

के बीच ऊर्जा संरक्षण एवम् खाद्य उत्पाद प्रसंस्करण हेतु ऐसे कई तरीके उपलब्ध हैं, जो एक-दूसरे से भिन्न हैं। इसके अलावा कई ग्रामीण समुदायों में जहाँ संयुक्त परिवार संरचना प्रचलन में है, उनके बीच सामूहिक भोजन निर्माण (रसोई) एवं एक साथ भोजन करने की व्यवस्था है। सांझा चुल्हा (सामुदायिक रसोई) सामुदायिक रसोईघर का परिणाम है, जो उत्तरी भारत में प्रचलन में है। सामूहिक निर्माण एवं सामूहिक रूप से भोजन करना, रसोई के लिए ऊर्जा बचत में सहायता करता है। परिवार के उतने ही व्यक्ति यदि एकल परिवार व्यवस्था में रहेंगे तो अधिक ऊर्जा एवं अधिक मानवीय श्रम की खपत होगी। यही तथ्य संयुक्त परिवार में प्रकाश एवं मनोरंजन के लिए ऊर्जा खपत में बचत के संदर्भ में सत्य है।

भारत के ग्रामीण क्षेत्रो में, गृह निर्माण प्रणाली, स्थानीय जलवायु एवं पर्यावरणीय स्थिति के अनुरूप हैं, जिसके माध्यम से वे घर को गर्मी में ठंढा या जाड़े में गर्म रखने की प्रक्रिया के समय अधिक ऊर्जा खपत से बचते हैं। ऊर्जा उपयोग एवं संरक्षण की इन विशिष्ट विधियों एवं तरीकों का वैज्ञानिक पद्धति से पर्यवेक्षण एवं प्रलेखण करने की आवश्यकता है। साथ ही यह भी महत्वपूर्ण है कि आजीविका क्षमता एवं संभावनाओं को ग्रामीण संदर्भ में घरेलू ऊर्जा माँग के दृष्टिकोण से पहचान की जाय।

4.4.5 सतत् उत्पादन एवं खपत–

गैरटिकाऊ उत्पादन (unsustainable production) एवं खपत का अंततः प्राकृतिक संसाधनों पर अत्यधिक दबाब पड़ता है एवं इसका पर्यावरण पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ता है। भारत में पारम्परिक तरीके, जो टिकाऊ एवं पर्यावरण मित्रवत् होते हैं, वे लोगों के जीवन के आवश्यक अंग बने रहते हैं। भारत का निम्न कार्बन पदछाप (Footprint) एवं जीवन शैली का इतिहास रहा है।

अधिकांश देशज समुदाय के लोग हाथ से निर्मित उत्पादों को पसंद करते हैं जो स्थानीय उपलब्ध संसाधनों से निर्मित होते हैं। स्थानीय उपलब्ध संसाधनों का अधिकाधिक प्रयोग उनके सांस्कृतिक व्यवहार का अंग है, जो अधिकांश लोगों के द्वारा अपनाया जाता है। केले के पौधे का सतत् उत्पादन एवं खपत एक बहुत ही पारम्परिक चलन है। इस पौधे का भिन्न-भिन्न भाग, भिन्न-भिन्न कार्यों में प्रयुक्त होता है।

इसका फल अत्यंत पौष्टिक पदार्थों से युक्त होता है, इस कारण इसका अत्यधिक पोषक महत्व है। पारम्परिक व्यंजन में इसका पुष्पक्रम एवं पुष्प भी सब्जी के रूप में प्रयुक्त होता है। इसकी पत्तियों का प्रयोग खाना परोसने के प्लेट के रूप में तथा पके हुए या बिना पके हुए भोजन के पैकिंग में भी प्रयोग में लाया जाता है। तने का बाह्य आवरण को विविध सामुदायिक या धार्मिक अवसरों पर कटोरे के रूप में प्रसाद या अन्य पदार्थों के वितरण कार्य करने में प्रयोग में लाया जाता है। साथ ही इसका प्रयोग खेतों में लगाए गए नवजात पौधों को या नए बिचड़ों को ढकने के प्रयोग में लाया जाता है। इसके अतिरिक्त, केले के पौध के तने का भूमिगत भाग धूप में सुखाकर या जलाकर एक प्राकृतिक बाई कार्बोनेट के निर्माण में प्रयुक्त होता है, जिसका उपयोग पाक् संबंधी (भोजन निर्माण संबंधी) कार्यों, डिटरजेंट एवं दवा के रूप में होता है। केले के तने से प्राप्त रेशे का उपयोग प्रारम्भिक रूप से पत्तीदार सब्जियों के बंडल को बाँधने या ऐसे अन्य नाजुक सामग्रियों को बाँधने के काम में आता है, ताकि आसानीपूर्वक इसे ढोया जा सके। आजकल इसके रेशे का उपयोग हस्तशिल्प कला एवं हैंडलूम सामग्रियों के निर्माण में होता है। केले के तने के लट्ठे का बेड़ा कई संस्कृतियों में नदी पार करने में प्रयुक्त होता आया है। घर के पिछवाड़े या किचेन गार्डेन में केले के पौधों को लगाने का एक सामान्य प्रचलन है, जिसके माध्यम से अवशिष्ट जल प्रबंधन किया जा सकता है। इस तरह हम एक ही पौधे से बहुत सारी सामग्री प्राप्त कर कई प्रकार से उपयोग कर सकते हैं। इसका उत्पादन एवं खपत प्रक्रिया कम कचरा उत्पादन कर सकता है एवं यह एक टिकाऊ प्रक्रिया हो सकती है। केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक, असम जैसे प्रान्तों में कटहल वृक्ष का विविध उपयोग पारम्परिक प्रणाली में देखा जाता है जिससे कि खाली जगहों की बर्बादी कम की जा सकती है। इसके अतिरिक्त हमारे यहाँ ऐसे कई पादप प्रजातियाँ उपलब्ध है जो एक से अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता की पूर्त्ति कर सकती है।

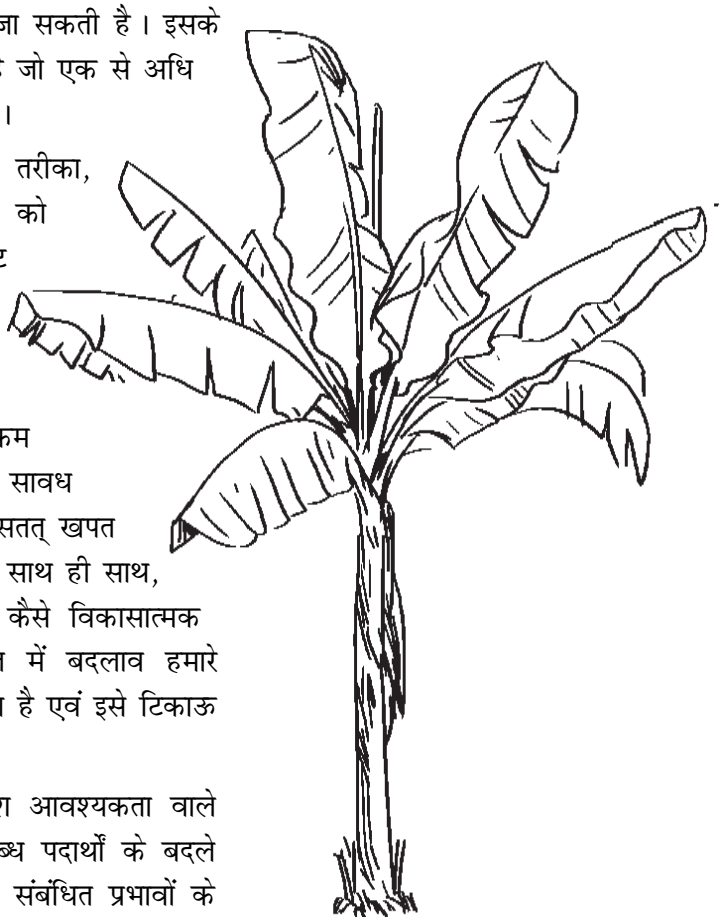

इसी तरह से सम्पूर्ण भारत में हमें कई देशज तरीका, विचार, तकनीकी ज्ञान एवं नवाचारी अवधारणाएँ देखने को मिलती हैं, जो उत्पादों एवं पदार्थों का निर्माण, अपशिष्ट में कमी पुनर्उपयोग एवं पुनर्चक्रण करने में सहायक हो सकता है। इसे बोलचाल की भाषा में जुगाड़ कहा जाता है। यह प्रणाली ऐसे देहाती एवं दूरस्थ क्षेत्रों में देखी जाती है जहाँ आधुनिक सुविधा की प्राप्यता बहुत ही कम अथवा छिट-पुट स्तर पर है। ऐसे देशज तकनीकी का सावधानीपूर्वक अवलोकन एवं विश्लेषण करने पर हमें अपने सतत् खपत व्यवहार के संदर्भ में एक नया दृष्टिकोण प्राप्त होता है। साथ ही साथ, हमें यह भी विश्लेषण करने की आवश्यकता है कि कैसे विकासात्मक प्रतिमान, सामाजिक-गतिकी, सामाजिक-आर्थिक स्थिति में बदलाव हमारे खपत एवं उत्पादन व्यवहार स्थिति में परिवर्तन ला सकता है एवं इसे टिकाऊ से गैर टिकाऊ में परिणत कर सकता है।

पारम्परिक निम्न निवेश वाली सघन कृषि, उच्च निवेश आवश्यकता वाले फसल उत्पादन प्रणाली जिसमें प्राकृतिक रूप से उपलब्ध पदार्थों के बदले अजैव निम्नीकरणीय पदार्थों का उपयोग होता है, उससे संबंधित प्रभावों के भी अध्ययन करने की आवश्यकता है।

4.4.6 स्वच्छता एवं स्वास्थ्य–

समाज एवं संस्कृति का स्वच्छता एवं स्वास्थ्य पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। समाज में व्याप्त पारम्परिक एवं सांस्कृतिक विश्वास कुछ हद तक सफाई व्यवहारों में परिलक्षित होता है, जिसका व्यापक प्रभाव स्वास्थ्य स्थिति पर पड़ता है।

पारम्परिक औषधि एवं चिकित्सा पद्धति की जानकारी भारतीय समाज का अभिन्न अंग है। सदियों से भारत के लोगों ने विभिन्न रोगों के इलाज के लिए उपलब्ध स्थानीय औषधीय पादपों के प्रयोग को सीखा है। इसी तरह से, कई स्वच्छता, आरोग्यता एवं सफाई से संबंधित परम्परा विभिन्न समुदायों में विद्यमान है। प्रत्येक धर्म, संस्कृति
एवं परम्परा में साफ-सफाई हेतु अपना तरीका मौजूद है, जो उनके सांस्कृतिक एवं धार्मिक आस्थाओं से प्रभावित है। उदाहरणार्थ, भारतीय संस्कृति में आरोग्यता एवं स्वच्छता से संबंधित कई तरीके एवं उपाय विद्यमान हैं जिन्हें अपनाना चाहिए, जैसे कि–

1) घर में प्रवेश करने के पहले हाथ एवं पैर को धोना।
2) ग्लास को मुख से सटाए बिना जल पीना इत्यादि।
3) लघुशंका के बाद या मलत्याग के बाद गोयठे की राख (यदि बुरी गंधयुक्त नहीं) या मिट्टी से हाथ धोना।
4) सोकर उठने के बाद मुँह धोना।

यद्यपि ऐसे कुछ आदतों का सकारात्मक प्रभाव स्वास्थ्य पर पड़ता है जैसे कि कुछ बीमारियों के कारक खाद्य पदार्थों के उपयोग से परहेज करना, जबकि कुछ पारम्परिक रीति-रिवाज एवं धारणाओं का नकारात्मक प्रभाव भी स्वास्थ्य पर पड़ता है। जैसे कि कुछ ग्रामीण समुदायों में नवजात बच्चों को माता का दूध (जन्म के तुरंत बाद) पहला दूध नवदुग्ध (colostrum) नहीं पिलाया जाता है। यह व्यवहार पालतू मवेशी में भी अपनाया जाता है। हालाँकि यह परम्परा नवजात को जीवन रक्षक पोषकता से परिपूर्ण नवदुग्ध से वंचित करता है, जो उनके स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। इसी तरह, गर्भवती एवं दूध पिलाने वाली (Lactating Mother) महिला को भी कुछ विशिष्ट प्रकार के खाद्य सामग्रियों को लेने से मनाही है। जैसे-खट्टा फल (नींबू) जो उनके पोषण पर प्रभाव डाल सकता है। आवासीय जगहों पर शौचालय निर्माण नहीं करने की आदत को कई भारतीय समुदायों में देखा जाता है जिसके कारण खुले जगहों पर मल त्याग करना पड़ता है और यह कई प्रकार की स्वास्थ्य समस्याओं को उत्पन्न करता है।

सफाई एवं स्वास्थ्य से संबंधित रीति-रिवाज, समाज में लिंग भेद से भी संबंधित है। पारम्परिक भारतीय समाज में महिलाओं को परिवार हेतु जल प्रबंधन, खाना पकाना, घर की सफाई की जिम्मेदारी सौंपी गयी है। ऐसा करने के कारण, ये रीति-रिवाज महिलाओं (लड़कियाँ सहित) पर कार्य के बोझ को बढ़ा देता है। परिणमतः इसका प्रभाव उनके स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव के रूप में पड़ता है। सामान्यतः महिलाओं को भोजन में उनका उचित हिस्सा नहीं मिल पाता है। क्योंकि वे पुरुष सदस्यों के बाद ही खाना खा पाती हैं। अतः वे कुपोषण के शिकार होने के कगार पर रहती हैं। इसी तरह माहवारी से संबंधित रीति-रिवाज एवं अंधविश्वास परिवार की महिलाओं के लिए दिक्कतों को उत्पन्न करता है इसके साथ ही स्वास्थ्य संबंधित खतरों को भी उत्पन्न करता है। माहवारी चक्र के दौरान अस्वास्थ्यकर आदतें, सामग्रियों का प्रयोग उनके प्रजनन स्वास्थ्य पर घातक प्रभाव डालता है।

देश के कुछ हिस्सों में पारंपरिक तरीका है कि मासिक धर्म के समय स्त्रियों को अलग रहने की व्यवस्था तथा उनका खाना-पीना भी स्थानीय नियमानुसार प्रतिबंधित हो जाता है। यह उनके स्वास्थ्य एवं मानसिक स्थिति के लिए सही नहीं है। अतः महिलाओं का स्वास्थ्य अभी के सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में एवं पारंपरिक प्रणालियों में निचले स्तर पर रहता है।

अत: वर्तमान परिस्थिति में समाज के अंदर स्थापित प्रथा के सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलू को चिन्हित कर उनका विश्लेषण करना होगा जिससे कि "सर्वोत्तम तरीकों" को आगे बढ़ाना चाहिए तथा हानिकारक प्रथा को बंद किया जाये। स्वास्थ्य एवं साफ-सफाई से जुड़े हुए सामाजिक तौर-तरीकों को समझना तथा उनमें किस प्रकार का परिवर्तन करना है एवं इससे महत्तम लाभ लेने का प्रयास एक स्वच्छ एवं स्वस्थ देश की ओर ले जायेगा।

4.4.7तकनीक का उपयोग एवं इसका समाज पर प्रभाव–

समुदाय के द्वारा परंपरागत तरीके से तकनीक एवं औजारों के विकास में स्थानीय उपलब्ध सामग्रियों का उपयोग किया गया है तथा स्थानीय ज्ञान पर आधारित हुनर भी स्थानीय जरूरतों को ध्यान में रख कर हुआ है। तकनीक का प्रभाव आधुनिक समाज के आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों तरह का देखा जाता है।

1960 के दशक से भारतीय नीति-वेत्ताओं ने पाश्चात्य देशों की तकनीक उपयोग करने के लिए प्रोत्साहन दिया था जिससे कृषि उत्पादन को बेहतर बनाया जा सके तथा खाद्य पदार्थों की कमी को पूरा किया जा सके। उस तरह की दिशा में आगे बढ़ने से भारतीय कृषि का प्रतिरूप जबरदस्त रूप से बदल गया था तथा कृषि में हरित-क्रांति से जुड़े तकनीकों का भारत में उपयोग होने लगा। इसकी सफलता क्षेत्रीय स्तर पर थी तथा इसका खामियाजा मिट्टी एवं जल के निम्नीकरण से भरना पड़ा है। इससे फसल-विविधता छूट गई-बहुत ज्यादा परिमाण में रसायनों का उपयोग तथा जीन संवर्धित फसलों का प्रचलन भविष्य के लिए पूरे पारितंत्र पर नकारात्मक प्रभाव डालने लगा है। पारंपरिक खेती में यांत्रिक औजार का उपयोग बहुत सीमित था तथा साधारणतया समुदाय की भागीदारी होती थी।

किसी विशेष मौसम में कृषि गतिविधि का चक्र पूरा करने में सामुदायिक प्रयास की जरूरत भी थी क्योंकि मशीनीकृत औजार/ट्रैक्टर्स नहीं थे। यह पारंपरिक कृषि का स्वभाव था कि लैंगिक-असमानता किये बिना पुरुष एवं स्त्रियों के बीच खास-खास क्रियाशीलन बाँटा हुआ है। उदाहरणार्थ–भारत के उत्तर पूर्वी क्षेत्र में भूमि पर हल चलाना तथा बीज डालना पुरुष वर्ग का कार्य है तथा स्त्रियों को पौधे लगाना, खर-पतवार चुनना, फसल काटने का कार्य दिया जाता है।

इस तरह के तरीकों से समुदाय के हर परिवार सदस्य को रोजगार मिल जाता है। पर हाल के वर्षों में मशीनरी टूल जैसे पावर-टिलर, ट्रैक्टर, थ्रेसर इत्यादि का उपयोग आम हो गया है। इसमें शक नहीं है कि आधुनिक मशीनों के उपयोग द्वारा उत्पादन में वृद्धि हुई है तथा मानव-श्रम बच गया है।

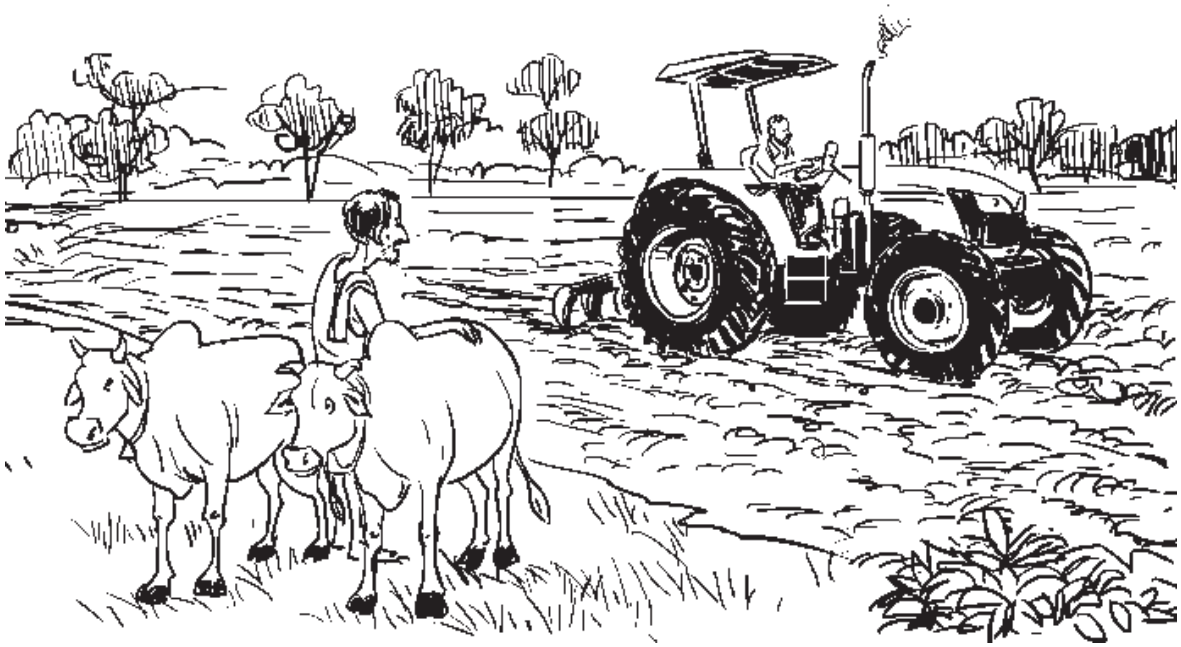

यहाँ पर एक तकनीक–ट्रैक्टर के उपयोग का उदाहरण लें। यह अनुकूलनीय है तथा विभिन्न तरह के कार्य कर सकता है इसलिए किसानों द्वारा इसका ज्यादातर उपयोग किया जा रहा है। उसी प्रकार बायो–तकनीक का विस्तृत पैमाने पर उपयोग–जिसमें जैविक खाद, जीन संवर्धन, टिशु कल्चर इत्यादि प्रमुख हैं। इससे विकसित एवं विकासशील देशों के किसानों में आशा की किरण जगी है। एक अन्य विलक्षण तकनीकी है "बूंद–बूंद सिंचाई" जिससे पानी का प्रभावकारी उपयोग संभव हो रहा है, पर समाज में इसका नकारात्मक प्रभाव भी पड़ा है। एक नकारात्मक पहलू है कि विकसित तकनीक से हाल के वर्षों में स्त्रियों का रोजगार अवसर कम हुआ है। उदाहरणार्थ–एक मशीन (Mono-Weeders) के उपयोग से औरतों का कृषि–कार्य रोजगार ही छिन गया है। कृषि में बड़ी मशीनों के उपयोग से पारितंत्र के घोंघा, केंचुआ, चीटियों की संख्या में कमी देखी गई है, तथा पारितंत्र का संतुलन टूट गया है।

अत: हमें वैसे तकनीक चाहिए जो आर्थिक, पर्यावरणीय एवं सामाजिक टिकाऊपन के साथ हों, जिससे हम अपने पारंपरिक प्रणाली को बेहतर बना सकें तथा रोजगार/आजीविका के अवसरों को भी बरकरार रखें।

उपरोक्त विचार के रास्ते हमें सोचना होगा कि परियोजना क्षेत्र में अपने भू–पारितंत्र में किस प्रकार परियोजना की अवधारणा बनायेंगे।

4.4.8नये तकनीक एवं आजीविका के अवसर–

नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में नवाचारी प्रयासों से ग्रामीण क्षेत्र में नये अवसर पहुँचे हैं। इससे जलवायु परिवर्तन के विरूद्ध संघर्ष में मदद मिली है तथा इसके साथ स्थानीय युवा के लिए रोजगार के अवसर, खास कर सेवा क्षेत्र में इसका निर्माण हुआ है–मुख्यत: बिक्री, स्थापन एवं रख–रखाव इत्यादि क्षेत्र में, अगर युवाओं को सही हुनर में प्रशिक्षित किया जा सके। इस तरह का रोजगार सुदूर ग्रामीण इलाकों में नये अवसर प्रदान करेगा जबकि अब तक उनका प्रमुख रोजगार कृषि क्षेत्र से ही जुड़ा था।

सौर ऊर्जा के विकास से सुदूर क्षेत्र के गाँव अब स्वच्छ ऊर्जा से जुड़ जायेंगे। इन गाँवों के विद्युतीकरण से न सिर्फ उन्हें ऊर्जा मिलेगी बल्कि उनके काम करने के समय में भी बढ़ोतरी होगी, तथा उनकी उपार्जन क्षमता बढ़ेगी। नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र के विकास से क्षमतावान ऊर्जा–चूल्हा का उपयोग बढ़ेगा, कचरे से बायो गैस बनाने के प्रणाली से भी उनकी ऊर्जा क्षमता बढ़ेगी साथ ही कचरे का प्रभावी उपयोग भी होगा। वैसे आधुनिक चूल्हे से कम धुआँ निकलेगा तथा घरों के अंदर प्रदूषण कम होगा साथ ही हरित–गृह गैसों का उत्सर्जन भी कम होगा। वैसे तकनीक जो इंधन का क्षमतावान उपयोग करते हैं वे सीधे या परोक्ष रूप से जलवायु परिवर्तन के विरूद्ध मुहिम को मदद पहुँचाते हैं। इसका प्रभाव स्त्रियों के स्वास्थ्य पर भी सकारामक है।

खासकर युवा वर्ग के लिए इलेक्ट्रोनिक्स के विकास द्वारा नये रोजगार के अवसर सामने आये हैं। इलेक्ट्रोनिक उपकरण जैसे स्मार्टफोन ने संचार–संबंध को खूब बढ़ाया है तथा सूचना तक पहुँचना सरल कर दिया है तथा इससे जीवन की गुणवत्ता में इजाफा हुआ है। विभिन्न इलेक्ट्रोनिक पार्ट्स का उत्पादन तथा उन्हें

जोड़ कर अंतिम उत्पाद तैयार करना एक क्षमतावान उद्योग के रूप में भारत जैसे विकासशील देशें को आजीविका के नये अवसर प्रदान कर रहा है।

उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में, बाल वैज्ञानिक स्थानीय क्षेत्र में आधारभूत स्थिति का मूल्यांकन कर सकते हैं कि समुदाय द्वारा तकनीक की उपलब्धता तथा उपयोग के साथ पर्यावरण सुरक्षा, साफ-सफाई एवं स्वास्थ्य प्रबंध न को कौन तकनीक आगे बढ़ा सकता है तथा उसमें टिकाऊ आजीविका तैयार करने की क्षमता भी है। साथ ही यह भी संभव है कि तकनीकी सेवाओं में किस तरह के दरार हैं ? उनकी पहचान कर, हुनरमंद मानवशक्ति एवं हुनर की क्षमता का आकलन किया जाय।

4.5 परियोजना विचार :

परियोजना संख्या-1

स्थानीय क्षेत्र में आवास से जुड़े पारंपरिक बगीचे के जलवायु प्रतिरोधक क्षमता का अध्ययन :

भूमिका–

पारंपरिक घरेलू बगीचे में एक स्वपोषी टिकाऊ सूक्ष्म-पारितंत्र देखी जा सकती है, जिसके विभिन्न स्तरों में पौधे-उत्पादक के रूप में; घरेलू पशु, मुर्गी एवं मछली प्राथमिक एवं द्वितीयक उपभोक्ता के रूप में तथा त्रिभुज के शीर्ष पर मानव (मनुष्य) अंतिम उपभोक्ता के रूप में बैठा है।

इस पारितत्रं पर अपना कचरा प्रबंधन, भोजन एवं पोषण-प्रबंधन का चक्रीय तरीका है। इसके अलावा, पारितंत्र के पास वैकल्पिक आजीविका देने का प्रचुर अवसर भी है, जो उन्हें जलवायु के दबाव या आपदा के समय मदद पहुँचायेगा तथा परिवार के पोषण की जरूरतों को पूरा करने में मदद करेगा। अत: पारपंरिक आवासीय बगीचे पर एक गंभीर अध्ययन इस उपविषय के अंदर किया जा सकता है।

लक्ष्य–

1) आवासीय बगीचे में उपस्थित विभिन्न प्रजातियों की पहचान एवं दस्तावेजीकरण।

2) प्रजातियों की उपलब्धता तथा उनका मौसमी प्रतिरूप (Patterns) एवं अर्थपूर्णता।

3) घरेलू बगीचे के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं लिंग आयाम का विश्लेषण एवं प्रलेखीकरण।

4) जलवायु/मौसम के द्वारा जोखिम के दौरान बगीचे की क्षमता/उपयोग का विश्लेषण एवं प्रलेखीकरण।

5) पारपंरिक प्रबंधन प्रणाली के अंदर बगीचे के आर्थिक क्षमता का अध्ययन एवं नये/नवाचारी प्रबंधन के तहत क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन।

विधि–

इस अध्ययन हेतु प्रस्तावित विधि निम्नलिखित है–

★ अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण।

★ क्षेत्र के अवलोकन हेतु भूखंड की पहचान।

★ प्रजातियों की विविधता की सूची बनाना।

★ मौसमी प्राचलों के प्रभाव का अवलोकन एवं प्रलेखीकरण।

★ विभिन्न अवयवों के आर्थिक क्षमता का आकलन।

★ सामाजिक, सांस्कृतिक एवं लिंग आयामों का दस्तावेजीकरण।

★ मौसम एवं जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में इनकी क्षमता एवं अनुकूलनीयता का आकलन तथा प्रलेखीकरण।

बांछित निष्कर्ष–

इस अध्ययन से यह पता चलेगा कि –

★ किस प्रकार पारंपरिक गृह-बगीचा प्रजातियों की विविधता को टिकाऊ बनाती है तथा पारितंत्र को आत्मनिर्भर बनाने में मदद पहुँचाती है।

★ इसके विभिन्न अंग किस प्रकार वैकल्पिक आजीविका प्रदान करते हैं तथा मौसमी एवं जलवायु संबंधी दबावों के समय भी परिवार के आय का स्रोत बन जाते हैं।

★ क्या पारंपरिक प्रबंधन के तरीकों से ही बगीचे की क्षमता टिकाऊ बन सकती है या कोई दूसरा नवाचारी तरीके की जरूरत है जिससे इसका लाभ बढ़ाने में मदद मिल सकती है।

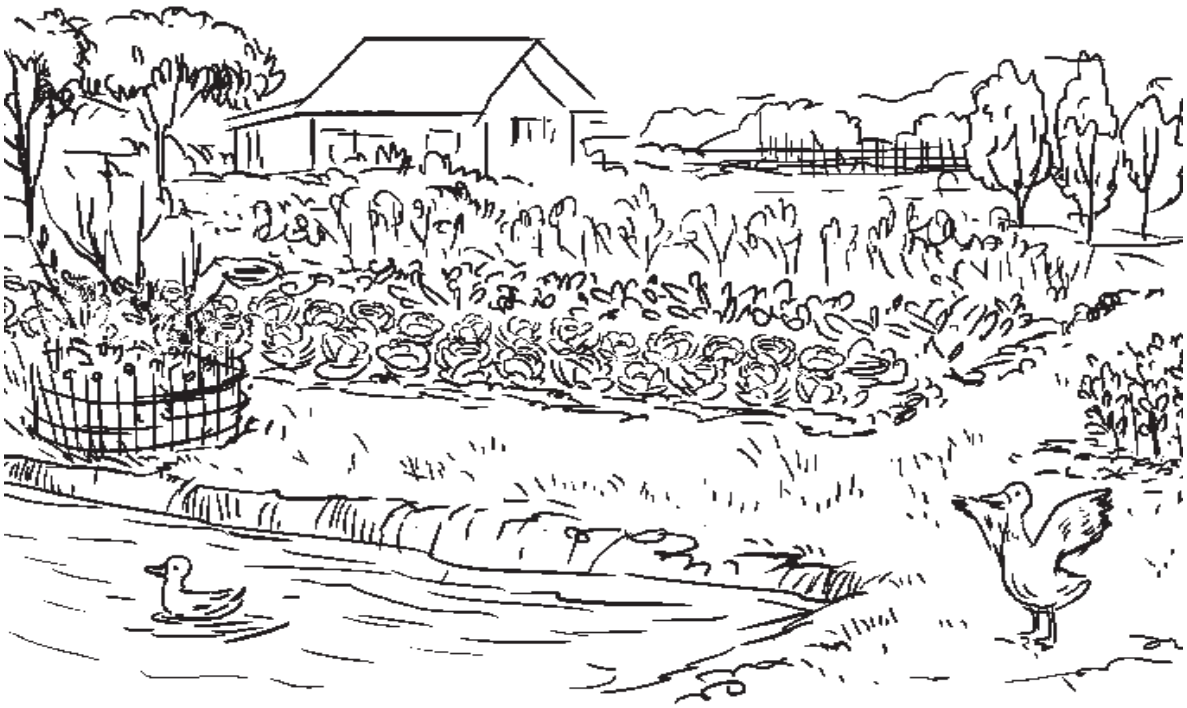

परियोजना संख्या–2

स्थानीय क्षेत्र में विशिष्ट समुदायों का बाढ़ के समय पलायन तथा उनकी संस्कृति एवं आजीविका पर प्रभाव का अध्ययन :

भूमिका–

संसार के विभिन्न भागों में हमेशा आनी वाली बाढ़ लोगों की जिन्दगी का हिस्सा है। बाढ़ की विभीषका एवं बारंबारता सदियों से लोगों को अनुकूल करने के लिए मजबूर करता है। गम्भीर जलीय एवं मौसमी घटनायें जिनकी अप्रत्याशित तीव्रता एवं बारंबारता के द्वारा जीवन–हानि के साथ–साथ आजीविका एवं लोगों के जान माल की क्षति तथा संरचना पर भी प्रभाव पड़ता है।

लक्ष्य–

इस अध्ययन के द्वारा हम जानना चाहते हैं कि बाढ़ के आने पर समुदाय के पलायन से आजीविका पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ता है। विशेषकर निम्नलिखित समुदाय में जैसे–कुम्हार, मछुआरे, टोकरी बिनने वाले, बत्तख पालने वाले इत्यादि। इसका संदर्भ निम्नलिखित है–

★ आजीविका एवं आमदनी पर प्रभाव।

★ खास आजीविका का पारंपरिक ज्ञान एवं संबंधित ज्ञान प्रणाली।

★ रीति–रिवाज का बदलाव एवं सामाजिक प्रभाव।

★ समुदाय द्वारा नवाचार (अगर हो तो) तथा उनका प्रमाणीकरण।

विधि–

एक केन्द्रित समूह से विचार विमर्श (Focal Group Discussion, FGD), अगर कोई नवाचार या तकनीक में परिवर्तन प्राप्त हो तो उसके उपयोग का प्रमाणीकरण, नये तकनीक/विचार का कैसा भविष्य है। अध्ययन के विभिन्न चरण इस प्रकार हैं–

1) अध्ययन क्षेत्र को चुनना।

2) समुदाय के आजीविका को चुन लेना।

3) आजीविका हेतु प्राकृतिक सामग्रियों की पहचान एवं उनकी विशेषताएँ।

4) संबंधित पारंपरिक ज्ञान का प्रलेखीकरण, सांस्कृतिक नियम एवं सामाजिक संरचना।

5) आपदा-प्रभाव की पहचान एवं प्रलेखीकरण, आपदा से पलायन एवं आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव।

6) पलायन का समुदाय की आजीविका पर प्रभाव एवम् प्राकृतिक संपदा की उपलब्धता।

7) आजीविका एवम् पारंपरिक तकनीकों में परिवर्तन का अवलोकन एवं प्रलेखीकरण। क्या किसी वैकल्पिक विधि का उपयोग हो रहा है तथा इनका प्रभाव संस्कृति एवं परंपरागत सामाजिक गति अवस्था पर पड़ा है।

परियोजना संख्या-3

स्थानीय क्षेत्र में बहुउद्देश्यीय पेड़ों की प्रजातियों (Multi Purpose Tree Species–MPTS) की भूमिका का अध्ययन :

वैसे पेड़ों की प्रजातियाँ जिनका एक से ज्यादा आर्थिक मूल्य है उन्हें बहुद्देश्यीय पेड़ (MPTS) कहते हैं। यह प्रजातियाँ टिकाऊ उत्पादन एवं उपभोग के लक्ष्य के संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण है। (जैसे-बांस, केला, नारियल, कटहल इत्यादि)।

लक्ष्य–यह अध्ययन निम्नलिखित लक्ष्यों के साथ किया जा सकता है–

★ स्थानीय क्षेत्र में उपलब्ध MPTS की पहचान कर प्रलेखित करना।

★ MPTS के विभिन्न उपयोग को चिन्हित कर उनका विश्लेषण एवं प्रलेखन।

★ स्थानीय क्षेत्र के विभिन्न सांस्कृतिक एवं पारंपरिक रीति-रिवाज एवं आस्था जो इनके उपयोग एवं प्रबंधन से संबंधित हैं उनका अवलोकन एवं प्रलेखन।

★ MPTS का आर्थिक एवं सामाजिक सांस्कृतिक लाभ का मूल्यांकन।

★ यह पता लगाना कि MPTS के रख-रखाव एवं प्रबंधन के नये तरीके की जरूरत है या उनकी उपलब्धता पर कोई खतरा उपस्थित है।

विधि–

★ अध्ययन क्षेत्र/स्थान का चुनाव।

★ विभिन्न उपलब्ध MPTS का चतुष्कोणीय सर्वेक्षण के आधार पर अवलोकन।

★ वैज्ञानिक दस्तावेजीकरण हेतु उपलब्ध प्रजातियों पर MPTS की पहचान एवं मुद्रित सामग्री का सर्वे एवं उपलब्ध ज्ञान का सूचीकरण।

- ★ FGD के आधार पर क्षेत्र में उपलब्ध MPTS के विभिन्न उपयोग का प्रलेखीकरण, संबंधित प्रबंधन एवं सांस्कृतिक क्रिया-कलाप (प्रथा) पारंपरिक विश्वास एवं MPTS से जुड़े नियम।
- ★ MPTS के द्वारा विभिन्न सेवाओं का आर्थिक मूल्य तथा उनसे बनाये उत्पाद का आर्थिक मूल्य।
- ★ MPTS से सामाजिक-सांस्कृतिक लाभ का अवलोकन, विश्लेषण एवं प्रलेखीकरण।
- ★ MPTS की उपलब्धता पर किसी खतरे का प्रलेखन।
- ★ MPTS से जुड़े पारंपरिक उपयोग के तरीकों का प्रयोग द्वारा प्रमाणीकरण।
- ★ प्रयोग द्वारा MPTS के मूल्य संवर्धन का नवाचारी तरीका, उत्पादन प्रणाली का प्रबंधन इत्यादि।

बांछित निष्कर्ष–

इस अध्ययन द्वारा विशिष्ट क्षेत्र में उपलब्ध MPTS के पहचान में मदद मिलेगी साथ ही इनकी क्षमता, उपयोग, लाभ एवं सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव, प्रबंधन के तरीके उपलब्ध होंगे। इसके अलावा इस अध्ययन द्वारा किसी संभावित खतरे की सूचना मिल सकती है साथ ही सही प्रबंधन के तरीके चिन्हित एवं प्रमाणीकृत होंगे। इस अध्ययन से हम प्रबंधन के कुछ नये नवाचारी तरीकों को जान सकते हैं जिससे इसकी सतत् विकास की क्षमता बढ़ जाय।

परियोजना संख्या-4

एकल परिवार एवं संयुक्त परिवार में भोजन बनाने में लकड़ी/जलावन के उपयोग का तुलनात्मक अध्ययन–संरक्षण प्रबंधन की समस्या :

भूमिका–

परिवार के संरचना प्रणाली के बदलने से जैसे पहले के संयुक्त परिवार की जगह एकल परिवार के प्रभाव स्वरूप प्रति व्यक्ति ऊर्जा के उपभोग में बढ़ोतरी देखा जा सकता है क्योंकि संयुक्त परिवार में प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत कम हो सकती है।

अवधारणा–

संयुक्त परिवार में कम जलावन का उपयोग होता है तथ यह ऊर्जा बचत का रास्ता प्रस्तुत करता है।

लक्ष्य–

1) संयुक्त एवं एकल परिवार में खाना बनाने में उपयोग किये गये जलावन की लकड़ी की समीक्षा तथा आकलन।

2) ऊर्जा बचत का तरीका चिन्हित करना एवं विश्लेषण।

3) सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रथा के ऊर्जा उपयोग एवं सरंक्षण में सहयोग का आकलन करना।

विधि–

1) प्रयोग हेतु संयुक्त एवं एकल परिवारों को चुनना तथा उन्हें दो समूहों में बाँटना (हर समूह में कम से कम 15 परिवार जरूर हों) प्रयोग एवं आकलन के लिए दोनों तरह के परिवारों की अच्छी संख्या लेना है।

2) विभिन्न मौसम में उनकी कुल ऊर्जा खपत को नोट करना तथा आंकड़ा बारंबार लेना।

3) दोनों तरह के परिवारों में प्रति व्यक्ति ऊर्जा-खपत/खर्च का आकलन तथा नजर रखना कि ऊर्जा खर्च में कोई अर्थपूर्ण अंतर तो नहीं दिखाई पड़ता है।

4) ऊर्जा बचत से जुड़े स्थानीय सामाजिक एवं सांस्कृतिक रीति-रिवाजों को चिन्हित कर प्रलेखन करना।

5) संग्रहित आंकड़ों का विश्लेषण कर तुलना करना एवं निष्कर्ष निकालना तथा व्याख्या करना।

बांछित निष्कर्ष–

दोनों तरह के परिवारों में ऊर्जा उपभोग में अर्थपूर्ण अंतर हो सकता है तथा पारंपरिक संयुक्त परिवार प्रणाली का ऊर्जा बचत पर प्रभाव देखा जा सकता है।

परियोजना संख्या-5

ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं के रोजगार के अवसर पर कृषि मशीनरी का प्रभाव :

भूमिका–

ग्रामीण भारत के कृषि क्षेत्र में नई मशीनरी के आने के बाद परिवर्तन देखा जा रहा है। यह परिवर्तन/बदलाव ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों तरह का है। भारत में महिलाएँ इस तकनीकी बदलाव से प्रभावित हो रही हैं।

इस अध्ययन का लक्ष्य है कि इस तरह के कृषि मशीनरी का प्रभाव स्थानीय महिला समूहों के सामाजिक- आर्थिक स्थिति एवं आजीविका प्रतिरूप पर समझा जाय।

अवधारणा–

आधुनिक कृषि-मशीनों ने महिलाओं के अपने पारंपरिक रोजगार से वंचित कर दिया है।

लक्ष्य–

1) पिछले 5-10 वर्षों में तकनीक का अनुकूलन एवं विसरण (diffusion) प्रतिरूप का अध्ययन।

2) काम करने वाली महिलाओं के रोजगार प्रतिरूप में कृषि-मशीनरी के द्वारा परिवर्तन का अध्ययन।

3) इस प्रकार के तकनीकी परिवर्तन के द्वारा सामाजिक-आर्थिक बदलाव का अध्ययन।

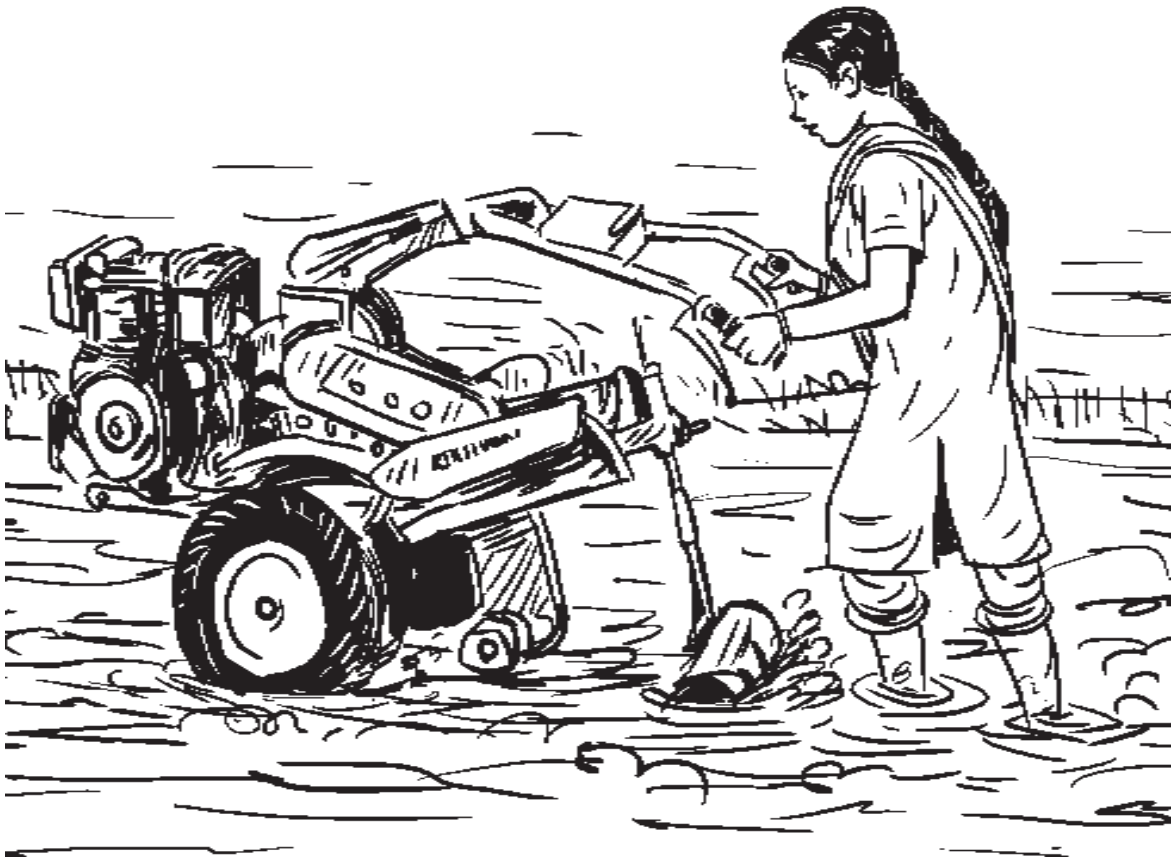

विधि–

अध्ययन हेतु एक गाँव को चिन्हित करें जिसमें–

★ न्यूनतम 25 किसान परिवार रहते हों। इसमें आधुनिक मशीनरी उपयोग करने वाले एवं नहीं उपयोग करने वाले दोनों रहें।

★ Focus Group Discussion, FGD (केन्द्रित समूह विचार-विमर्श) द्वारा पुरुष किसान एवं महिला कृषि कर्मी से विमर्श द्वारा पिछले 5-10 वर्षों में बदलाव को समझना।

★ खास सूचना देने वालों से साक्षात्कार विधि द्वारा (प्रश्नावली बनाकर) सूचना एकत्रित करें।

★ पिछले 5-10 वर्षों में कृषि में औजार / मशीनरी के उपयोग पर आंकड़ा इकट्ठा करें।

★ पिछले 5-10 वर्षों का महिलाओं के कृषि क्षेत्र में रोजगार पर आंकड़ा लें (जैसे कार्य-समय, प्रतिदिन आमदनी, काम वाले दिनों की संख्या, काम का प्रकार एवं इसका प्रभाव।

★ महिलाओं के समूह का कृषि छोड़ कर अन्य रोजगार पर पिछले 5-10 वर्षों की सूचना एकत्रित करें।

★ रोजगार के प्रतिरूप में परिवर्तन से सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन का अध्ययन।

बाँछित परिणाम–

★ विभिन्न वर्षों में फसल की खेती।

★ औजार/मशीनरी के उपयोग पर वार्षिक आंकड़ा।

★ रोजगार की स्थिति-पुरुष एवं महिलाओं की (वार्षिक आंकड़ा)।

★ हरेक परिवार का आर्थिक स्तर (प्रति वर्ष का आंकड़ा)।

★ फसल-खेती उत्पादन, खर्च तथा लाभ-हानि विश्लेषण।

★ महिला समूह के उपार्जन का स्तर परिवर्तन एवं प्रवृत्ति विश्लेषण।

बांछित निष्कर्ष :

★ इस अध्ययन से पिछले 5-10 वर्षों के कृषि में तकनीकी परिवर्तन के स्वरूप का पता चलेगा।

★ नई तकनीक का पारिवारिक आय पर प्रभाव तथा सामाजिक-आर्थिक स्तर पर प्रभाव।

★ महिला कृषि कर्मी के रोजगार के अवसर के प्रतिरूप परिवर्तन पर सूचना प्राप्त होगी।

★ इससे महिलाओं के रोजगार में कृषि आधारित कार्यों से गैर-कृषि कार्यों का बदलाव दिखलाई पड़ेगा।

4.6 कुछ अन्य परियोजना विचार :

1) "समाज, संस्कृति एवं भोजन प्रणाली" का समुदाय/जनजाति के संदर्भ में टिकाऊ उत्पादन एवं उपभोग से संबंध का अध्ययन।

2) प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन एवं आजीविका सुरक्षा–स्थानीय क्षेत्र/समुदाय में एक अध्ययन।

3) जलवायु परिवर्तन सह सकने या आपदा के खतरे को कम करने में समाज, संस्कृति एवं आजीविका का योगदान।

4) "प्राकृतिक आपदा एवं आजीविका सुरक्षा"–किसी क्षेत्र में स्थानीय समुदाय का अध्ययन।

5) सामाजिक संस्थान एवं टिकाऊ प्राकृतिक संपदा प्रबंधन।

6) "समाज, संस्कृति भोजन प्रणाली"–भोजन बनाने में ऊर्जा खर्च एवं प्रबंधन–स्थानीय क्षेत्र में नमूना अध्ययन।

7) स्वच्छता एवं स्वास्थ्य पर सामाजिक एवं सांस्कृतिक तौर–तरीका के प्रभाव का स्थानीय क्षेत्र में अध्ययन।

8) आपदा के कारण पलायन एवं इसका सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आजीविका के तरीकों पर प्रभाव।

9) जैवविविधता संरक्षण एवं जंगली पशुओं के संरक्षण पर सामाजिक–प्रणाली, सांस्कृतिक तौर तरीकों का सहयोग–स्थानीय क्षेत्र में नमूना अध्ययन।

10) रोजगार या कार्यस्थल के कारण खतरे एवं इसका प्रभाव।

11) स्थानीय क्षेत्र में/समुदाय में पारंपरिक मासिक धर्म एवं स्वच्छता संबंधित प्रथा एवं इसके सकारात्मक/नकारात्मक प्रभाव का अध्ययन।

12) स्थानीय क्षेत्र में परिवार की महिलाओं के स्वास्थ्य पर पारंपरिक प्रथाओं के नकारात्मक प्रभाव का अध्ययन।

13) स्थानीय क्षेत्र में आजीविका संरचना में परिवर्तन, आर्थिक स्थिति एवं इनका उत्पादन एवं उपभोग के प्रतिरूप पर प्रभाव का अध्ययन।

14) पारंपरिक हस्त करघा के महत्तम उत्पादन पर वैज्ञानिक तकनीक हस्तक्षेप के प्रभाव का अध्ययन।

15) मशीनीकरण (लेथ मशीन) के द्वारा पारंपरिक कारीगर जैसे लोहार समुदाय का धीरे–धीरे विलीन होने पर स्थानीय क्षेत्र में अध्ययन।

16) किसी खास समुदाय/क्षेत्र के हुनर का मानचित्रण एवं अंतराल विश्लेषण तथा इनका स्थानीय मांग एवं स्थानीय संसाधन से अन्तर्सम्बन्ध।

17) स्थानीय क्षेत्रों के संसाधन एवं आर्थिक मानचित्रण एवं उपयुक्त तकनीक द्वारा स्थानीय मूल्य संवर्धन के संभावना का अध्ययन।

18) क्षेत्र का पारितांत्रिक–सांस्कृतिक मानचित्रण एवं पारितंत्र–पर्यटन हेतु कार्यकारी योजना बनाना।

19) स्थानीय त्योहार/अनुष्ठान का अध्ययन एवं इनका कृषि/पशुपालन के तौर–तरीकों से संबंध का मानचित्रण एवं स्थानीय ज्ञान–आधार का अध्ययन।

20) स्थानीय अंधविश्वासों का विश्लेषण/कल्पित कथा एवं मानव के विकास पर प्रभाव का समाजशास्त्रीय अध्ययन।

References:

1. http://www.cpreecenvis.nic.in/Database/Indigenousirrigationsystem-ongBandh_3808.aspx
2. http://www.indiawaterportal.org/articles/pani-panchayat-model-groundwater-management-presentation-acwadam
3. http://www.barcroft.tv/gujjar-bakarwals-nomadic-tribes-livestock-migration-himalayaskashmir
4. http://www.nezine.com/info/Brokpas-the%20Yak%20rearers
5. https://indianfisheries.icsf.net/images/stories/indian/pattanavar.pdf
6. (http://www.niscair.res.in/sciencecommunication/researchjournals/rejour/ijtk/Fulltextsearch/2008/January%202008/IJTK-Vol%207(1)-%20January%202008-%20pp%2098-102.htm)
7. http://www.niscair.res.in/sciencecommunication/researchjournals/rejour/ijtk/Fulltextsearch/2011/January%202011/IJTK-Vol%2010(1)-January%202011-pp%20183-189.htm
8. Climate Friendly Lifestyle Practices in India, MoEF&CC, GoI: http://www.moef.gov.in/sites/default/files/Lifestyle%20Brochure_web_reordered.pdf

उपविषय–V

पारंपरिक ज्ञान प्रणाली

पारंपरिक ज्ञान प्रणाली

5.1 परिप्रेक्ष्य :

पारंपरिक ज्ञान प्रणाली (Traditional Knowledge System, TKS) विश्व के चारों तरफ फैले स्थानीय समुदाय के स्वदेशी ज्ञान तथा नवाचार में उपयोग किए जाने वाले हुनर/कौशल के बारे में बतलाता है–

यह हुनर उन्होंने अपने दैनिक जीवन में विभिन्न समस्याओं को हल करने के दौरान अपने परिवेश की क्षमताओं से इकट्ठा किया है।

पारंपरिक ज्ञान प्रणाली स्थानीय सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश में स्थानीय क्षेत्र के लोगों में विशेष ज्ञान के रूप में विकसित हुई है। इसकी विकास प्रक्रिया समुदाय के लोगों की समझदारी, प्रायोगिक प्रक्रिया एवं अवलोकन के साथ ही स्थानीय आवासीय परिसर में रहते हुए तकनीक एवम् पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्य में जीवनशैली आधारित ज्ञान हासिल करने से संभव हुआ है।

पारंपरिक ज्ञान प्रणाली, सूचना, ज्ञान, हुनर एवं तकनीक के साथ-साथ विशिष्ट प्रबंधन के तरीकों का प्रतिनिधित्व करती है, जो सांस्कृतिक प्रणाली द्वारा परिभाषित होते हैं। आज के संसार में मानव सभ्यता जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदा, जैवविविधता में ह्रास, पारितंत्र सेवाओं का अस्त-व्यस्त होना, खाद्य एवं पोषण स्तर में गैर-बराबरी, साफ-सफाई एवं स्वच्छता की समस्यायें एवं अनेकों नई चुनौतियों का सामना करने को मजबूर है। अतः हमें TKS पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है क्योंकि सतत् जीवनशैली के लिए नये हल ढूंढना या चुनौतियों का सामना करने के नये रास्ते खोजने में यह प्रणाली सहायक सिद्ध हो सकती है।

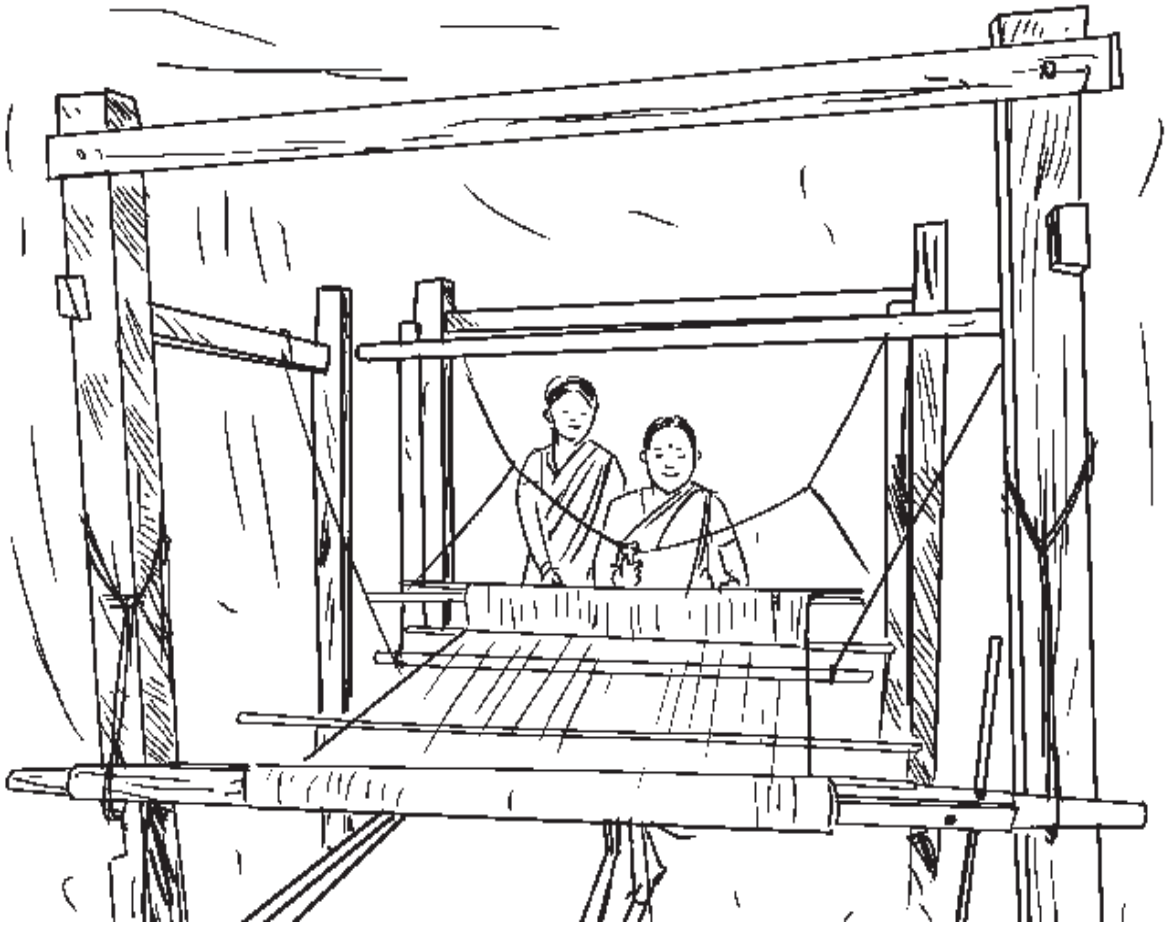

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पारंपरिक ज्ञान प्रणाली की भूमिका पर ध्यान देना तब शुरू हुआ जब जैव विविध ता के सम्मेलन (जो कि सतत् विकास के वैश्विक शीर्ष सम्मेलन का अंग था) के रियो मसौदे में कहा गया कि–पारंपरिक ज्ञान पूरे विश्व में स्थानीय स्वदेशी समुदायों के ज्ञान, नवाचार एवं तौर-तरीकों की धरोहर है। यह हजारों वर्षों के अनुभव से विकसित हुनर है तथा स्थानीय स्तर पर एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी में संचारित होता हुआ संस्कृति एवं पर्यावरण का हिस्सा बन गया है।

यह समुदाय का ज्ञान है तथा विभिन्न रूपों में पाया जाता है जैसे स्थानीय कहानियाँ, गीत, समुदाय के मुहावरे, सांस्कृतिक मूल्य, विश्वास, टोटका, समुदाय के नियम/कानून, स्थानीय भाषा एवं कृषि क्रियाकलापों में पौधों की विभिन्न प्रजाति, जानवरों की प्रजातियाँ एवं तौर तरीकों में दिखलाई पड़ता है। कभी-कभी यह ज्ञान मौखिक रूप में ही संचारित होता है तथा लोगों द्वारा गीत गाकर, नाचकर, चित्र बनाकर, मंत्रोच्चार कर सदियों से उपयोग किया जाता रहा है। इसका प्रायोगिक स्वरूप कुछ खास क्षेत्रों में खासकर कृषि, मछली पालन, स्वास्थ्य, फल-फूल की खेती, जंगल की देखभाल एवं पर्यावरणीय प्रबंधन में दिखाई पड़ता है।

इसके साथ ही विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय मंचों ने पारंपरिक ज्ञान प्रणाली पर ध्यान केन्द्रित करना शुरू कर दिया है। जैसे–विश्व इंटेलेक्चुयल प्रापर्टी संगठन (WIPO)[2], अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) – विशेषकर इनका सम्मेलन-169[3], खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO)[4], विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO)[5], संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (UNESCO)[6], संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP)[7], संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP)[8], संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार कमीशन (UNCHR)[9]; इन्होंने पारंपरिक ज्ञान प्रणाली के प्रलेखीकरण हेतु पेशकदमी ली है, तथा इसके प्रमाणीकरण हेतु शोध तथा बचाये रखने के लिए नियमावली बनाने, समुदाय के अधिकारों की सुरक्षा एवं सही-तरीके से इनका उपयोग करना तथा पारंपरिक ज्ञान के द्वारा मिलते फायदों का बराबरी से बाँटने का प्रमुख कार्य किया है।

यहाँ ध्यान देने की जरूरत है कि यूनेस्को एवं विज्ञान के अंतर्राष्ट्रीय कांउसिल (ICSU) द्वारा आयोजित "विज्ञान पर वैश्विक सम्मेलन" के विज्ञान एवं वैज्ञानिक ज्ञान के उपयोग पर की घोषणा में पारंपरिक ज्ञान प्रणाली का महत्व दर्ज किया गया है एवम् मानवीय विकास में इसके विभिन्न रूपों के उपयोग को प्रोत्साहित करने को कहा है (ICSU 2002)[10], साथ ही विज्ञान पर वैश्विक सम्मेलन (बुडापेस्ट जून 1999) TKS पर केन्द्रित था तथा 'विज्ञान कार्यसूची : गतिविधि संरचना' (UNESCO, 2000) में अनुशंसा की है कि–उस तरह की परियोजनाओं में जिसमें सांस्कृतिक संबंध, पर्यावरण एवं विकास को एक साथ जोड़कर हम कार्य कर रहे हैं, उनमें आधुनिक ज्ञान एवं पारंपरिक ज्ञान को एक दूसरे से जोड़ा जाय, खास कर उन क्षेत्रों में जहाँ हम जैवविविधता के संरक्षण, प्राकृतिक संपदा के प्रबंधन, प्राकृतिक आपदा को समझने एवं उनके प्रभाव से बचने की दिशा में कार्य कर रहे हैं।

उपरोक्त परियोजनाओं में स्थानीय समुदाय एवं संबंधित लोगों की सहभागिता ली जाए। वैज्ञानिकों एवं वैज्ञानिक समुदाय का कर्तव्य है कि उपरोक्त मुद्दों को साफ-साफ वैज्ञानिक शब्दावली (भाषा) में समझा जाए तथा बताया जाए कि किस प्रकार विज्ञान इन चुनौतियों का सामना करने में प्रमुख भूमिका निभा सकता है एवम् इसकी विवेचना की जाए। भारत में भी राष्ट्रीय ज्ञान आयोग द्वारा पारंपरिक ज्ञान प्रणाली पर ध्यान केन्द्रित किया गया है तथा इनके प्रलेखीकरण एवं बौद्धिक संपदा के अधिकार को बचाने का काम किया जा रहा है। विभिन्न संगठन एवं संस्थाओं ने शोध एवं प्रलेखन तथा पारंपरिक ज्ञान के उपयोग[13] पर कार्य शुरू किया है। यहाँ पर नोट करना चाहिए कि 'पारंपरिक ज्ञान का भारतीय जरनल' भी शुरू किया गया है जिसके द्वारा शोध एवं प्रलेखन को फैलाया जा सकेगा। इसके अलावा राष्ट्रीय जैवविविधता (बायोडाइवर्सिटी) एक्ट (NBA), 2002[15] भी लागू हुआ है जिससे कि इसे कानूनी मान्यता मिल पायेगी।

हमारे देश में पारंपरिक ज्ञान आधारित क्रियाकलापों के अनेकों उदाहरण हैं–प्राकृतिक संपदा प्रबंधन[16], कृषि गतिविधि[17], औषधि एवं स्वास्थ्य[18], आवास एवं उससे जुड़ी संरचना एवं निर्माण[19], इनमें सतत् विकास

को समर्थन देने की ताकत है। भारत के 15 कृषि-जलवायु क्षेत्र[20] में सांस्कृतिक गतिविधि एवं पर्यावरणीय विविधता विद्यमान है, जहाँ पारंपरिक ज्ञान पर आधारित क्रियाशीलन रहा है, जिससे लोगों की जीवनशैली भी विविध पर्यावरणीय क्षेत्र में टिकी हुई है। इन सभी कार्यप्रणालियों का पुराना इतिहास रहा है, इनका विकास तथा जाँचा हुआ अवलोकन है, जिन्हें सिर्फ प्रलेखन ही करना नहीं है, परन्तु उनका प्रमाणीकरण एवं आज के संदर्भ में उनके उपयोग पर दृष्टि डालनी होगी जिससे कि हम सतत् एवं टिकाऊ विकास की चुनौतियों का सामना कर पायें।

5.2 पारंपरिक ज्ञान प्रणाली - स्वभाव एवं विविधता :

पारंपरिक ज्ञान प्रणाली का विकास मुख्यत: स्थानीय स्वभाव का रहा है तथा किसी विशेष सामाजिक सांस्कृतिक रूप एवं पर्यावरण में ही फलता-फूलता है। इसकी संरचना एवं विकास स्थानीय समुदाय द्वारा की गई है-इसके विकास में अवलोकन, जाँच-पड़ताल, बदलाव एवं सही रूप में उपयोग करने हेतु मॉडेल बनाना शमिल है। यह स्थानीय, आंकड़ा आधारित, दीर्घ समय-काल में परखा हुआ तथा गतिशील प्रयास है।

यह तकनीक हमेशा एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी को दी गई है तथा विभिन्न समुदायों के बीच भी मौखिक रूप में फैली है पर यहाँ अपने हाथ से काम कर देखा गया है। इसके उपयोग के क्षेत्र तथा संबंधित प्रबंध न के तरीकों के आधार पर इन्हें विभिन्न श्रेणी में बाँट सकते हैं। जैसे–

(i) पारंपरिक पारितंत्र का ज्ञान (TEK)

(ii) पारंपरिक तकनीकी ज्ञान (TTK)

(iii) पारंपरिक मूल्य एवं आचार-विचार (TVE)

TEK में प्राकृतिक संसाधनों का एवं पर्यावरण प्रबंधन निहित है, TTK के अन्तर्गत औजारों एवं उपकरणों का ज्ञान है एवं TVE के अन्तर्गत मूल्य, नियमन, संस्था एवं नीतिगत संरचना आती है जिनका विकास परंपरागत ज्ञान आधारित तरीकों से हुआ है।

5.2.1पारंपरिक पारितंत्र का ज्ञान (TEK)

इसके अंतर्गत हजारों वर्षों से लोगों के पर्यावरण से सीधे संपर्क में रहने के कारण, स्थानीय एवं स्वजातीय समुदाय द्वारा अर्जित ज्ञान है। यह ज्ञान, स्थान विशेष हेतु है तथा पेड़-पौधे, जीव, प्राकृतिक घटनायें,

स्थानीय भूमि की विशेषताओं, जिनका उपयोग रोजगार एवं जीवनशैली को टिकाऊ करने में किया जा रहा है उन पर आधारित है। जैसे संसाधनों के उपयोग हेतु, आखेट, मछली पकड़ना, कृषि, जानवरों का रख-रखाव, वन संपदा का रख-रखाव, कृषि वनांचल इत्यादि है। इन सभी को प्राकृतिक संपदा के प्रबंध न के अंतर्गत रखा जाता है क्योंकि यह मुख्यत: जमीन, जल, पेड़-पौधे एवं जीवों के प्रबंधन से जुड़ा है।

इनके उपयोग के निश्चित तरीकों का विकास हुआ है–जैसे टिकाऊ उपयोग हेतु इनका प्रबंधन, बुद्धिमतापूर्ण उपयोग, लाभ को बराबरी से बाँटना, भविष्य हेतु भंडारण, मौसम पूर्वानुमान के स्थानीय तरीके भी हैं। इस ज्ञान में प्राकृतिक भूभाग की प्रकृति एवं विशेषतायें (स्थलाकृति, ढाल, मिट्टी एवं पत्थरों की विशेषता) मौसम एवं जलवायु तथा पेड़-पौधे एवं जीवों के विभिन्न प्रकार आदि अंतर्निहित हैं। जैविक एवं अजैविक संसाधनों के प्रचुर होने अथवा कम होने की दशा में समुदाय फैसले लेती है तथा प्राकृतिक आपदा एवं इससे जुड़ी समस्याओं का भी सामना करती है। स्थानीय समुदाय के लिए यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें अवलोकन, वर्गीकरण, विश्लेषण, समझना एवं संसार दृष्टि के विकास के साथ-साथ दैनिक जीवन में फैसले लेने की प्रक्रिया है।

5.2.2पारंपरिक तकनीकी ज्ञान :

यह ज्ञान का वह हिस्सा है जिसमें स्थानीय समुदाय[27] विभिन्न कार्यों के लिए औजार, मशीन, उपकरण बनाते हैं तथा उनका उपयोग प्राकृतिक संपदा के प्रबंधन में करते हैं। इस तरह के तरीकों का उपयोग मुख्यत: कृषि[26], मछली पालन[28], जानवरों के रख-रखाव[29], जंगल-प्रबंधन, हस्त करघा एवं हस्त शिल्प इत्यादि के लिए करते हैं। TTK में आवासीय परिसर के निर्माण[30], रूपरेखा बनाना, जल संसाधन की संरचना[31], संचार हेतु रोड, पुल इत्यादि का बनाना भी निहित है।

52.3 पारपंरिक मूल्य एवं नैतिक मूल्य (TVE) :

पारंपरिक मूल्य एवं नैतिक मूल्य पारंपरिक सांस्कृतिक तरीकों एवं गतिविधियों से जुड़े रहते हैं तथा मुख्यत: प्राकृतिक संपदा के परिप्रेक्ष्य में क्या करना उचित है, और क्या नहीं करना चाहिए, इन्हें परिभाषित

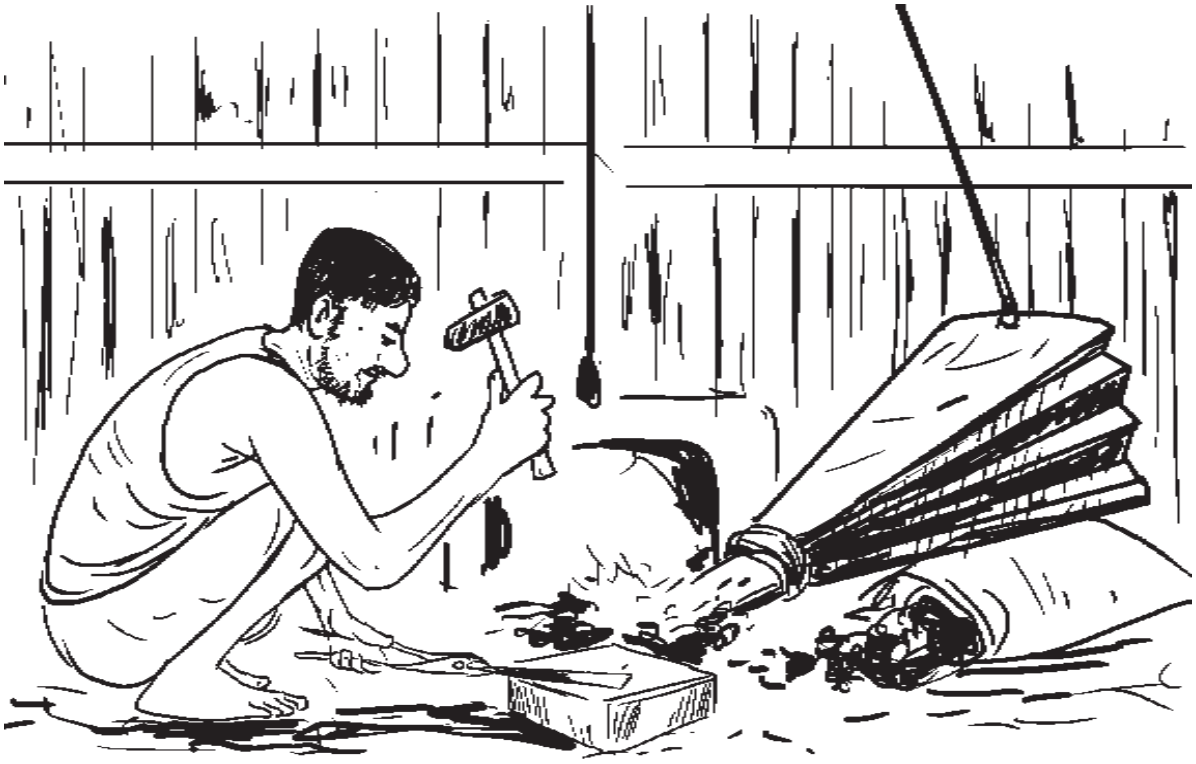

करते हैं, जैसे संपदा का उपभोग, संरक्षण एवं बराबरी से बाँटने के तरीके इत्यादि[32]। इस दौरान वैसी अवधारणा जैसे पूजनीय प्रजातियाँ, क्षेत्र, वन क्षेत्र, जल आच्छादित क्षेत्र जिनका संरक्षण अन्तर्निहित होता है। इसमें विभिन्न मौसम में गतिविधि करने के तरीके या गतिविधि पर अंकुश लगाना (रोकना) भी निहित है जैसे पुष्पाच्छादन के समय वन की कटाई पर रोक, जब मछलियों के प्रजनन का मौसम हो तो मछली पकड़ने पर रोक लगाना इत्यादि। कभी-कभी वैसी संस्थाओं का निर्माण जो कि मानव आवास का प्रबंधन करें, स्वास्थ्य के क्षेत्र में मानव क्रियाशीलन को नियंत्रित करना एवं साफ-सफाई का ध्यान, विभिन्न मौसम में खाद्य पदार्थों के उपभोग के नियम, अपशिष्ट निस्तारण, जानवरों के आवासीय परिसर के स्थान का नियमन, शौचालय का स्थान नियत करना आदि प्रमुख है।

स्थानीय क्षेत्र में उपरोक्त गतिविधि / तरीकों की खोज एवं उनके प्रलेखन द्वारा पारंपरिक तरीकों की समझ बनती है तथा इस ज्ञान के आधार का वैज्ञानिक आधार पर प्रमाणीकरण भी संभव है। इससे भविष्य में किस प्रकार की 'जीवन शैली' अपनाई जा सकती है, उनके पहचान में मदद मिलती है। भविष्य के आवासीय प्रबंध न, पर्यावरण, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन, जंगली जीवों की सुरक्षा में इस ज्ञान की मदद ली जा सकती है।

5.3 संरचना :

पारंपरिक ज्ञान प्रणाली की ओर पहला कदम उन पारंपरिक तरीकों को चिन्हित करते हुए यह पता लगाना है कि यह किस पारितांत्रिक सेवाओं से संबंधित है। जैसे खाद्य सामग्री एवं चारा प्रबंधन, पोषण हेतु सामग्रियों में बढ़ोतरी, स्वास्थ्य एवं साफ-सफाई, आपदा के जोखिम में कमी, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से बचना इत्यादि। इन क्रियाकलापों का प्रलेखन करना चाहिए साथ ही निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर ढूँढ़ना चाहिए–यह क्या है ? कहाँ पर किया जा रहा है ? कौन-कौन लोग ऐसा करते हैं ? क्या यह मानव गतिविधि का हिस्सा बन गया है ? कब से यह तरीके प्रचलित हैं ? यह क्रिया-कलाप किस प्रकार चलती है ? इनके प्रलेखीकरण में विधि-दस्तावेजीकरण की जरूरत है (अर्थात् गतिविधि के सभी भागों का प्रलेखन) जरूरत पड़ने पर इसमें फ्लो-चार्ट, विस्तृत विवरण, मान-चित्र, फोटो इत्यादि का उपयोग कर सकते हैं। (यह किस तरह का पारंपरिक ज्ञान है–TEK, TTK या TVE है यह लिखना चाहिए)। विशिष्ट संदर्भ में प्रमाणीकरण महत्वपूर्ण है तथा वैश्विक संदर्भ में इनकी सही समझ भी जरूरी है। उदाहरणार्थ-सतही बहाव से जल संचयन प्रणाली को लें–

इसमें हमें जाँच करनी होगी कि जल संभरण क्षेत्र का परिप्रेक्ष्य है या नहीं ? क्या ढाल (slope) को लिया गया है ? इसके जलग्रहण क्षेत्र उपचारतंत्र (Catchment Area treatment mechanism) पर ध्यान दिया गया है ? उपरोक्त सभी संदर्भित परिप्रेक्ष्य हैं। गुरुत्वाकर्षण के कारण जल के बहाव की जाँच इसका वैश्विक रूप है। कभी-कभी इस तरह के सतही जल प्रवाह का उपयोग केवल सिंचाई में करते हैं। इस प्रवाह से ऊर्जा निकाली जा सकती है या नहीं ? इसकी जाँच तथा सिंचाई को बिना अव्यवस्थित करते हुए या पेडल पम्प का उपयोग या जल आगार (डैम) बनाना जिससे क्षमता में बढ़ोतरी हो तथा पारंपरिक ज्ञान प्रणाली को अलग-थलग न करते हुए नई दिशा तय करना। इस तरह के प्रयास एक बेहतर तथा नवाचारी सोच का हिस्सा बन सकते हैं, जिससे प्रणाली ज्यादा सुगठित हो पाये।

चित्र-5.1 : उपविषय की संरचना

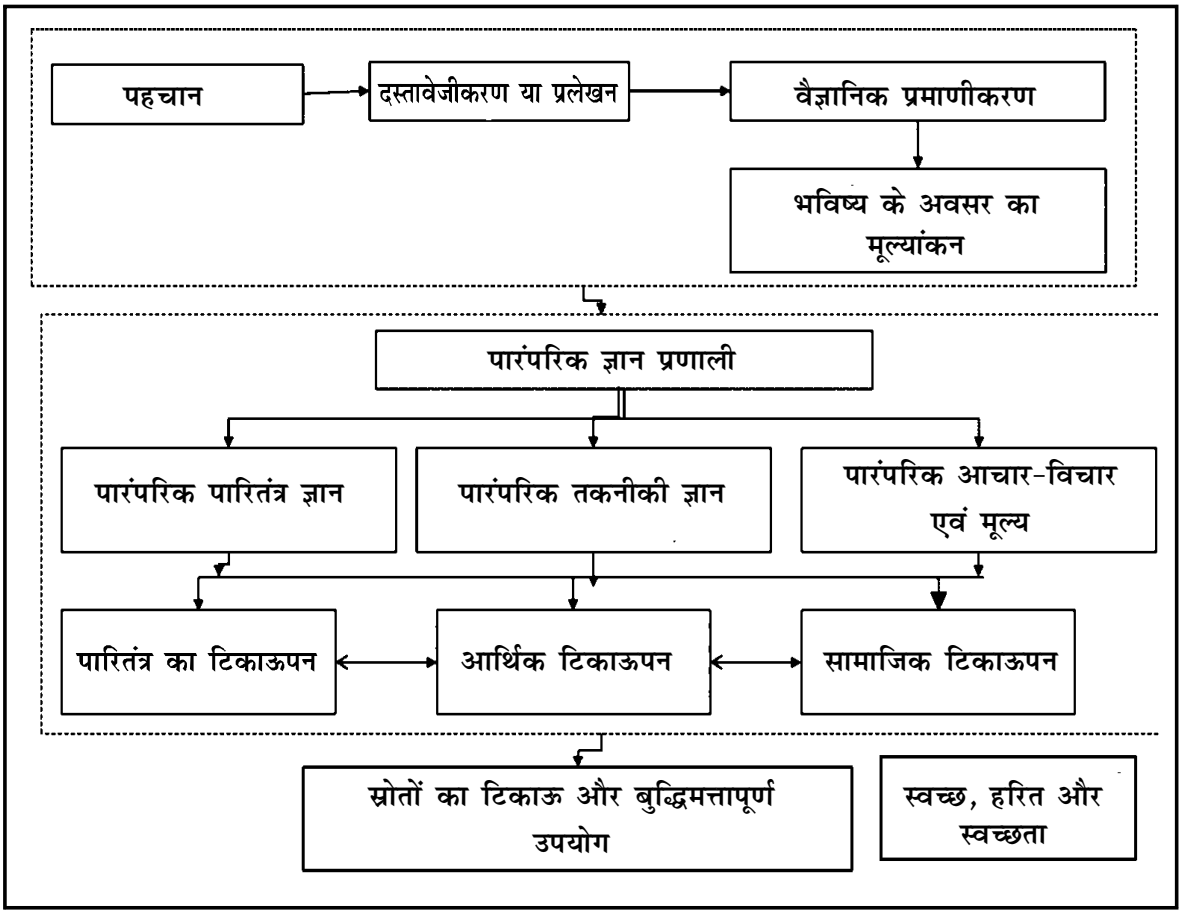

5.4 गतिविधियों के उदाहरण :

देश के विभिन्न भागों में पारंपरिक ज्ञान आधारित अनेकों गतिविधियाँ दिखाई पड़ती है जो कि विभिन्न समुदाय द्वारा अपनाई जाती है। यहाँ पर हम कुछ की उदाहरण स्वरूप चर्चा कर रहे हैं–

5.4.1पारंपरिक जल संचयन / गतिविधियाँ (Water harvesting) :

हमारे देश में जल जमा करने के बहुत पुराने तरीके हैं–इनमें वर्षा जल जमा करना, सतही जल बहाव को जीवित रखना, भूमि जल आगार को भरना इत्यादि प्रमुख हैं। यह सभी सहज तकनीक पर आधारित है तथा इनके प्रबंधन के सिद्धांत पारिभाषित हैं।

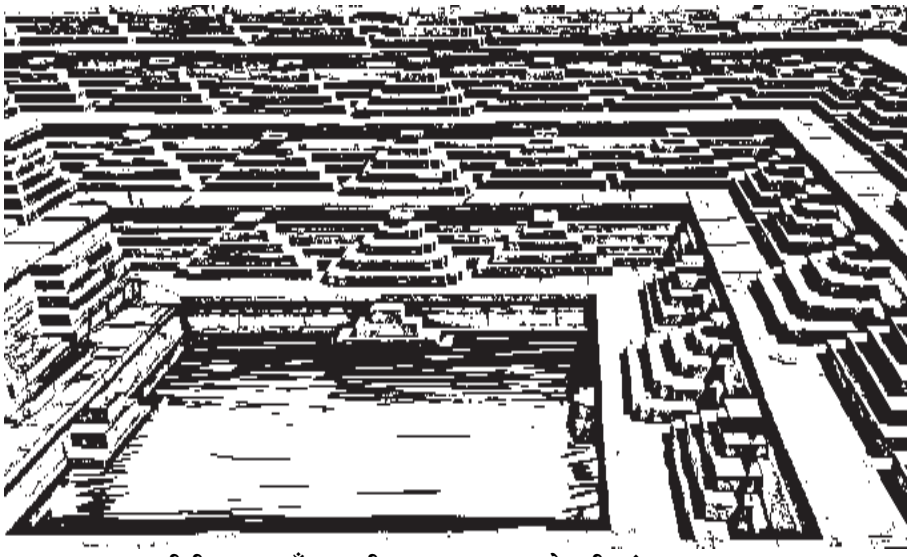

सीढ़ीदार कुआँ (प्राचीन जल जमा करने की संरचना)

सीढ़ीदार कुआँ जैसा कि नाम है सीढ़ीयों द्वारा कुआँ में उतरने का तरीका है। ऐसा पहला कुआँ भारत में 550 ई० में बना था–यह ऐसे इलाके में था जहाँ मौसमी वर्षा बहुत अधिक होती थी[34]।

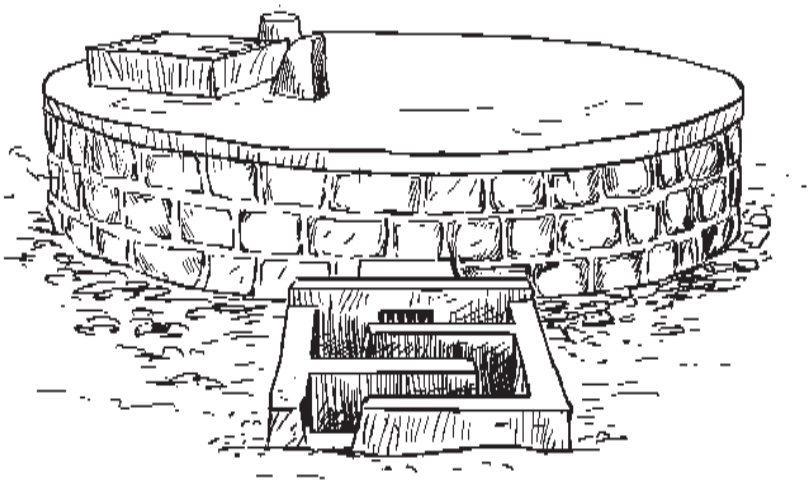

टनका-एक प्राचीन जल जमा करने की प्रणाली

इस तरह की प्रणाली शुरूआत में रेगिस्तानी इलाके में पाई जाती थी पर बाद में इनका उपयोग ग्रामीण इलाके में ज्यादा होने लगा। ग्रामीण 'टनका' फालोदी / बारमेर एवं बलोला क्षेत्र में पाया गया है, ये 6.1 मीटर गहरे, 4.27 मी० लंबे तथा 2.44 मीटर चौड़े थे। इस तकनीक से वर्षा जल का संचयन पश्चिमी राजस्थान[35] में एक कला के तौर पर किया जाता था।[35]

जोहड़, राजस्थान में जल संचयन का तरीका

जोहड़ एक बाँध का रूप है जो कि वर्षा जल आगार द्वारा भूमिगत जल के स्तर को भरने में काम आता है[36]।

जाबो, एक पारंपरिक पद्धति (नागा समुदाय क्षेत्र में)

जाबो का अर्थ है "जल को पकड़ना"–यह विधि पहाड़ों से वर्षा जल के भागने (गिरने) के क्रम में पकड़ने की है[37]। किक्रूमा में यह 1270 मी० की ऊँचाई पर है–किक्रूमा ग्राम, नागालैंड के फेक जिला में स्थित है तथा यह वर्षा जल सांभर क्षेत्र में है। सदियों पहले इसके ग्रामवासियों ने एक स्व-संगठित प्रणाली बनाई थी जिससे जल, वन एवं कृषि फार्म का जल प्रबंधन किया जा सके।

केरल के कसारगोड़ जिला में सुरंगास जल संभरण (water shed) प्रणाली बनी थी जो कि अब लुप्त होती जा रही है। यह क्षैतिज कुआँ का रूप है तथा इसमें कठोर लेटराइट मिट्टी में गुफा बना कर मिट्टी से छन कर आते हुए पानी को खुले तालाब में जमा किया जाता है। हाँलाकि इनकी संख्या में कमी आई है पर कसारगोड़ के किसानों के लिए यह जीवन रेखा के रूप में है तथा वे इस पर पीने के पानी की जरूरतों के लिए निर्भर करते हैं।

सुरंगास-केरल का पारंपरिक प्रणाली

5.4.2बांस के द्वारा ड्रिप सिंचाई :

भारत के पूर्वोत्तर इलाके में अवस्थित राज्यो में ड्रिप सिंचाई बाँसों के द्वारा की जाती है। वर्षा जल की मात्रा के बदलाव के अनुरूप बाँस-ड्रिप सिंचाई की संरचना बदलती जाती है तथा यह यहाँ के स्थानीय समुदाय के पारंपरिक ज्ञान का अनोखा स्वरूप दिखलाता है[39]।

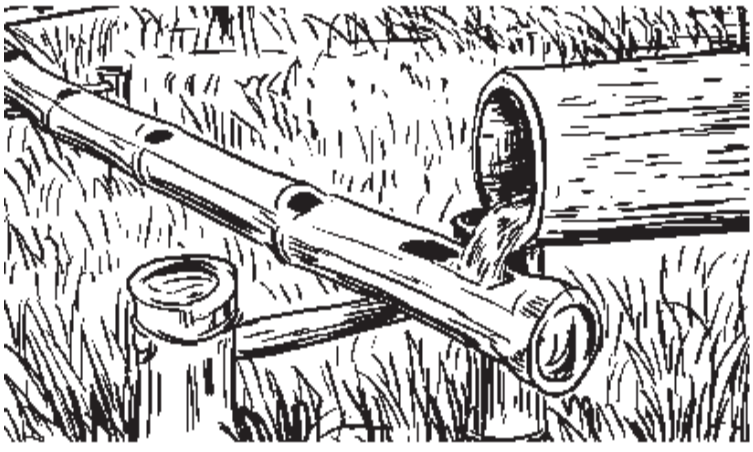

चित्र-7(A) में कार्बी समुदाय (इन्हें Longsar कहा जाता है) के द्वारा उपयोग में लाये जा रहे बाँस के ड्रिप सिंचाई वर्षा-जल संभरण (स्थान कार्बी-आंगलोंग)

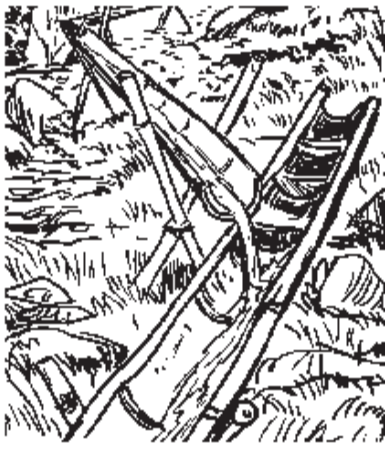

चित्र-7(B) में मेघालय में उच्च वर्षाक्षेत्र में इस तरीके का उपयोग

चित्र-9 : असम, अरूणाचल प्रदेश एवं भूटान के सीमा क्षेत्र में अवस्थित ड्रिप सिंचाई प्रणाली

5.4.3पारंपरिक आवास (Housing) – विज्ञान, तकनीक एवं नवाचार का परिदृश्य :

इन्हें 'देशज स्थापत्य' भी कहा जाता है–यह गृह निर्माण शिल्प का एक तरीका है जिसमें स्थानीय जरूरतों के अनुरूप खाका बनाया जाता है, इन्हें बनाने में लगी सामग्री के उपयोग में स्थानीय परंपरा का ध्यान रखा जाता है। शुरू-शुरू में स्थानीय निर्माण मजूदर, हुनरमंद लोग तथा परंपरा पर आधारित खाका के आधार पर ही किया जाता था। धीरे-धीरे इनका विकास होता गया तथा पर्यावरणीय सांस्कृतिक, तकनीक, आर्थिक[40] एवं ऐतिहासिक संदर्भों में यह बदलता गया। पर्यावरणीय प्राचलों में महत्वपूर्ण हैं–भूगर्भ की बनावट, भूमि एवं मिट्टी, मौसम एवं जलवायु, निर्माण सामग्री की स्थानीय क्षेत्र में उपलब्धता।

दूसरे प्राचल हैं–परिवार का आकार, परिवार की संरचना (संयुक्त या न्यूक्लियर) भोजन की आदतें, सामग्रियाँ, सांस्कृतिक गतिविधियाँ स्थानीय सोच इत्यादि। दीवारों के निर्माण में प्रयुक्त सामग्रियों (materials) के आधार पर इनकी श्रेणी बांटी जा सकती है, जैसे (Adobe) गीली मिट्टी की ईंट, मिट्टी की दीवार (Masonry) पत्थर, Clay या कंक्रीट के टुकड़े, काठ (Timber), बाँस इत्यादि। साधारणतया सामग्रियों को मिलाकर उपयोग किया जाता है। आवासीय परिसर का विस्तार भी अलग-अलग हो सकता है जैसे–गोलाकार आकृति, चौकोर प्लान या श्रृजुरेखीय (Linear) प्लान। उसी तरह एक तल्ला या अनेक तल्लों के मकान बनाये जाते हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में देशज आवासीय भवन साधारणतया ग्रामीण क्षेत्र में पाया जाता है तथा इसका प्लान, रूप एवं सामग्री विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में अलग-अलग हो सकते हैं।

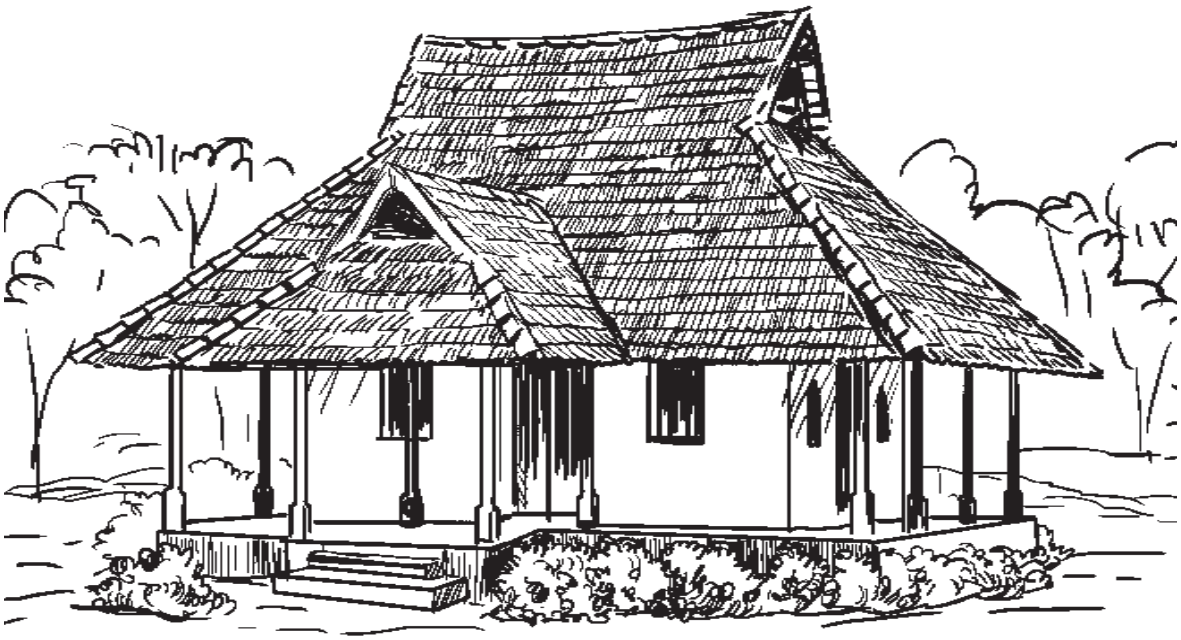

चित्र-10 : केरल का स्थानीय आवास[42]

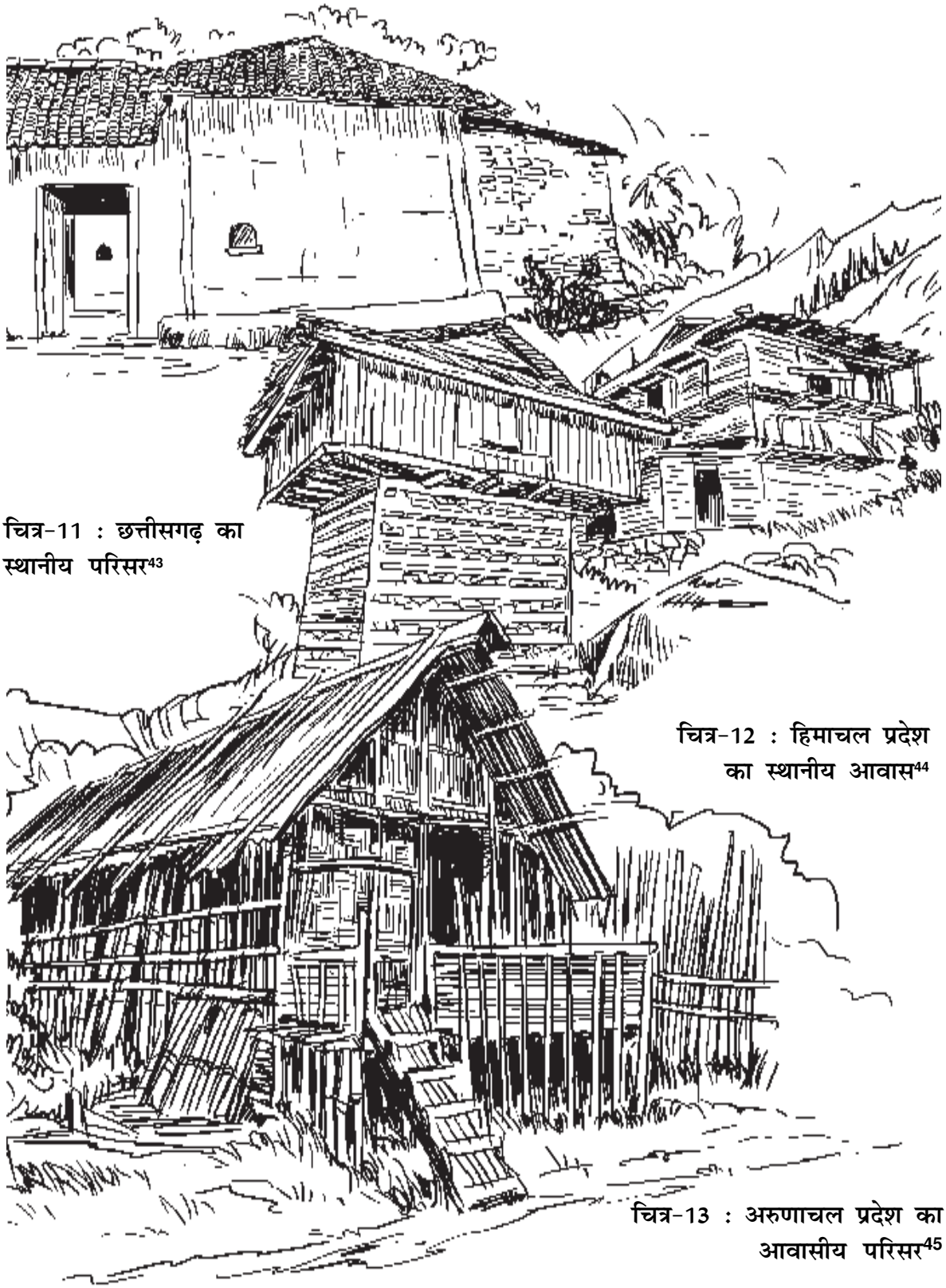

चित्र-11 : छत्तीसगढ़ का स्थानीय परिसर[43]

चित्र-12 : हिमाचल प्रदेश का स्थानीय आवास[44]

चित्र-13 : अरुणाचल प्रदेश का आवासीय परिसर[45]

इन क्षेत्र के तरीकों की खोजबीन करनी चाहिए जिससे इनके फायदे या नुकसान का पता चले तथा जलवायु परिवर्तन के या भूकम्प, पर्यावरणीय टिकाऊपन के संदर्भ में उपयोगी या अनुपयोगी क्षमता का आकलन किया जा सके।

5.4.4पारंपरिक खेती के तरीके :

देश के विभिन्न भागों में पारंपरिक कृषि के तरीके अभी भी महत्वपूर्ण हैं। इनमें फसल का चुनाव करना, भूमि का प्रकार, खेत की तैयारी, मिट्टी की उर्वरता का प्रबंधन, कीट एवं फसली बीमारियों का प्रबंधन, सिंचाई, फसल काटना, फसल कटने के बाद उसका प्रबंधन, बीजों का संरक्षण, इत्यादि प्रमुख क्रिया कलाप हैं। इनके अतिरिक्त इन गतिविधियों में विभिन्न स्थानीय औजार, मशीन उपयोग में लाया जाता है। इनका निम्नलिखित वर्णन किया गया है–खेती के लिए हल, या Hoe विभिन्न आकार-प्रकार के पाये जाते हैं, जिससे मिट्टी जोती जाती है। इनका प्रकार स्थान विशेष की मिट्टी की गुणवत्ता, भूमि की स्थिति एवं फसल के चुनाव पर निर्भर करता है। इतना ही नहीं विभिन्न प्रकार की फसलों के लिए फसल-कटाई के औजार भी बदल जाते हैं। इसका एक अच्छा उदाहरण है–हँसिया के विभिन्न आकार एवं प्रकार जो कि पुराने जमाने से उपयोग किये जा रहे हैं। उसी तरह भूमि-फसल (Land Cultivars) के विभिन्न प्रकार, विभिन्न क्षेत्रों में पाए जाते हैं, जो कि जलवायु-परिवर्तन को सहन करते हैं क्योंकि इनमें से अधिकांश सूखे या बाढ़ से प्रभावित नहीं होते हैं।

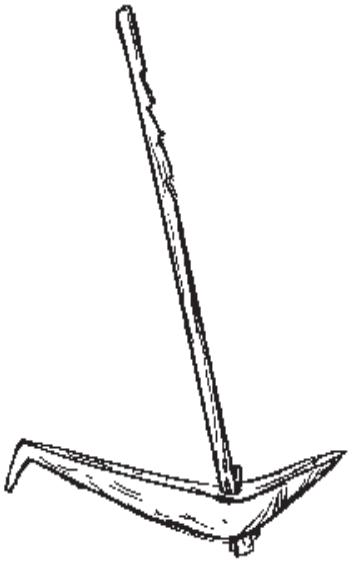

चित्र-14 : पारंपरिक हल के विभिन्न आकार-देश के विभिन्न भागों में[47]

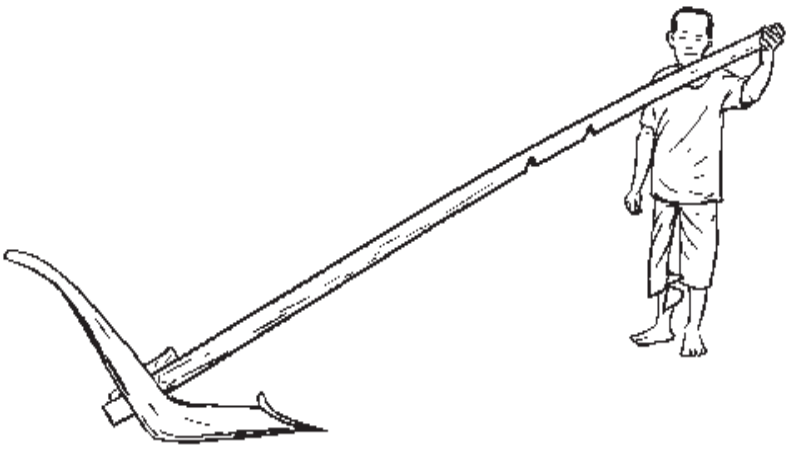

चित्र-15 : टांगसा नागा द्वारा उपयोग में लाये जाने वाले हल

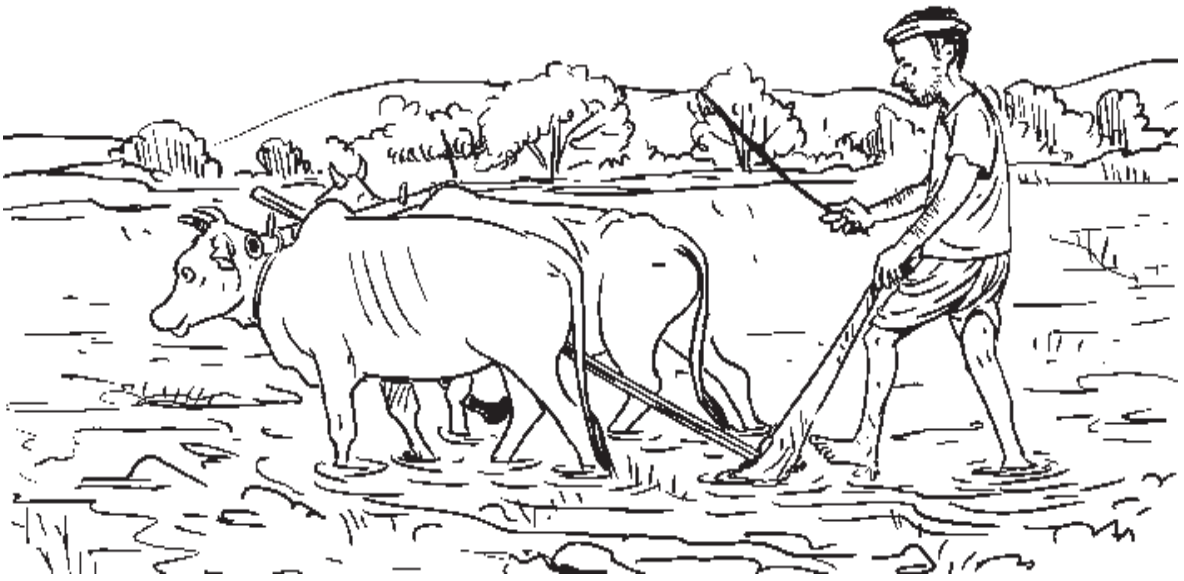

चित्र-16 : भारत के विभिन्न क्षेत्र में पाये जाने वाले हँसिया (sickle)

पारंपरिक चावल की किस्में :

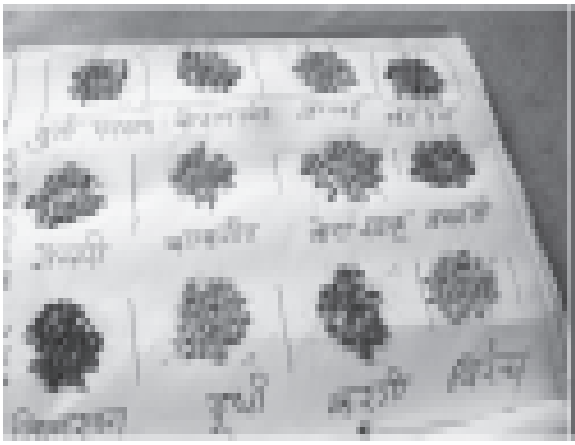

चित्र-17 : केन्द्रीय एवं उत्तरी भारत में चावल की किस्में[49]

चित्र-18 : असम एवं पूर्वोत्तर क्षेत्र में चावल की किस्में

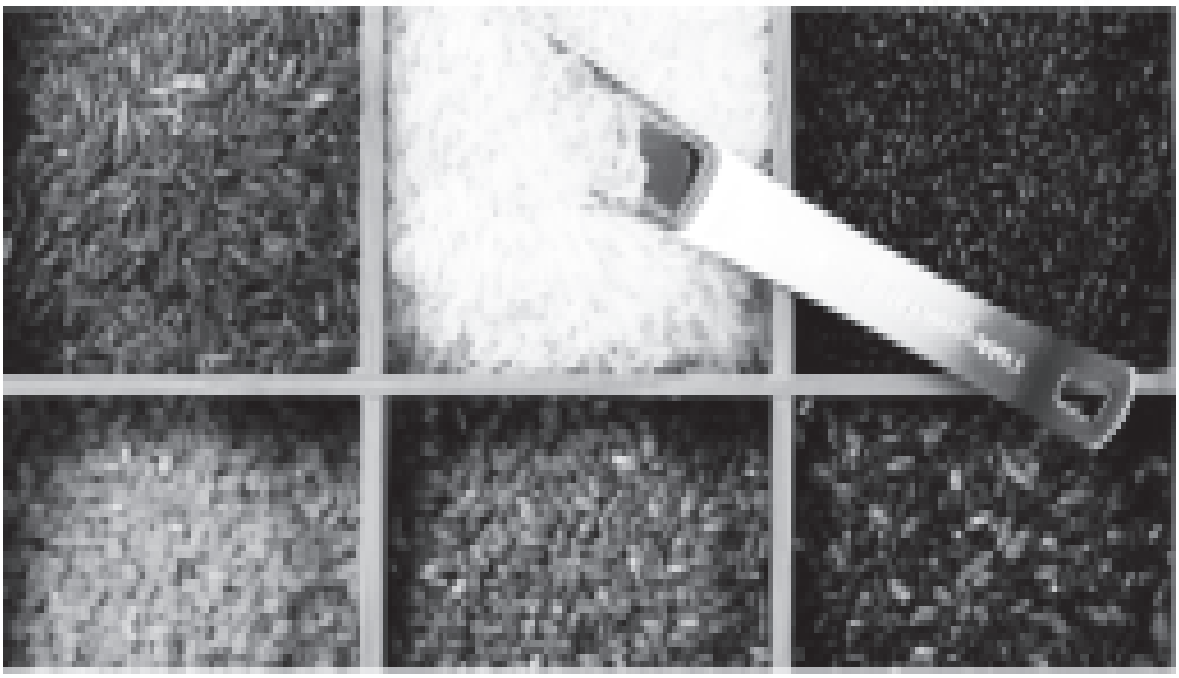

चित्र-19 : कावेरी डेल्टा (तंजवौर, तमिलनाडु) क्षेत्र के चावल की विशिष्ट किस्म

बीजों के परिरक्षण की पारंपरिक तकनीक–

फसल के बीजों को बनाये रखने एवं संरक्षित रखने हेतु विभिन्न क्षेत्र के किसान अलग-अलग तरीके अपनाते हैं। इनमें कुछ निम्नलिखित हैं–

चित्र-20 : Nyishi महिलाओं (निम्न सुवान्सीरी, अरूणाचल प्रदेश)[52] के द्वारा संरक्षित बीज

5.4.5मौसम पूर्वानुमान :

देश के विभिन्न क्षेत्र के किसान विभिन्न प्रकार की स्थानीय विधियों का उपयोग कर मौसम पूर्वानुमान लगाते हैं। उदाहरणार्थ; हिमाचल प्रदेश के किसानों का विश्वास है कि अगर मधुमक्खियाँ उत्तर की पहाड़ियों की तरफ जा रही हैं तो वर्षा नहीं होगी और अगर वे दक्षिण के तरफ जा रही हैं तो अच्छी वर्षा होगी। जबकि राजस्थान के बहुतेरे स्थानीय किसानों का मत है कि अगर मधुमक्खियाँ ज्यादा संख्या में एक साथ दिखाई पड़ रही है तो अच्छी वर्षा एवं अच्छे फसल की संभावना है।

उसी प्रकार असम के थार्वी पहाड़ी जनजाति ने पारंपरिक कैलेन्डर बनाया है जिसके आधार पर वे अपनी कृषि-योजना बनाते हैं। इसमें महीनों एवं समय-अंतराल को कुछ पौधों एवं जीवों की संरक्षित विशेषताओं एवं भौतिकीय विशेषताओं से दिखलाया जाता है।

उपरोक्त सूचक इतने सही हैं कि उनके लिए विशेष 'नाम' (Phrase) हरेक महीने में दिया जाता है। उदाहरणार्थ-साल के पहले महीने को Thang Thang (February) कहा जाता है-Phrase – "Thang Thang ritlang" नोट किया जाता है। इसमें Thang Thang महीने का सूचक है तथा rit का अर्थ है झूम (Shifting Cultivation), lang का अर्थ है-भूमि पर खेती करना : अतः Thang Thang ritlang का अर्थ हुआ खेती के लिए जमीन की तैयारी करने का समय। यह महीना दो तरह के फूल देने का समय है–Pharche (Frythrina stricta Roxb : Leguminoceae) एवं Pharkong (Bombay malabarium DC; Bombacaceae). ये दोनों उस समय के सबसे महत्वपूर्ण सूचक है, अतः स्थानीय लोगों को याद पड़ जाता है कि अभी झूम (Jhum) के लिए नये भूमि-टुकड़े को चिन्हित करने का समय है।

इसी प्रकार सभी महीनों के लिए उनके पास जैविक सूचक हैं तथा इनका संबंध कृषि गतिविधि से है। अधिकांश समय इस तरह की घटनायें मौसम से जुड़ी रहती हैं तथा मौसम से जुड़ कर कृषि गतिविधि[54] चलती है। इसी प्रकार के उदाहरण देश के विभिन्न कृषि-जलवायु क्षेत्र में पाये जाते हैं।

5.4.6पालतू जानवरों के रख-रखाव के पारंपरिक तरीके :

विभिन्न जानवरों की प्रजाति को पालने से संबंधित ज्ञान की परंपरा बहुत पुरानी है। इसकी शुरूआत तब हुई थी जब से मनुष्य जानवरों को अपनी जीवन-शैली का हिस्सा बनाने लगा। इस क्षेत्र का पारंपरिक ज्ञान, ग्रामीण भारत में अभी भी उपयोग में लाया जा रहा है पर इनका सही दस्तावेजीकरण नहीं हो पाया है और ऐसी संभावना है कि भविष्य में पारंपरिक ज्ञान का कुछ हिस्सा विलुप्त हो जाय।

उदाहरणार्थ, जानवरों के चारा से संबंधित पारंपरिक तरीके हैं जिनमें फसल अपशिष्ट, पुआल, ढंठल, चारा, फुनगी, फसलों के दाने निकालने के बाद भूसी, धान-पुआल इत्यादि, इनमें फसल का बचा हुआ भाग–दाना का छिलका, भूसी, गेहूँ का पुआल, चावल, बाजरा, भुट्टे। पारंपरिक कृषि एवं जानवरों के रख-रखाव को एक साथ करने में महिलाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जानवरों की बीमारियों का इलाज, बचाव एवं ठीक करने में स्थानीय जड़ी-बूटी, औषधि का पारंपरिक ज्ञान समृद्ध रहा है।

समुदाय की स्त्रियों को औषधियों और जड़ी के बारे में समझ एवं महत्व का ज्ञान है। उन्हें यह जानकारी है कि कौन-सी पत्तियाँ, चारे के रूप में सबसे अच्छी हैं तथा उनके दूध की क्षमता को बढ़ाती हैं। वे विभिन्न सामग्रियों को मिलाकर ऐसा चारा बनाती हैं जिससे जानवरों का दूध बढ़ जाय। अतः यह क्षेत्र गतिविधियों का प्रलेखीकरण एवं उनकी जाँच के लिए उपयुक्त है।

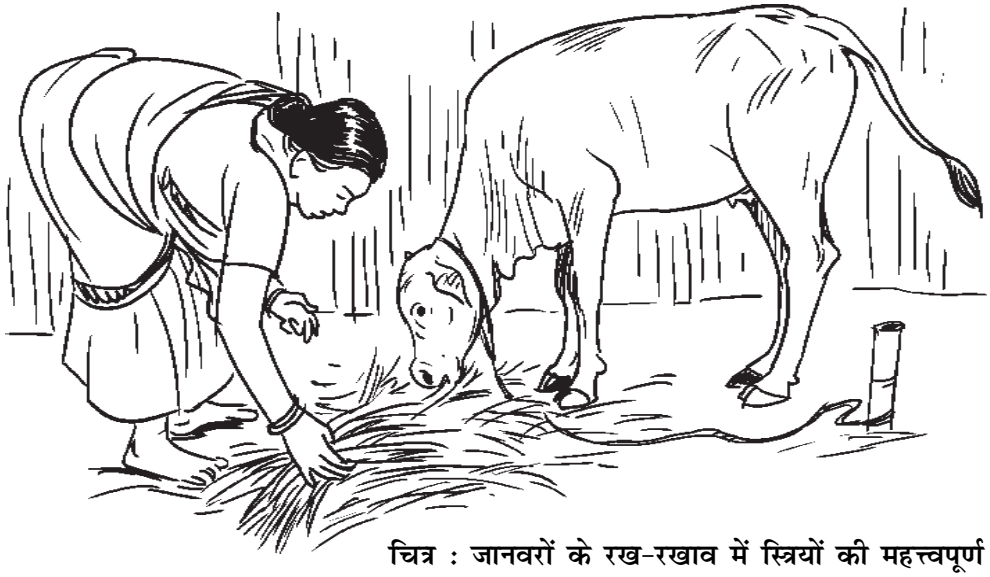

चित्र : जानवरों के रख-रखाव में स्त्रियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका

सारणी 5.1 : जानवरों की बीमारियों का इलाज

क्रम सं०	बीमारी	स्थानीय उपाय (तरीके)
1.	घाव	देवदार पेड़ का तेल
2.	कृमि (बाहरी)	गो-मूत्र एवं राख
3.	भूख न लगना	धनिया + प्याज + काला जीरा + दही
4.	बुखार	जंगली पत्ते, तने का छिलका
5.	पेट के कीड़ों को मारना	काला जीरा + धनिया (चारा के साथ मिलाकर)
6.	पेट फूलना (अफरजाना)	काला जीरा
7.	पागुर करना	काला जीरा
8.	छोटे चोट	बांस के पत्ते + स्थानीय घास
9.	जूँ कीटों से बचाव	करोई घास रगड़ना
10.	खुर एवं मुख रोग	गीली मिट्टी में पैर रखना तथा फिनायल

(**स्रोत** : Aminal Husbandary Practices of Organic Farmers : An appraisal : Subramanyeswaic B and Mahesh Chander, Veterinary World, 2008)

ग्रामीण क्षेत्र में घरेलू पशुओं के चारे का प्रबंधन एक चुनौती है। पारंपरिक तौर-तरीकों में विभिन्न तकनीक का उपयोग किया जाता है–

उदाहरणार्थ-मेघालय के गारो पहाड़ी क्षेत्र में घास के मैदान प्रचुर मात्रा में है। झूम-खेती के भूखंड को गारो-समुदाय अपने पशुओं के चारे के लिए बचाते हैं। साधरणतया, वे अपना पशु-आवासीय परिसर झूम-भूमि के पास ही रखते हैं जिससे पशुओं को चरने में सुविधा हो। जब झूम प्लाट के घास की मात्रा घटती-बढ़ती है तो पशुओं का शेड भी बदल दिया जाता है। यहाँ महत्वपूर्ण है कि खेती के टुकड़े के आास-पास पशु-शेड रखने से उन्हें गोबर तथा गोमूत्र झूम खेती के लिए आसानी से मिल जाता है।

विभिन्न क्षेत्रों में पशु-शेड, स्थनीय पर्यावरण की दृष्टि से बनाये जाते हैं। असम के बारपेटा एवं बक्सर जिले में, ग्रामीण घरेलु पशुओं को दो तल्ला पशु आवास में रखते हैं। जिनमें प्रथम तल्ले पर पशु-आवास रहता है तथा आवासीय परिसर साफ रखने में आसानी होती है एवं गोबर जमा करना भी आसान हो जाता है। स्वच्छ पशु-आवास रहने पर जानवर भी स्वस्थ रहते हैं, खाास कर गर्मी एवं वर्षा ऋतु में होनेवाली बीमारियों से बचाव संभव होता है।[58]

चित्र-20 : मेघालय के गारो समुदाय द्वारा चारागाह प्रबंधन (झूम खेती से जुड़ी) (फोटो-J. K. Sarma)

चित्र-21 : दो तल्ले वाली पशु-शेड (फोटो-जयन्त कुमार शर्मा)

इसी प्रकार विभिन्न पारंपरिक तरीके अपनाये जाते है जिनका दस्तावेजीकरण एवं वैज्ञानिक आधार पर उनका मूल्यांकन, अध्ययन का महत्वपूर्ण विषय है।

5.5 उपविषय के अंतर्गत विभिन्न विषय (Coverage) :

इस उपविषय में वैसे सभी विषय आ सकते हैं जिनका संबंध पारंपरिक पारितांत्रिक एवं तकनीकी ज्ञान से है, इसके साथ पारंपरिक मूल्य एवं 'नैतिक मूल्य' भी जुड़ा है। इस तरह के अध्ययन-व्यवस्था प्रणाली, आवास-प्रणाली, कृषि एवं इससे जुड़े तरीके, प्राकृतिक संसाधन का प्रबंधन, भोजन-प्रणाली, आपदा प्रबंधन, मनुष्य एवं जंगली पशुओं का अन्तर्विरोध, हस्तकरघा एवं हस्तशिल्प पारंपरिक औषधि के तरीके इत्यादि, किये जा सकते हैं।

यह आशा की जाती है कि अध्ययन में विभिन्न तौर-तरीकों का वैज्ञानिक प्रलेखन, वर्तमान स्वरूप, प्रबंधन के तरीके, साथ ही आधारभूत ज्ञान का वैज्ञानिक प्रमाणीकरण तकनीक, सामग्रियों का उपयोग (अगर हो तो) उन तरीकों के संदर्भ में निहित हो। ऐसा करने में द्वितीयक स्रोतों का उपयोग भी किया जा सकता है, जिसमें स्रोतों का संदर्भ भी रहे तथा इनका उपयोग ज्ञान की महत्ता, को स्थापित करने या प्रवृत्तियों को बताने में किया जाय। हाँलाकि प्राथमिक आंकड़ा (सर्वेक्षण के द्वारा), या क्षेत्रीय प्रयोग के द्वारा या प्रयोगशाला के प्रयोग के द्वारा अनिवार्य है जिससे अध्ययन का सार विश्लेषण एवं व्याख्या हो पाये।

5.6 कुछ महत्त्वपूर्ण पक्ष जिन पर ध्यान केन्द्रित करने की जरूरत है :

पारंपरिक तरीकों में अनोखापन के आधार पर चिन्हित करना, इनका दस्तावेजीकरण एवं उपयोग के स्तर की जाँच / प्रभावकारी होने का स्तर है तथा यह उचित है। वैज्ञानिक आधार पर किसी परियोजना अध्ययन हेतु उपरोक्त पक्ष महत्वपूर्ण हैं। इस परिप्रेक्ष्य में परियोजना कार्य योजना में निम्नलिखित तत्व जरूरी हैं–परंपरागत गतिविधि का अवलोकन एवं चिन्हित करना, किसी भी समस्या को लेने के पहले स्थानीय क्षेत्र में स्थानीय समुदाय की दैनिक जीवन की गतिविधियों एवं कार्य का अवलोकन करना चाहिए। उन अवलोकनों में वैसी पारंपरिक गतिविधि को चुनना चाहिए जो कि उस इलाके में अनोखी हो या उस समुदाय के लिए अनोखी हो। अवलोकन के मुद्दों को सिलसिलेवार ढंग से नोट करना चाहिए जिससे विशिष्ट अध्ययन विषय चिन्हित करने में मदद मिले, जैसा कि निम्नलिखित सारणी में दिया गया है।

सारणी 5.2 : अवलोकन से प्राप्त सूचना/सामग्री का सूचीकरण

गतिविधि	तैयारी हेतु गतिविधि	बीच की गतिविधि	अंतिम गतिविधि	उपकरणों एवं तकनीक का उपयोग	प्रबंधन सिद्धांत	सहभागी श्रमिक	अनोखापन (अगर हो तो)	अन्य विचार
आवास निर्माण	खाका बनाना	निर्माण सामग्री का चुनाव एवं उपयोग	निर्माण करना	औजारों के प्रकार–काटने, फिट करने एवं निर्माण के विभिन्न स्तर पर	सामग्री की बरबादी कम करने पर केन्द्रित है। लेबर (श्रम) एवं टाइम तथा आर्थिक खर्च न्यूनतम है ? हाशिये पर के लोगों के लिए मददगार है या नहीं।	लगे हुए लोगों की क्षमता का उपयोग पूरा हुआ या नहीं।	पर्यावरणीय मित्रवत है या नहीं, भूकंपरोधी, ऊर्जा क्षमतावान	अवलोकन के समय स्थानीय सभी साइट पर जाकर, स्थानीय गतिविधि के लोगों से विचार- विमर्श जो कि इस कार्य में लगे हैं।
जल प्रबंधन	स्रोत चिन्हित करना	उपयोग के विभिन्न रास्ते तथा उद्देश्य	अंतिम उपयोगिता	प्रबंधन में न्यूनतम अपशिष्ट प्राप्त होने के लिए उपाय स्रोत की सुरक्षा साफ-सफाई का ध्यान	जो लोग काम कर रहे हैं उनकी भूमिका एवं निर्भर योग्यता	अगर कोई बाधा है, तो कैसे उसे पार किया गया, खास कर मात्रा एवं गुणवत्ता को ध्यान में रखकर		अवलोकन के लिए स्थान विशेष के सभी साईट पर जाना, स्थानीय गतिविधि करने वालो से विचार विमर्श

गतिविधि	तैयारी हेतु गतिविधि	बीच की गतिविधि	अंतिम गतिविधि	उपकरणों एवं तकनीक का उपयोग	प्रबंधन सिद्धांत	सहभागी श्रमिक	अनोखापन (अगर हो तो)	अन्य विचार
कृषि	फसल के प्रकार की भूमि की तैयारी	बीजों का चुनाव या लगाने वाली सामग्री का चुनाव (क्यारी बनाना) मिट्टी के पोषण का प्रबंधन, जल प्रणाली खर-पतवार, कीट नियंत्रण	फसल काटना एवं कटाई के बाद की गतिविधि दिशा एवं प्रक्रिया	औजार एवं गियर्स जो उपयोग में है	सार प्रबंधन सिद्धांत जो कि न्यूनतम कचरा, फसल-सुरक्षा तथा स्वच्छता बनाये रखने हेतु उपयोग में है	गतिविधि में श्रमिकों का उपयोग एवं उनकी भूमिका तथा निर्भर योग्यता	अगर कोई व्यवधान को पार किया गया है, अगर यह कोई सांस्कृतिक भोजन प्रणाली में अनोखा उत्पाद है, इसका कोई मौसम एवं जलवायु से रिश्ता है। इसमें मूल्य संवर्धन की संभावना है।	अवलोकन के समय, स्थान विशेष में सभी कार्य-स्थल पर जाना स्थानीय गतिविधि करने वालों से विचार विमर्श जो कि इस कार्य में लगे हैं।
खाद्य एवं औषधि	किनके लिए है या किस के लिए है।	स्रोातों की पहचान एवं उनका उपभोग	फसल लेने के तरीके, अंतिम उत्पाद की तैयारी	उपकरण, औजार एवं गियर्स जिनका उपयोग हो रहा है	मूल प्रबंधन सिद्धांत-जिससे अपशिष्ट न्यूनतम हो उत्पाद सुरक्षा एवं स्वच्छता रखना	गतिविधि में श्रमिकों का योगदान एवं उनकी भूमिका तथा निर्भर योग्यता	अगर कोई व्यवधान को पार किया गया है-यह सांस्कृतिक भोजन एवं स्वास्थ्य प्रणाली में अनोखा उत्पाद है, इसका जलवायु एवं मौसम से कोई संबंध है ? इनके मूल्य संवर्धन की संभावना है ।	अवलोकन के समय, स्थान विशेष के सभी कार्य-स्थल पर जाना स्थानीय गतिविधि के लोगों से, जो कि इस कार्य को कर रहे हैं उनसे विचार-विमर्श

गतिविधि	तैयारी हेतु गतिविधि	बीच की गतिविधि	अंतिम गतिविधि	उपकरणों एवं तकनीक का उपयोग	प्रबंधन सिद्धांत	सहभागी श्रमिक	अनोखापन (अगर हो तो)	अन्य विचार
हथकरघा एवं हस्तशिलप	किसके लिए और किस कार्य के लिए	सरंचना तैयार करना, कच्चे माल के स्रोत	उत्पाद की गतिविधियाँ कच्चे माल की प्रक्रिया एवं अंतिम उत्पाद	उपयोग होने वाले औजार/ उपकरण एवं गियर्स	मूल प्रबंधन सिद्धांत जिनसे न्यूनतम अपशिष्ट की प्राप्ति होती है, उत्पाद की सुरक्षा एवं साफ-सफाई रखना	अगर स्थानीय मौका है ? सांस्कृतिक दैनिक जीवन में यह एक अेकला उत्पाद है, इसका जलवायु एवं मौसम से कोई रिश्ता है इसकी मूल्य संवर्धन क्षमता है ? क्या यह टिकाऊ उपभोग गतिविधि में सहायक है ?	क्या स्थानीय मौका है ? दैनिक सांस्कृतिक जीवन में इसका स्थान अनोखा है, इसका जलवायु एवं मौसम से संबंध है। इसकी मूल्य संवर्धन क्षमता है ? यह टिकाऊ उपभोग के तरीकों को मदद पहुँचाता है।	अवलोकन के समय, स्थानीय सभी केन्द्रों पर जाकर स्थनीय समुदाय से विचार-विमर्श। इनके साथ स्थनीय उपभोक्ता से विचार-विमर्श

उपरोक्त में कुछ उदाहरण ही दिये गये है। सूची में अन्य भी आ सकते हैं। अगर उपरोक्त सारणी के आधार पर अवलोकन को सूचीबद्ध किया जाय जो स्थानीय अवलोकन का सूचीकरण कर सकते हैं। इसके आधार पर अवधारणा एवं अध्ययन के लक्ष्य बनाये जा सकते हैं, साथ ही वैज्ञानिक प्रमाणीकरण करने पर एक विस्तृत अध्ययन का रूप ले सकता है। यह हमें क्षेत्र की पहचान करने में तथा औजारों एवं गियर्स का नवाचारी खाका बनाने में मदद कर सकता है। जिनसे पारंपरिक गतिविधियाँ स्थापित हो पायेगी।

★ विस्तृत दस्तावेजीकरण :

शुरू के अवलोकन एवं सूचनाओं के बाद यह जरूरी है कि पारंपरिक तरीकों का विस्तृत प्रलेखीकरण किया जाय–जिसमें सूची में दिये गये सभी पक्षों पर टिप्पणी रहे। इस प्रलेखीकरण में प्रक्रिया की समझ पर नोट तैयार करेंगे जिसे निम्नलिखित चार्ट द्वारा दिखलाया गया है–

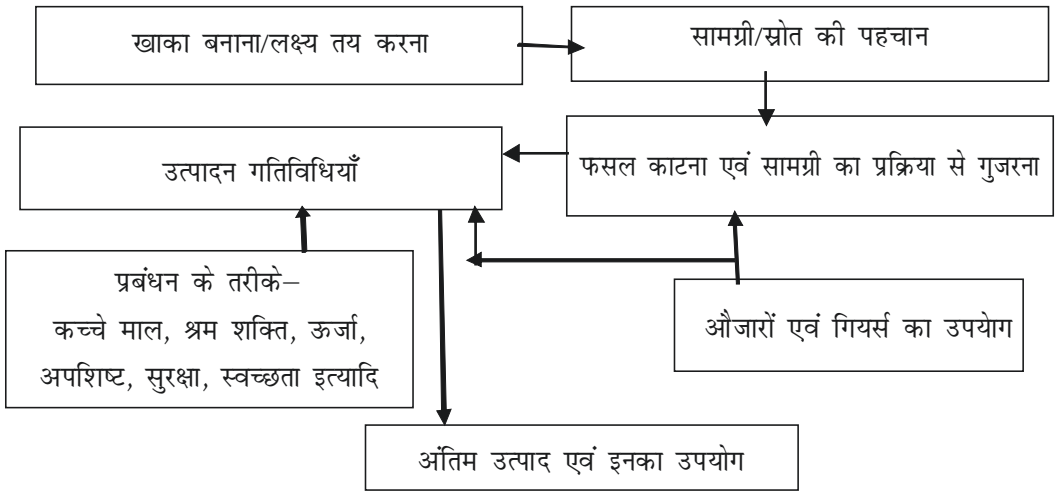

चित्र-5.2 उत्पाद आधारित गतिविधियों का उदाहरण (यह गतिविधियों के स्वरूप के आधार पर बदल सकता है)

★ मूल सिद्धांत का प्रमाणीकरण :

समुदाय द्वारा चयनित विशेष प्रकार के तरीकों का विज्ञान-विधि के उपयोग से प्रमाणीकरण एक महत्वपूर्ण पक्ष है। अगर यह तरीका मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाता है, तब मिट्टी की जाँच कर गतिविधियों के प्रभाव का प्रमाणीकरण करना जरूरी है।

अगर यह मौसम से संबंधित है तो मौसम के प्राचलों की जाँच कर प्रमाणीकरण करना चाहिए। उसी तरह अगर 'हर्बल औषधि' से संबंधित है तो जड़ी-बूटी के रासायनिक आधार की जाँच कर, पहचान कर इनका स्वास्थ्य पर प्रभाव देखना जरूरी है। अगर जल प्रबंधन से संबंधित हे तो जरूरी है कि उन गतिविधि यों से जल संरक्षण किस प्रकार प्रभावित हो रहा है, इसकी जांच की जाय, या निर्भर योग्य जल प्रणाली मिलती है या नहीं, स्रोत-जल वितरण का रख-रखाव होता है या नहीं, जल की स्वच्छता कैसी है ? अर्थात् वैज्ञानिक प्रमाणीकरण का दायरा इस पर निर्भर करता है कि विषय/गतिविधि/उत्पाद किस प्रकार का है। हाँलाकि प्रमाणीकरण के बिना इनके उपयोग पर प्रश्नचिन्ह लग सकता है, एवं इसके बिना हम भविष्य में इसके उपयोग पर कार्य नहीं कर पायेंगे तथा इनके विकास हेतु पेशकदमी नहीं ले पायेंगे।

5.7 परियोजना विचार :

परियोजना संख्या-1

भारत के जनजातीय क्षेत्र की भोजन-प्रणाली में पोषणयुक्त कीटों का जैव रासायनिक विश्लेषण :

विश्व में जीव आधारित प्रोटीन की कमी एक चुनौती के रूप में है। यह मानव आबादी के लगातार बढ़ने तथा पर्यावरण के निम्नीकरण के कारण प्रमुख समस्या के रूप में सामने आया है। पारंपरिक समाज बहुत दिनों से 'कृमि' को आहार के रूप में लेता रहा है क्योंकि ये प्रोटीन के स्रोत हैं। अब समय आ गया है कि "कीटों को खाना" (entomophagy) जो पारंपरिक समाज में है, उन्हें पहचाना जाय तथा खाद्य उत्पादन के संदर्भ में पारितंत्र पदछाप को कम किया जा सके।

लक्ष्य–

1) कीटों के पोषण-मूल्य का विश्लेषण।

2) कीटों के पोषण-मूल्य की तुलना प्रामाणिक पोषक भोज्य पदार्थ से करना।

विधि–

1) स्थानीय क्षेत्र में भोजन में शामिल कीटों, कृमि की सूची तैयार करना।

2) उनकी पहचान, प्रजनन (breeding) मौसम तथा दूसरी सूचनाएँ एकत्रित करना।

3) महत्वपूर्ण जैव रासायनिक जांच को नोट करें (जैसे स्टार्च, शुगर, प्रोटीन की मात्रा)।

4) इनमें पोषक तत्वों की मात्रा की तुलना दूसरे पोषक भोज्य सामग्री से करें।

5) अगर अर्थपूर्ण अंतर दिखलाई पड़ता है तो नोट करें।

वांछित निष्कर्ष–

यह निकालना कि कीड़ों के द्वारा पोषण-मूल्य अर्थपूर्ण है या नहीं।

प्राचल	कीड़ा/कृमि	बीफ/पशु-मीट
प्रोटीन		
वसा		
चयापचयी ऊर्जा (KCal/Kg)		

निष्कर्ष –

अगर लोकप्रिय सामिष भोजन को कीड़ों से बदला जाय तो पारितंत्र में संतुलन हो सकता है।

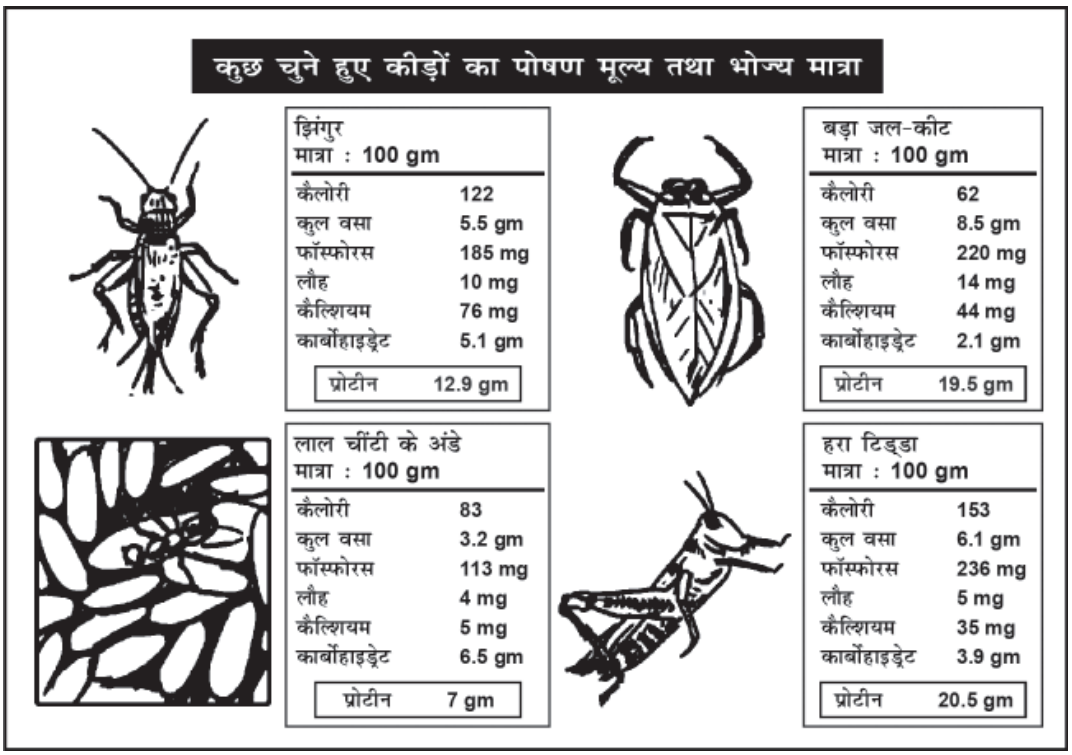

चित्र : कीड़ों के पोषण-मूल्य के उदाहरण

संदर्भ–

1. Edible Insects : Traditional Knowledge or Western Phobia by Alam L. Yen
2. Diversity of Edible Insects and practices of Entemophagy in India : An overview by Jhama Chakraborty

परियोजना संख्या-2

डेंगू बुखार की चिकित्सा में हर्बल-औषधि के उपयोग का अध्ययन :

भूमिका–

हाल के वर्षों में डेंगू बुखार से पीड़ित लोगों की तथा मरने वालों की संख्या में वृद्धि के कारण 'पारंपरिक सिद्ध-औषधि' की ओर लोगों का ध्यान गया है जिन्हें बुखार, शरीर-दर्द, तापमान नियंत्रण इत्यादि में दिया जाता है।

पपीता के पत्ते का रस और/या निलावेम्बु (*Andrographis paniculata*) का उपयोग जिनका प्रलेखीकरण के आधार पर 'पारंपरिक औषधि' का वृहद् पैमाने पर उपयोग किया गया है। आज यह डेंगू बुखार के लिए प्रामाणिक तरीके के रूप में स्थापित हो गया है तथा कुछ राज्य के स्वास्थ्य विभाग ने इसे लागू किया है एवं केन्द्रीकृत औषधि की तैयारी एवं प्रभाव क्षेत्र के लोगों में बाँटने का कार्य शुरू हुआ है। इस औषधि का डेंगू बुखार को नियंत्रित करने में प्रभावी होना आधुनिक औषधि एवं एलोपैथिक औषधि प्रणाली ने भी मान लिया है।

लक्ष्य–

1) जितने शोध प्रबंध शरीर के दर्द, बुखार एवं साथ में हर्बल-औषधि पर हुई समस्याओं के द्वारा उपचार से जुड़े हैं उनकी समीक्षा करना।
2) किसी निश्चित स्थान पर डेंगु बुखार की घटनाओं का पैटर्न अध्ययन करना जिसमें मच्छरों के प्रजनन-स्थल का मान-चित्रण करना, बीमार हुए व्यक्तियों/परिवारों के सामाजिक आर्थिक परिप्रेक्ष्य का अध्ययन शामिल है।
3) हर्बल औषधि के उपयोग के पहले की स्थिति में डेंगू ग्रसित बीमारों का खर्च एवं इसके उपयोग के बाद उनके खर्च का तुलनात्मक अध्ययन।
4) डेंगू बुखार से संबंधित पारंपरिक ज्ञान का दस्तावेजीकरण, अध्ययन एवं प्रमाणीकरण प्रभावित समूह की स्थिति एवं समझ।
5) सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र की सहायता से बीमारी के पार्श्व दृश्य का अध्ययन (सावधानी रखना कि अध्ययनकर्त्ता बीमारी की चपेट में न आ जायें)।
6) आबादी के नमूने (sample) में इस बीमारी के कारण आजीविका छिन जाने का अध्ययन।

विधि :

1) विशिष्ट औषधीय पौधे/पौधों के भाग के उपयोग पर उपलब्ध दस्तावेजों (द्वितीयक स्रोत) का संदर्भ लेना।
2) OOP Study Format (संदर्भ-National Health System Resource Centre, NRHM, New Delhi)

3) KAP Study (लक्ष्य संख्या 4 से संबधित)।

4) आबादी के नमूने के साथ प्रयोग एवं बीमारी का अनुश्रवण-थर्मामीटर का ज्वर मापने में उपयोग, चिकित्सक द्वारा रोग निर्णय प्रक्रिया (प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (PHC) डाक्टर की मदद से)।

5) बीमारी की सूचना, चिकित्सा के उपाय एवं क्या करें, क्या नहीं करें का मसविदा तैयार करना।

6) मच्छरों की आबादी में बढ़ोतरी के स्रोत का अवलोकन एवं जल जमाव क्षेत्र में उपाय चिन्हित करना, प्रामाणिक अभिलेख क्षेत्र के अपशिष्ट जल के बहाव का मानचित्रण।

7) समुदाय आधारित जागरूकता के लिए गतिविधि करना, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन, स्वास्थ्य, साफ-सफाई इत्यादि हेतु जिसमें विद्यालय, पंचायत, अन्य सामाजिक संगठन, सरकारी तंत्र एवं संचार माध्यमों की सहभागिता हो।

8) आधुनिक संचार प्रणाली का उपयोग कर कारगर स्वास्थ्य संचार उपलब्ध कराना।

9) नियंत्रित समूह पर अवलोकन। जिस समूह ने कोई भी औषधि का उपयोग नहीं किया है एवं उनकी तुलना "हर्बल-औषधि" उपयोग करने वाले क्षेत्र से करना।

10) हर्बल-औषधि की विभिन्न तैयार दवाईयों का अवलोकन, उनके बनाने की नियमावली, औषधि का "Shelf Life" (अर्थात् कितने समय तक प्रभावी रहता है)।

निष्कर्ष :

1) पारंपरिक ज्ञान की जटिलता को समझना तथा इसके आधुनिक उपयोग की क्षमता तथा चुनौतियों की समझ विकसित करना।

2) पारंपरिक ज्ञान प्रणाली को आधुनिक समय के वर्तमान सामाजिक-पारितांत्रिक एवं आर्थिक परिस्थिति मे इसे मुख्य धारा में लाना।

3) आजीविका छूटने के कारण आर्थिक प्रभाव, विद्यालय में बच्चों की उपस्थिति पर प्रभाव, स्थानीय उत्पादन प्रणाली पर प्रभाव एवं विकास प्रक्रिया, टिकाऊ विकास पर प्रभाव की समझ विकसित करना।

4) समुदाय के विभिन्न हिस्सों का बीमारी पर खर्च का परिदृश्य / विभिन्न वर्गों पर प्रभाव तथा विभिन्न समूहों पर बदलते हुए प्रभाव को समझना।

5) प्रभावकारी एवं अर्थपूर्ण विज्ञान/तकनीक एवं स्वास्थ्य संचार के तरीके बनाना तथा समुदाय द्वारा ही उसे लागू करने से टिकाऊ आजीविका की स्थिति बन सकती है।

6) यह देखना कि परंपरा के नाम पर नकली हर्बल-उत्पाद तो नहीं बेचा जा रहा है तथा पारंपरिक ज्ञान का व्यवसायीकरण।

परियोजना संख्या-3

विभिन्न महत्वपूर्ण औषधीय पौधों का नृवंश विधा आधारित (Ethnological) अध्ययन एवं उनकी वनस्पति-रसायनिक (phytochemical) विशिष्टताओं का अध्ययन :

पारंपरिक ज्ञान एवं समुदाय के रीति-रिवाजों में निहित विभिन्न पौधों के औषधि या भोजन में उपयोग के वैज्ञानिक अध्ययन को मानवजाति वनस्पति विज्ञान (ethnobotany) कहते हैं।

मानव जाति ने सैकड़ों वर्षों में प्राकृतिक संपदा से जुड़कर अपने अनुभव का ज्ञान सृजित किया है। वै पौधों का उपयोग भोजन में, पेय पदार्थ के रूप में, प्राकृतिक रंग प्राकृतिक गतिविधि एवं भोज्य पदार्थों के रख-रखाव में करते आए हैं। औषधीय जड़ी-बूटी का रोग-निदान एवं रोग हटाने वाली औषधि के रूप में उपयोग प्राचीन काल से ही हो रहा है।

Ethnobotanical अध्ययन का मुख्य स्रोत स्थानीय जनजाति का ज्ञान-आगार हैं और इन्हें पारंपरिक ethnobotanical ज्ञान (TEK) कहते हैं। TEK का दस्तावेजीकरण जैव-संपदा की सही सुरक्षा, संरक्षण एवं उपयोग हेतु महत्वूर्ण है। इन पर प्रयोग होना चाहिए जिससे यह समृद्ध पीढ़ियों का ज्ञान मानव के ही द्वारा (anthropogenic) विभिन्न कारणों से विलुप्त न हो जाये।

लक्ष्य–

1) परंपरागत तौर पर बीमारियों की चिकित्सा में महत्वपूर्ण औषधीय पौधों के उपयोग को पहचानना।

2) पौधों के महत्वपूर्ण औषधीय मूल्य के ज्ञान हेतु वानस्पतिक-रसायनिक विश्लेषण करना।

विधि –

अध्ययन क्षेत्र :

औषधीय पारंपरिक पौधों के विश्लेषण हेतु भौगोलिक क्षेत्र का निर्धारण।

आँकड़ा संग्रह :

अध्ययन क्षेत्र में औषधीय पौधों के बारे में जानकारी इकट्ठा करने हेतु समुदाय के साथ अर्द्ध-संरचित साक्षात्कार (interview) करना।

सूचना (जानकारी) के अंदर अनेक तरह के आंकड़े हो सकते हैं। जैसे–पौधों का स्थानीय नाम, बीमारी या लक्षण जिनकी चिकित्सा की गई, लक्षण नियंत्रण प्रभाव, पौधे के भाग जिसका उपयोग किया गया

है, तथा औषधि तैयार करने की विधि। यह स्थानीय लोगों के साथ बात-चीत कर जानकारी ली जा सकती है। इस तरह के साक्षात्कार के अंत में औषधीय पौधों के बारे में जानकारी एवं उपयोग को सावधानीपूर्वक सूचीबद्ध किया जा सकता है।

आंकड़ों का विश्लेषण एवं मात्रात्मक अध्ययन :

A. नमूना लेना
B. पौधों के रस को तैयार करना
C. पौधों का रसायनिक विश्लेषण

पौधों का रसायनिक अवयव (Phytobotanins) :

★ पौधों के नमूने को आसवित जल में मिला दें।
★ 1% HCl (पानी में) डाल दें।
★ पौधे के नमूने को उबालें (hot plate stimer की सहायता से)।
★ अगर लाल रंग का अवक्षेप होता है, तो समझें कि धनात्मक परिणाम हैं।

Reducing Sugar :

★ पौधों के नमूने का 0.50 g लें।
★ 5 मि०ली० आसवित जल डाल दें।
★ 1 मि०ली० इथेनॉल मिला दें।
★ 1 मि०ली० फेहलिंग का घोल A + फेहलिंग का घोल B लें।
★ घोल को उबाल दें।
★ इथेनॉल डालने पर अगर धनात्मक परिणाम आता है तो इसमें टर्पीनाइड, एल्केलॉयड एवं अन्य महत्वपूर्ण विशेषता है।

वांछित निष्कर्ष :

1) उपलब्ध औषधीय पौधों की एक सूची आंकड़ों के आधार पर तैयार करना, जिसका उपयोग स्थानीय समुदाय द्वारा परंपरागत तरीकों से किया जायेगा।

2) वैसे पौधों की पहचान एवं प्रलेखीकरण होगा जिनमें औषधीय एवं पोषण प्रदान करने की विशेषतायें हैं तथा उन पर बाद में शोध किया जा सकता है।

वनस्पति-रसायनिक विश्लेषण के आंकड़ों को इस प्रकार अंकित किया जा सकता है।

जाँच	A. n	B. b	D. r	P. e	T. a	Z. z
Alkaloids	–	+	–	+	+	–
Tannins	+	+	+	+	+	+
Glycosides	+	–	–	+	+	+
Saponins	+	+	+	+	+	+
Terpenes	+	+	+	+	+	+
Sterols	+	–	+	+	+	–
Rasins	–	+	–	–	–	–+
Carbohydrates	+	+	+	+	+	+
Balsam	–	+	–	–	–	+
Flavonoids	+	–	+	+	+	+
Anthraouinones	+	–	+	–	–	–
(Key + = उपस्थित, – = अनुपस्थित, A. n = A.niloaca, B. b = B. buonopazense, D. r = D. roandilofis, P. e. = P. erinaous, T. a. = T. avicennioides, Z. z = Z. zanthoxyloides)						

परियोजना संख्या-4

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को सह सकने की तकनीकों का पारंपरिक स्वदेशी ज्ञान प्रणाली के संदर्भ में अध्ययन :

भूमिका–

स्वदेशी ज्ञान का उपयोग टिकाऊ विकास परियोजना में संरचनात्मक तौर पर होता रहा है पर जलवायु परिवर्तन का सामना करने की व्यूह-रचना में इन्हें अभी लगाया नहीं जा सका है तथा इस क्षेत्र में शोध करने की आवश्यकता है। यह अब सत्य प्रमाणित हो चुका है कि जलवायु परिवर्तन को सतत् विकास से अलग नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह उसके प्रभाव को कम करने में कारगर है। हालाँकि आज के आधुनिक ज्ञान/पाश्चात्य ज्ञान से इसे जोड़ कर देखना चाहिए। यह हमारा लक्ष्य होना चाहिए कि वैश्विक ज्ञान प्रणाली को सहायता प्रदान करने में स्वदेशी ज्ञान का उपयोग किया जाय।

हजारों साल से ग्रामीण/किसान कृषि में खर-पतवार के उपयोग के साथ मिट्टी प्रबंधन की ऐसी तकनीकों का उपयोग कर रहे हैं जिनसे संसाधन का संरक्षण हो रहा है तथा जलवायु परिवर्तन के आघात को भी झेल पा रहे हैं।

जलवायु परितर्वन को कम करने की पारंपरिक विधियों में निम्नलिखित महत्वपूर्ण हैं–

- ★ किसी घटना की पहले से "चेतावनी प्रणाली" का विकास इस क्षेत्र में समृद्ध ज्ञान-मौसम एवं जलवायु परिवर्तन को लेकर पहले से है।
- ★ जैविक खेती का उपयोग–जो कृषि आर्थिक प्रणाली के स्वास्थ्य का सामूहिक (holistic) प्रबंधन है।
- ★ जैविक खेती के द्वारा मिट्टी को पोषक तत्वों एवं जल दोनों की कमी नहीं हो पाती है, अत: मिट्टी, बाढ़, सूखा एवं भूमि निम्नीकरण को भी झेल लेती है।
- ★ फसल विविधता का उपयोग करना एवं सूखा-रोधी फसल लगाना या तापमान के दबाब को झेलने वाली फसल, साथ ही जितना उपलब्ध जल है उसका क्षमतावान (efficient) उपयोग करना पारंपरिक ज्ञान का अंग है।
- ★ स्थानीय आवासीय परिसरों के निर्माण में ऐसे स्थापत्य (architecture) का उपयोग करना जो जलवायु परिवर्तन एवं इसके प्रभाव को कम कर सके।

लक्ष्य–

1) कुछ वैसे उपायों की खोज करना जिसको अपना कर समाज जलवायु के दवाब को झेल पाये।
2) स्वदेशी ज्ञान को जलवायु परिवर्तन का मुकाबला करने के तौर-तरीकों से जोड़ना।

विधि–

1) विशिष्ट स्थानीय समुदाय की पहचान करना।
2) वैसे विभिन्न प्राचलों को चिन्हित करना जो कि जलवायु के प्रभाव को कम कर पाये। जैसे कि (अच्छा हो कि एक संदर्भ का चुनाव करें)

   आवासीय स्वरूप; जल संरक्षण तकनीक; वस्त्र / पहनावा का स्वरूप; कृषि / खेती
3) प्रश्नावली बनाना जिसमें सरंचनात्मक एवं उन्मुक्त (open ended) प्रश्न भी सन्निहित हों।
4) नमूने चुनने की विधि–परतों में व्यवस्थित क्रमरहित नमूने लेना (Random Sampling) एंव किसी विशेष

उपयोग हेतु नमूने बनाने की तकनीक।

5) प्रश्नावली के आधार पर साक्षात्कार विधि।
6) क्षेत्रीय अवलोकन तथा साथ-साथ दस्तावेजीकरण।
7) समुदाय के विभिन्न समूहों से विचार-विमर्श।
8) आँकड़ों का सूचीकरण एवं सारणीकरण।
9) वैज्ञानिक प्रमाणीकरण : किसी खास प्राचल को चिन्हित कर उसका वैज्ञानिक प्रमाणीकरण करें। उदाहरण के लिए–अगर अध्ययन आवासीय स्वरूप पर कर रहे हैं, तो यह स्वरूप किस प्रकार ताप, वर्षा एवं तेज हवा झेल सकता है, इसका प्रमाणीकरण।

वांछित निष्कर्ष :

जलवायु परिवर्तन का मुकाबला करने में सक्षम वैसी महत्वपूर्ण पारपंरिक विधियों की पहचान करना तथा आधुनिक तकनीक से इन्हें जोड़ना।

5.8 कुछ अन्य परियोजना विचार :

1) पारंपरिक भोजन के पोषण मूल्य का आकलन।
2) खाद्य पदार्थों के पारंपरिक किण्वन (Fermentation) की तकनीक तथा इनका भोजन की गुणवत्ता से संबंध का दस्तावेजीकरण।
3) किसी खास स्थानीय समुदाय की जैवविविधता का अध्ययन एवं जन-जैवविविधता रजिस्टर तैयार करना।
4) विभिन्न स्थापत्य की संरचना एवं इनका पारितंत्र की देखभाल में योगदान (जैसे-आवास, पुल, जल वितरण नहरें)।
5) संसाधनों के संरक्षण की विधि एवं इसका टिकाऊपन (sustainability)।
6) विभिन्न कृषि-फसल प्रणाली एवं भविष्य हेतु इनका महत्व।
7) कृषि के विभिन्न औजारों का पारंपरिक ज्ञान एवं जैविक खेती में इनका उपयोग।
8) विभिन्न खेती के तौर-तरीकों का टिकाऊ ज्ञान।
9) मछुआरों का पारंपरिक ज्ञान एवं टिकाऊ रोजगार से इनका संबंध।
10) सामुदायिक बीज-बैन्क पर अध्ययन तथा इनका टिकाऊ भोजन सुरक्षा से संबंध।
11) खाद्य पदार्थ के संरक्षण, परिरक्षण तकनीकों का पारंपरिक ज्ञान एवं इसका रोजगार सृष्टि में महत्व।
12) प्राकृतिक रेशों का पारंपरिक ज्ञान एवं आधुनिक युग में इसका उपयोग।
13) पारितंत्र को बचाने एवं रख-रखाव का पारंपरिक ज्ञान एवं पारितंत्र प्रबंधन पर इसका प्रभाव।
14) पारंपरिक तकनीक पर आधारित यथोचित तकनीक का खाका बनाकर विकास करना।
15) पारंपरिक ज्ञान पर आधारित जल जमा करना (जल संभरन क्षेत्र) पर प्रयोग कर देखना कि क्या आज इन्हें लागू कर सकते हैं ?

End Notes :

1. https://www.cbd.int/traditional/intro.shtml; retrieved on 12.06.17
2. http://www.wipo.int/tk/en/tk/; retrieved on 12.06.17
3. http://www.ilo.org/wcmsp5/groups/public/@ed_norm/@normes/documents/publication wcms_100542.pdf, retrieved on 15.06.17
4. http://www.fao.org/docrep/011/i0841e/i0841e00.htm; retrieved on 17.06.17
5. http://www.who.int/mediacentre/factsheets/2003/fs134/en/; retrieved on 20.06.17
6. http://www.unesco.org/education/tlsf/mods/theme_c/mod11.html; retrieved on 20.06.17
7. http://www.un.org/en/ga/president/68/pdf/wcip/ IASG%20Thematic%20Paper_%20Traditional%20Knowledge%20-%20rev1.pdf;
8. a. http://apps.unep.org/repository/publication-subject/ecosystem-management;
   b. https://unu.edu/publications/articles/why-traditional-knowledge-holds-the-key-to-climatechange.html; retrieved on 22.06.17
9. a. http://www.undp.org/content/undp/en/home/blog/2015/8/7/Knowledge-has-life.html;
   b. http://www.undp.org/content/undp/en/home/blog/2015/4/28/Indigenous-youth-and-the-post-2015-Development-Agenda/;
   c. https://www.un.org/development/desa/indigenouspeoples/; retrieved on 22.06.17
10. a. https://brage.bibsys.no/xmlui/bitstream/handle/11250/98873/ Traditional%20knowledge.pdf?sequence=1;
    b. http://www.ohchr.org/Documents/Publications/fs9Rev.2.pdf;
    c. https://www.google.co.in/?gws_rd=ssl#q=UN+Human+right +commission+on+traditional+knowledge+;Retrieved on 22.06.17
11. http://unesdoc.unesco.org/images/0015/001505/150501eo.pdf; Retrieved on 25.06.17
12. http://portal.unesco.org/en/ev.php-URL_ID=5151&URL_DO=DO_TOPIC&URL_SECTION=201.html; Retrieved on 25.06.17
13. a. http://www.tkdl.res.in/tkdl/LangFrench/common/Abouttkdl.asp?GL=Eng;
    b. http://www.mondaq.com/india/x/344510/Trade+Secrets/ PROTECTING+INDIAN+TRADITIONAL+KNOWLEDGE+AS+INTELLECTUAL+ PROPERTY;
    c. http://www.iosrjournals.org/iosr-jhss/papers/Vol3-issue1/F0313542.pdf?id=5696;
    d. http://eprints.rclis.org/14020/1/TKDL_paper.pdf; Retrieved on 25.06.17
14. a. http://www.sristi.org/cms/en/our_network;
    b. http://www.iimahd.ernet.in/~anilg/file/InnovationsforthepoorbythepoorWITSpaper.pdf;
    c. http://apctt.org/recap/sites/all/themes/recap/pdf/GRI-PROJECT-REPORT-Complete.pdf; Retrieved on 25.06.17
15. http://www.niscair.res.in/sciencecommunication/researchjournals/rejour/ijtk/ijtk0.asp; Retrieved on 25.06.17
16. a. http://nbaindia.org/uploaded/docs/traditionalknowledge_190707.pdf;
    b. http://www.legalserviceindia.com/article/l266-Biodiversity-and-Traditional-Knowledge.html;
    c. https://www.lawctopus.com/academike/biodiversity-act-2002-analysis;
    d. http://www.ipindia.nic.in/writereaddata/Portal/IPOGuidelinesManuals/1_39_1_5-tkguidelines.pdf; Retrieved on 25.06.17
17. a. http://www.indiawaterportal.org/sites/indiawaterportal.org/files/Waternama_english.pdf;
    b. http://ignca.nic.in/cd_07006.htm;
    c. http://gifre.org/library/upload/volume/93-97-TRADITIONAL-vol-3-4-gjbahs.pdf;
    d. http://atiwb.gov.in/index_htm_files/Natural_Resources_Management.pdf;
    e. http://www.sciencepub.net/american/0505/06_0869_manuscript_am0505.pdf;
    f. https://portail.uqat.ca/prf/fr/Hugo-Asselin/PublishingImages/Pages/Publications/ Uprety_et_al_2012_Ecoscience.pdf;
    g. https://www.mainstreamweekly.net/article746.html;
    h. http://www.sciencepub.net/american/0505/16806_0869_manuscript_am0505.pdf;
    i. http://www.currentscience.ac.in/Downloads/article_id_096_01_0019_0021_0.pdf ;

retrieved on 29.06.17
18. a. http://admin.indiaenvironmentportal.org.in/files/India%20Journal%20of%20Tradio%20Knowle.pdf;
    b. http://www.bibalex.org/Search4Dev/files/416882/362465.pdf;
    c. http://www.cardindia.net/mksp-pdf/trad-knowledge.pdf';
    d. http://www.wageningenacademic.com/doi/abs/10.3920/978-90-8686-820-9_12;
    e. http://indiagovernance.gov.in/files/agricultural_sustainability.pdf;
    f. http://naarap.blogspot.in/2009/10/importance-of-indigenoustraditional.html;
    g. http://www.downtoearth.org.in/news/un-heritagestatus-for-odishas-koraput-farming-system—35627; retrieved on 29.06.17
19. a. http://icrier.org/pdf/wilder66.PDF;
    b. http://www.currentscience.ac.in/Volumes/110/04/0486.pdf;
    c. https://www.ncbs.res.in/HistoryScienceSociety/content/overview-indian-healingtraditions;
    d. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC5388083/;
    e. http://www.insa.nic.in/writereaddata/UpLoadedFiles/IJHS/Vol50_2015_2_Art09.pdf;
    f. http://www.orissa.gov.in/e-magazine/Orissareview/dec-2006/engpdf/55-57.pdf;
    g. http://www.iosrjournals.org/iosr-jhss/papers/Vol20-issue7/Version-5/M020758688.pdf; retrieved on 29.06.17
20. a. https://www.google.co.in/?gws_rd=ssl#q=traditional+knowledge+on+medicine+and+health++practices+in+India&start=10;
    b. https://permaculturenews.org/2014/08/06/rashtriya-guni-mission-promoting-traditionalmedicinalsystems-india/; retrieved on 29.06.17;
    c. http://www.worldbamboo.net/wbcx/Sessions/Theme%20Architecture%20Engineering%20Social%20Housing/Manjunath,%20Neelam.pdf;
    d. http://www.devalt.org/images/L2_ProjectPdfs/Climate_and_constructionan_impact_assessment(1).pdf;
    e. http://www.cseindia.org/userfiles/Gupta_Climate%20Proofing%20Housing%20in%20Barmer.pdf;
    f. http://www.world-housing.net/wp-content/uploads/2011/08/Type_Vernacular.pdf;
    g. http://www.worldhousing.net/wp-content/uploads/2013/12/Report_172_letter.pdf;
    h. https://www.google.co.in/?gws_rd=ssl#q=traditional+knowledge+of+housing+design+and+construction+++practices+in+India&start=10;
    i. http://dpanther.fiu.edu/sobek/FI13022760/00001;
    j. https://assets.helvetas.org/downloads/effective_trailbridge_building.pdf; ; retrieved on 30.06.17
21. a. http://www.yourarticlelibrary.com/geography/15-agro-climatic-zones-in-india-categorisedbythe-planning-commission/42307/;
    b. http://www.agriinfo.in/?page=topic&superid=1&topicid=425; retrieved on 30.06.17;
    c. https://www.google.co.in/?gws_rd=ssl#q=india+agro+climatic+zones; retrieved on 30.06.17
22. a. http://www.kivu.com/world-council-guidelines/;
    b. http://www.wipo.int/export/sites/www/tk/en/resources/pdf/tk_toolkit_draft.pdf;
    c. http://network.icom.museum/fileadmin/user_upload/minisites/cidoc/ConferencePapers/2015/CIDOC_paper_SUBHRA_DEVI__Assam__India_.pdf;
    d. http://www.wmacns.ca/pdfs/401_ConductOfTraditionalKnowledge_Sept14_fnl_WEB.pdf;
    e. http://cropgenebank.sgrp.cgiar.org/index.php/178-procedures/collecting/673-chapter-18-collecting-plantgenetic-resources-and-documenting-associated-indigenous-knowledge-inthe-field-a-participatoryapproach;
    f. https://www.boem.gov/2015-047/;
    g. https://portals.iucn.org/library/sites/library/files/documents/2010-030.pdf;

h. http://ir.lib.uwo.ca/cgi/viewcontent.cgi?article=1210&context=iipj Retrieved on 30.06.17

23. a. http://climate.calcommons.org/article/tek;
    b. https://www.fws.gov/nativeamerican/pdf/tek-factsheet.pdf;
    c. http://blog.ucsusa.org/science-blogger/the-importance-of-traditional-ecologicalknowledgetek-when-examining-climate-change;
    d. http://www.biodiversitya-z.org/content/traditionalecological-knowledge-tek;
    e. http://www.nezine.com/info/Insect%20can%20be%20the%20buzzword;
    f. http://www.nezine.com/info/Kongali%20Bharal%20—%20Granaries%20of%20hope;
    g. http://169 www.nezine.com/info/Dipping%20into%20the%20past%20for%20the%20future;
    h. http://www.nezine.com/info/The%20benefits%20of%20a%20%E2%80%98bari%E2%80%99;
    i. http://www.nezine.com/info/The%20past%20can%20be%20the%20future; retrieved on 30.06.17
24. https://www.nature.nps.gov/parkscience/Archive/PDF/Article_PDFs/ParkScience27%283%29Winter2010-2011_54-61_Henn_et_al_2763.pdf; retrieved on 30.06.17
25. http://www.fao.org/docrep/x5672e/x5672e09.htm#TopOfPage; retrieved on 30.06.17
26. https://www.ecologyandsociety.org/vol12/iss2/art34/; retrieved on 30.06.17
27. a. https://archive.epa.gov/region9/tribal/web/pdf/tribal-ecological-knowledge-env-scipolicydm.pdf;
    b. http://www.web.uvic.ca/~darimont/wp-content/uploads/2012/12/Huntington-2000-TEK-and-SCI.pdf; Retrieved on 30.06.17;
    c. http://www.fao.org/docrep/x5672e/x5672e03.htm#TopOfPage;
    d. http://www.fao.org/docrep/x5672e/x5672e04.htm#TopOfPage;
    e. http://www.fao.org/docrep/x5672e/x5672e05.htm#TopOfPage;
    f. http://www.fao.org/docrep/x5672e/x5672e07.htm#TopOfPage; Retrieved on 30.06.17
28. a. http://nopr.niscair.res.in/bitstream/123456789/3955/1/IJTK%208%282%29%20212-217.pdf;
    b. http://www.indjsrt.com/administrator/modules/category/upload/13-20.pdf;
    c. http://www.fao.org/docrep/x5672e/x5672e08.htm#TopOfPage;
    d. http://www.fao.org/docrep/x5672e/x5672e0a.htm#TopOfPage; Retrieved on 30.06.17
29. a. http://nopr.niscair.res.in/bitstream/123456789/26017/1/IJTK%2013%281%29%20181-186.pdf;
    b. http://nopr.niscair.res.in/bitstream/123456789/26024/1/IJTK%2013%281%29%20187-194.pdf;
    c. http://indianresearchjournals.com/pdf/IJSSIR/2013/March/20.pdf;
    d. http://www.sciencevision.org/current_issue/dl/Baruah.pdf;
    e. http://www.yourarticlelibrary.com/fish/appliedfisheries/crafts-and-gears-used-for-fishing-withdiagram/88586/;
    f. http://www.indiawaterportal.org/articles/traditional-fisherfolk-kerala-part-ii-article-describingeconomy-fishing-and-role-women;
    g. http://www.fisheriesjournal.com/vol2issue1/Pdf/20.1.pdf;
    h. ftp://ftp.fao.org/docrep/fao/007/ad964e/ad964e00.pdf;
    i. http://www.fisheriesjournal.com/archives/2016/vol4issue3/PartC/4-2-60.pdf;
    j. http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/22345/8/08_chapter%203.pdf; Retrieved on 30.06.17
30. a. http://www.ijset.net/journal/770.pdf;
    b. http://nopr.niscair.res.in/bitstream/123456789/6846/1/IJTK%205(2)%20(2006)%20243-244.pdf;
    c. http://nopr.niscair.res.in/bitstream/123456789/9334/1/IJTK%203%281%29%2092-95.pdf;
    d. http://ir.uz.ac.zw/xmlui/bitstream/handle/10646/1142/Tapson-

Final%20(2).pdf;jsessionid=0B72CDB5AAAF1D036FD6FA96CBE5D397?sequence=1;
e. http://asianagrihistory.org/vol-18/manivannan-mathialagan-and-narmatha.pdf;
f. http://www.nezine.com/info/

Traditional%20practices%20of%20livestock%20management%20in%20Northeast%20India;
g. http://www.nezine.com/info/Brokpas-the%20Yak%20rearers; Retrieved on 30.06.17
31. a. https://wovensouls.org/2014/01/15/traditional-architecture-art-in-the-houses-of-south-india/;
b. http://www.world-housing.net/WHEReports/wh100080.pdf;
c. http://www.world-housing.net/WHEReports/wh100165.pdf;
d. http://www.currentscience.ac.in/Volumes/109/09/1610.pdf;
e. http://www.currentscience.ac.in/Volumes/109/09/1610.pdf;
f. http://www.nezine.com/info/Flats%20and%20fears; Retrieved on 30.06.17
32. a. http://www.nezine.com/info/The%20past%20can%20be%20the%20future;
b. http://www.cseindia.org/userfiles/sirdup.pdf;
c. http://www.niscair.res.in/sciencecommunication/researchjournals/rejour/ijtk/Fulltextsearch/ 2009/October%202009/IJTK-Vol%208%20(4)-%20October%202009-%20pp%20525- 530.htm;
d. http://www.mdws.gov.in/sites/default/files/Recharge_0.pdf;
e. http://nptel.ac.in/courses/105105110/pdf/m3l05.pdf; Retrieved on 30.06.17 170
33. a. https://ecopostblog.wordpress.com/2013/10/12/environmental-ethics-areconservationefforts- overlooking-ethical-values/;
b. http://www.eubios.info/EJ121/EJ121F.htm;
c. https://www.mainstreamweekly.net/article746.html;
d. http://www.susted.com/wordpress/content/values-andparticipation-the-role-of-culture-innature-preservation-and-environmental-education-among-thebaganda_2012_03/;
e. http://ccrtindia.gov.in/readingroom/nscd/ch/ch11.php;
f. https://www.google.co.in/?gws_rd=ssl#q=Traditional+value+and+ethics++for+nature+conservation;
g. http://www.indiaenvironmentportal.org.in/files/file/Culture%20and%20Biodiversity.pdf;
h. https://www.macfound.org/media/files/CSD_Culture_White_Paper.pdf;
i. http://unesdoc.unesco.org/images/0021/002182/218270E.pdf;
j. http://www.pnas.org/content/113/22/6105.full.pdf;
k. http://pages.stolaf.edu/bies226-spr2014/files/2014/02/Ethical-Plurism.pdf; Retrieved on 30.06.17

❖●❖

परिशिष्ट-I

प्रयोग क्या है ?

प्रयोग एक तरह की जाँच है, ऐसी जाँच जो किसी सिद्धान्त या अवधारणा के 'मूल्यांकन' हेतु तैयार की जाती है। विज्ञान प्रयोग एवं प्रयोग करने से जुड़ा रहता है पर क्या हम जानते हैं कि प्रयोग असल में है क्या ? यहाँ हम प्रयोग क्या है और क्या नहीं है उस पर दृष्टि डालते हैं–

प्रयोग क्या है ?

सरल रूप में एक प्रयोग किसी 'अवधारणा' की जाँच है।

प्रयोग के आधारभूत संकल्पनायें–

प्रयोग वैज्ञानिक विधि की नींव है तथा यह संसार के बारे में खोज करने का एक प्रणालीगत तरीका है। हाँलाकि कुछ प्रयोग प्रयोगशाला में किये जाते हैं, पर हम किसी प्रयोग को अपने आस-पास किसी जगह पर या किसी भी समय कर सकते हैं।

विज्ञान-विधि के विभिन्न चरण को देखें :

1. अवलोकन करना।
2. अवधारणा का निर्माण।
3. अवधारणा को परखने / जांचने हेतु एक प्रयोग की रूपरेखा बनाना तथा उसे पूरा करना।
4. प्रयोग के परिणाम का मूल्यांकन करना।
5. अवधारणा को सही मानना या गलत मान कर अस्वीकार करना।
6. अगर जरूरत है तो नई अवधारणा बनाना।

प्रयोग के विभिन्न प्रकार :

- **प्राकृतिक प्रयोग –**

  प्राकृतिक प्रयोग एक उसके जैसा दिखने वाला प्रयोग है। इसमें भविष्यवाणी किया जाता है या अवधारणा का निर्माण किसी प्रणाली के अवलोकन के आधार पर आँकड़ों का संग्रह कर किया जाता है। प्राकृतिक प्रयोग के विभिन्न प्राचल नियमित (controlled) नहीं होते हैं।

  एक नियमित प्रयोग में हम प्रायोगिक समूह को एक नियमित समूह से तुलना करते हैं। दोनों समूह सभी मायनों में एक समान रहते हैं, पर एक प्राचल बदलता है, जो कि 'स्वतंत्र प्राचल' कहलाता है।

- **क्षेत्रीय प्रयोग (Field Experiment) –**

  एक क्षेत्रीय प्रयोग - प्राकृतिक प्रयोग भी हो सकता है या नियमित प्रयोग भी हो सकता है। यह प्रयोग आस-पास के संसार में होता है तथा प्रयोगशाला के अंदर नहीं हो सकता।

  उदाहरण हेतु–किसी पशु पर उसके प्राकृतिक आवास में प्रयोग करना एक क्षेत्रीय प्रयोग होगा।

  प्रयोग के बदलने वाले प्राचल (Parameters)–किसी प्रयोग में बदलने वाले कुछ भी प्राचल हो सकता है जिसका बदलाव होता है या प्रयोग में नियमित किया जा रहा है।

  परिवर्तित होने वाले प्राचल का सहज उदाहरण हैं–तापमान, प्रयोग का समय, पदार्थों की संरचना, प्रकाश का परिमाण इत्यादि।

एक प्रयोग के परिवर्तनशील प्राचल तीन प्रकार के होते हैं–

(i) नियमित अस्थिर (प्राचल)

(ii) स्वतंत्र अस्थिर (प्राचल)

(iii) दूसरे पर निर्भर करने वाले अस्थिर (प्राचल)

नियमित अस्थिर प्राचल को नियंताक भी कहा जाता है, जिसका मान नहीं बदलता है। जैसे-सोडा से

निकले हुए 'झाग' का प्रयोग कर रहे हैं तो बरतन का आकार (आयतन) नियमित किया जा सकता है, जिसमें विभिन्न सोडा के झाग को देखा जा रहा है।

अगर हम ऐसा प्रयोग कर रहे हैं–कि पौधों के उपर विभिन्न रसायनों के छिड़काव का प्रभाव देखना है–तो हम एक रसायन का नियत दबाव पर छिड़काव करेंगे या एक समान आयन का छिड़काव कर प्रभाव देखेंगे।

स्वतंत्र अस्थिर – वैसा एक भाज्य है जिसे हम बदल रहे हैं। हम एक भाज्य इसलिए कह रहे हैं क्योंकि एक प्रयोग में हम एक बार एक ही प्राचल बदल सकते हैं। इससे माप करना तथा आंकड़ों का अस्थिर विश्लेषण आसानी से हो सकता है।

अगर हम जानना चाहते हैं कि पानी को गर्म करने से हम ज्यादा चीनी को पानी में घोल सकते हैं या नहीं तो स्वतंत्र प्राचल पानी का तापमान रखना चाहिए। और इसी तापमान को बदल-बदल कर नियमित करेंगे।

दूसरी स्थितियों पर निर्भर करने वाला प्राचल का हम अवलोकन करते हैं–अर्थात् स्वतंत्र प्राचल पर यह किस प्रकार निर्भर करता है।

उपरोक्त उदाहरण में जब पानी गर्म करते हैं तो चीनी की कितनी मात्रा हम इसमें घोल सकते हैं (चीनी की मात्रा या आयतन जिसे भी हम मापना चाहते हैं) यह हमारा निर्भर प्राचल रहेगा।

अत: निर्भर करने वाला प्राचल का हम अवलोकन करते हैं–यह जानने के लिए कि स्वतंत्र प्राचल पर यह किस प्रकार निर्भर करता है।

वैज्ञानिक विधि के चरण –

वैज्ञानिक विधि में प्रयोग कर हम यह जाँच करते हैं कि हमारी अवधारणा सही है या नहीं। विभिन्न प्रयोग जटिल या सरल भी हो सकते हैं। इसमें महत्वपूर्ण है कि किसे (variable) हम नियमित कर सकते हैं और किस प्राचल (variable) का माप कर सकते हैं।

वैज्ञानिक विधि एक ऐसी विधि है जिससे वस्तुपरक खोज-बीन की जा सकती है।

वैज्ञानिक विधि के अन्तर्गत "अवलोकन करना" एवम् एक प्रयोग संपन्न करना जिससे 'अवधारणा' की जाँच हो सके जरूरी है।

वैज्ञानिक विधि के विभिन्न चरण नियमित नहीं है। कुछ जाँच एवं मार्गदर्शक इन चरणों को बढ़ा सकते हैं या कम कर सकते हैं।

कुछ लोग अवधारणा के साथ ही इसके विभिन्न चरण की सूची बना लेते हैं, पर कोई भी अवधारणा अवलोकनों पर आधारित होती हैं (अगर यह नियमानुसार नहीं भी हो)। अत: अवधारणा निर्माण दूसरे चरण में ही आ सकती है।

नीचे अवधारणा के कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं–

अप्रमाणित अवधारणा के उदाहरण –

- Hyperactivity एवं चीनी खाने के बीच संबंध नहीं है।
- सभी डेजी फूल के पत्तियाँ की संख्या एक समान है।
- किसी परिवार में लोगों की संख्या एवं पालतू जानवरों की संख्या के बीच कोई संबंध नहीं है।
- किसी व्यक्ति के द्वारा कमीज का चुनाव, कमीज के रंग से संबंधित नहीं है।

अगर ऐसा है तो वैसा होगा – (And, It, Then – अवधारणा के उदाहरण)

- अगर आप 6 घंटे सोते हैं तो आप कम सोने वालों के जाँच में बेहतर प्रदर्शन करेंगे।
- अगर आप गेंद को छोड़ते हैं तो जमीन की ओर गिरेगी।
- अगर सोने के पहले आप कॉफी लें तो आपको देर से नींद आयेगी।
- अगर घाव को बैंडेज से ढंक देंगे तो यह भर जायेगा और कम दाग बनेंगे।

परिशिष्ट-II

समाज विज्ञान में शोध हेतु "प्रश्नावली" तैयार करने की मार्गदर्शिका

प्रश्नावली लेकर विभिन्न लोगों से उत्तर पाने की क्रिया सर्वेक्षण की एक तकनीक है (इसमें उत्तर देने वाले के उत्तर से सूचना 'आँकड़ों' का निर्माण होता है)। प्रश्नावली विकसित करने के विभिन्न चरण हैं। आपकी खोज (शोध) के विषय आधारित प्रश्नों को प्रभावकारी तरीके से बना कर पूछने के लिए प्रश्नावली बनाने पर ध्यान देना जरूरी है–

प्रथम चरण :

(i) प्रश्नावली के लक्ष्य की पहचान-किस प्रकार सूचनायें इकट्ठा करना है ? इसके लिए मुख्य लक्ष्य को पहले चिन्हित कर लेना चाहिए।

(ii) शोध के प्रश्न बनाने होंगे पर यह प्रश्नावली का मुख्य केन्द्र बिन्दु होगा।

(iii) आपकी अवधारणा क्या है-जिसकी जाँच करनी है ? प्रश्नावली के प्रश्नों की मुख्य दिशा अवधारणा की जाँच है जो आंकड़ों के विश्लेषण के पश्चात् मान्य होगा या अमान्य।

द्वितीय चरण :

प्रश्नों के विभिन्न प्रकार बनायें जिनको चयनित करना है। जिन सूचनाओं को एकत्रित करना है उसमें विभिन्न प्रकार के प्रश्न तैयार किए जा सकते हैं–हरेक प्रश्न के खास उत्तर रहेंगे।

निम्नलिखित में साधारणतया उपयोग में लाये जाने वाले विभिन्न प्रश्न एवं प्रश्नावली दिये जा रहे हैं–

द्वितार्किक (Dichotomus) प्रश्न :

इस तरह के प्रश्न के उत्तर हाँ / नहीं में दिये जा सकते हैं, या मानता हूँ / नहीं मानता हूँ। इस तरह के प्रश्न 'सरल' होते हैं तथा उनका आसानी से विश्लेषण किया जा सकता है पर यह उच्च संवेदनशीलता के नहीं होते।

खुले (Open) प्रश्न :

इस तरह के प्रश्नों का उत्तरदाता के लिए उनके अपने शब्दों में उत्तर मांगना चाहिए। इससे उत्तरदाता की भावनाओं का भी चित्रण होता है, इनके आँकड़ों का विश्लेषण भी चुनौती भरा होता है। जब प्रश्न में क्यों ? लगा है तब इस तरह से खुला प्रश्नोत्तर लेना चाहिए।

अनेक उत्तर वाले प्रश्न :

इसमें 3 या ज्यादा अलग-अलग श्रेणियों में उत्तर बाँट दिए जाते हैं तथा उत्तरदाता एक उत्तर या एक से अधिक उत्तर चुन सकता है–निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए इसका विश्लेषण भी आसान होता है।

मापक स्केल प्रश्न :

इस तरह के प्रश्नों में उत्तरदाता को कहा जाता है कि उत्तर को विभिन्न स्तर या स्केल दें (जो कि एक सेट में डाला गया है) जैसे उत्तरदाता को 5 पदार्थों को उसके महत्व के स्तर-रूप में सजाना है। (सबसे कम से लेकर सबसे अधिक महत्वपूर्ण)

योग्यता क्रम मापक प्रश्न :

इसके उत्तर में उत्तरदाता को किसी खास समस्या का आकलना करना पड़ता है तथा स्तर देना पड़ता

है। स्केल में कुछ धनात्मक और कुछ ऋणात्मक पसंद के होते हैं जैसे दृढ़ता से मानते हैं (strongly agree) या दृढ़ता से नहीं मानते हैं (strongly disagree).

नोट : उपरोक्त प्रश्नों के विभिन्न प्रकार के द्वारा आंकड़ा विश्लेषण में लाभ एवं हानि भी है, पर बाल-वैज्ञानिक विज्ञान कांग्रेस परियोजना में उस पर विचार नहीं करेंगे। वे अपने सुविधानुसार एक प्रकार का या मिले-जुले किसी प्रकार का प्रश्न चुन सकते हैं।

तृतीय चरण :

प्रश्नावली के लिए प्रश्नों को बनाना–प्रश्नावली के सभी प्रश्न साफ-साफ, छोटे अक्षरों में एवं सीध होने चाहिए। इससे उनको संभवत: सबसे अच्छा उत्तर मिल सकता है।

- प्रश्न छोटा और सरल होना जरूरी है। जटिल वर्णन तथा तकनीकी शब्दों का उपयोग नहीं करना चाहिए; जिससे उत्तरदाता संशय में पड़ जायेंगे तथा उनका उत्तर गलत हो जा सकता है।
- एक समय में एक ही प्रश्न पूछना चाहिए।
- प्रश्न उत्तरदाता के निजी, या संवेदनशील सूचना से संबंधित नहीं रहना चाहिए।
- यह भी निश्चित करें कि उत्तर में इस तरह के इच्छानुसार उत्तर भी रहें जैसे–"मैं नहीं जानता हूँ।" या "यह मेरे पर लागू नहीं होता है।" यह उत्तरदाता को आपके प्रश्न का जबाव नहीं देने का रास्ता देता है–हालाँकि यह तरीका आपको 'आँकड़ा' छूट जाने का स्थान देता है, जो कि विश्लेषण में समस्या पैदा कर सकता है।
- प्रश्नावली में सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न सबसे पहले आना चाहिए। इससे महत्वपूर्ण आंकड़ा लेने में आसानी होगी जब तक कि उत्तरदाता प्रश्नावली से विचलित या अधीर न हो जायें।
- पक्षपाती प्रश्न नहीं पूछें, वैसे प्रश्न जो कि उत्तरदाता को किसी खास तरीके से ही उत्तर देने के लिए बाध्य करता हो, वे पक्षपात पूर्ण प्रश्न कहलाते हैं। किसी खास दिशा में अभिलंबित या उत्तेजक शब्दों का उपयोग न करें।

चरण-4 : प्रश्नावली की लंबाई–

- प्रश्नावली की लंबाई छोटी हो तो बेहतर है। उत्तरदाता छोटी प्रश्नावली को पसंद करता है। अत: संक्षेप में प्रश्नावली बनाना जिसमें जरूरी सूचनायें इकट्ठा करना भी नहीं छूट जाये, इसका ध्यान रखना होगा। जो प्रश्न जरूरी नहीं है या विषय से रिश्ता नहीं है इसे नहीं रखना चाहिए।
- शोध या खोज के दिशा में उपयोगी प्रश्नों को ही रखना चाहिए। यह समझना चाहिए कि उत्तरदाता के बारे में अनेकों सूचनायें इकट्ठा करने का यह अवसर नहीं है।
- बिना जरूरत के प्रश्नों को हटा देना उचित है।

चरण-5 : प्रश्नावाली का ड्राफ्ट (आलेख) तैयार करना–

(i) **प्रश्नकर्त्ता का परिचय :** यह समझना चाहिए कि प्रश्नकर्त्ता कौन है। यह साफ करना चाहिए कि वह किसी समूह में है या अकेले कार्य कर रहा है, संस्था का नाम जिससे वह जुड़ा है।

उदाहरण के लिए–मेरा नाम श्याम सुंदर है तथा इस प्रश्नावली को बनाने से जुड़ा हूँ। मैं ABC संस्था/या स्कूल से जुड़ा हूँ।

(ii) **प्रश्नावली का उद्देश्य समझना :** बहुत से लोग उत्तर नहीं देंगे, जब तक प्रश्नावली का उद्देश्य वे नहीं जान पायेंगे। यह समझाना ज्यादा लंबा नहीं करना चाहिए कुछ संक्षिप्त वर्णन से भी यह कहा जा सकता है।

उदाहरण के लिए–

(i) मैं इस क्षेत्र लोगों के जैविक कृषि के प्रति उनकी सोंच का आंकड़ा इकट्ठा कर रहा हूँ। यह सूचना मेरे / हमारे परियोजना के लिए है।

(ii) इस प्रश्नावली में 25 प्रश्न हैं–जिसमें आपको किसानी के तरीकों तथा फसल उत्पादन से संबंधित प्रश्न हैं। हमलोगों की कोशिश होगी कि कृषि के स्वभाव एवं फसल उत्पादन की गुणवत्ता के अंतर्संबंधों का पता लगायें जिससे आपका स्वस्थ जीवन भी पोषित होगा।

(iii) आकलन करें कि इस प्रश्नावली के उत्तर में कितना समय लगेगा–उत्तरदाता को यह मदद मिलेगी कि उसे प्रश्नावली के जबाव में ½ घंटा या 1 घंटे का समय लगेगा, जिससे वे मानसिक रूप से तैयार होकर बैठें।

चरण-6 : सर्वेक्षण के पहले 'नमूना अध्ययन' जरूरी है–

प्रश्नावली को लेकर सर्वे करने के पहले कुछ लोगों को लेकर जिन्हें पहले से जानते हों एक 'जाँच अध्ययन' करनी चाहिए। (इस अध्ययन के निष्कर्ष को सर्वे में नहीं रखना बेहतर होगा) इस जाँच के आधार पर अगर जरूरी हो तो प्रश्नावली को पुनरीक्षित करना चाहिए। इस नमूना जाँच में 5-10 लोगों को लेना उचित होगा। इनके द्वारा निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लेने चाहिए।

- क्या प्रश्नावली समझने में आसान है ? क्या इसमें कोई प्रश्न ऐसा था, जो आपको असमंजस में डाल रहा था ?
- क्या प्रश्नावली ऐसा था कि आपके समय का सदुपयोग हुआ ?
- क्या प्रश्नोत्तर देना आपके लिए आनन्ददायक था ?
- क्या आपका कोई सुझाव है जिससे प्रश्नावली बेहतर हो सकती है ?

नोट :-

1. प्रश्नावली के अंत में प्रश्नकर्त्ता एवं उत्तरदाता के हस्ताक्षर तथा दिनांक देने की व्यवस्था होनी चाहिए।
2. नमूने का आकार (उत्तरदाताओं की संख्या) पहले तय करना चाहिए। यह लक्षित आबादी तथा निष्कर्ष निकालने के आधार पर प्रतिनिधि संख्या होनी चाहिए।
3. आंकड़ों के सारणी बनाने के समय तथा विश्लेषण करने हेतु सभी उत्तरदाता को एक संख्या से निरूपित करना चाहिए जिससे सारणी या विश्लेषण में किसी व्यक्ति का नाम नहीं आ जाये।

   उदाहरण : श्री राम - उत्तरदाता - 1; श्रीमती कावेरी - उत्तरदाता - 2 ..... एवं इसी प्रकार।
4. कभी-कभी यह मानक विधि है कि उत्तरदाता द्वारा एक 'सहमति-पत्र' पर हस्ताक्षर लिया जाता है जिसमें वे कहते हैं कि वे इस सर्वेक्षण में शामिल होने के लिए सहमत हैं तथा आँकड़ा बांटने के लिए तैयार हैं जिससे सर्वेक्षण के उद्देश्य से भी वे सहमत हैं।

   यह अच्छा होगा कि किसी शोधकर्त्ता से राय ले ली जाये कि अध्ययन में सहमति-पत्र लेना जरूरी है या नहीं।

परिशिष्ट-III

List of Environmental Information System (ENVIS) centres and their weblinks

Name of ENVIS Centre	Web Address
Assam Science, Technology and Environmental Council	http://www.asmenvis.nic.in
Bihar State Pollution Control Board	http://www.bhenvis.nic.in
Bombay Natural History Society (BNHS)	http://www.bnhsenvis.nic.in
Botanical Survey of India (BSI)	http://www.bsienvis.nic.in
Central Arid Zone Research Institute (CAZRI)	http://www.cazrienvis.nic.in
Central Building Research Institute (CBRI)	http://www.cbrienvis.nic.in
Centre for Advanced Study in Marine Biology (CASMB)	http://www.casmbenvis.nic.in
Centre for Ecological Sciences - Indian Institute of Science (IISc)	http://ces.iisc.ernet.in
Centre for Environment Education (CEE)	http://www.ceeenvis.nic.in
Centre for Environmental Studies (CES), Forest & Environment Department, Government of Odisha	http://www.orienvis.nic.in
Centre for Media Studies (CMS)	http://www.cmsenvis.nic.in
Centre for Mining Environment (CME) IIT-Indian School of Mines	http://ismenvis.nic.in
Central Pollution Control Board (CPCB)	http://www.cpcbenvis.nic.in
Chhattisgarh Environment Conservation Board	http://www.chtenvis.nic.in
Consumer Education and Research Centre (CERC)	http://cercenvis.nic.in
CPR Environmental Education Centre (CPREEC)	http://www.cpreecenvis.nic.in
Department of Ecology, Environment and Remote Sensing, State Government of J&K	http://www.jkenvis.nic.in
Department of Environmental Sciences (DES), Kalyani University	http://deskuenvis.nic.in
Department of Environment - Chandigarh	http://www.chenvis.nic.in
Department of Environment and Forest - Andaman and Nicobar	http://as.and.nic.in/envis
Department of Environment & Forests - Arunachal Pradesh	http://arpenvis.org.in
Department of Environment & Forests - Kavaratti, Lakshadweep	————
Department of Environment, Govt. of Tamil Nadu	http://www.tnenvis.nic.in
Department of Zoology - University of Madras	http://www.dzumenvis.nic.in
Directorate of Environment, Dept. of Forests and Environment, Govt. of Manipur	http://www.manenvis.nic.in
Directorate of Environment - Uttar Pradesh	http://www.upenvis.nic.in
Disaster Management Institute (DMI)	http://www.mpenvis.nic.in
Environment Management & Policy Research Institute (EMPRI)	http://karenvis.nic.in
Environment Protection Training and Research Institute (EPTRI)	http://www.eptrienvis.nic.in http://www.apenvis.nic.in
Forest Department (Wildlife Division), Union Territories of Dadra & Nagar Haveli and Daman & Diu	http://dd@envis.nic.in
Forests & Environment Department, Govt. of Jharkhand	http://www.jharenvis.nic.in
Forests, Environment & Wildlife Management Department, Sikkim	http://www.sikenvis.nic.in
Forest Research Institute (FRI)	http://www.frienvis.nic.in
Foundation for Revitalization of Local Health Traditions (FRLHT)	http://www.frlhtenvis.nic.in, http://www. envis.frlht.org
G.B. Pant National Institute of Himalayan Environment and	

Sustainable Development (GBPNIHESD)	http://www.gbpihedenvis.nic.in
Goa State Council of Science & Technology	http://www.goaenvis.nic.in
Gujarat Cleaner Production Centre (GCPC)	http://www.gcpcenvis.nic.in
Gujarat Ecology Commission (GEC)	http://gujenvis.nic.in
Indian Centre for Plastic in the Environment (ICPE)	http://www.icpeenvis.nic.in
Indian Environmental Society (IES)	http://www.iesenvis.nic.in
Indian Institute of Chemical Technology (IICT)	http://iictenvis.nic.in/
Indian Institute of Toxicology Research (IITR)	http://www.itrcenvis.nic.in
Indian Institute of Tropical Meteorology (IITM)	http://www.iitmenvis.nic.in, http://envis.tropmet.res.in
Institute of Forest Genetics and Tree Breeding (IFGTB)	http://www.envisindia.in/ifgtb
Institute for Ocean Management (IOM), Anna University	http://www.iomenvis.nic.in
International Institute of Health and Hygiene (IIHH)	http://www.sulabhenvis.nic.in
International Institute for Population Sciences (IIPS)	http://www.iipsenvis.nic.in
Kerala State Council for Science, Technology and Environment (KSCSTE)	http://www.kerenvis.nic.in
Mizoram Pollution Control Board	http://www.mizenvis.nic.in
Nagaland Institute of Health, Environment and Social Welfare (NIHESW)	http://www.nagenvis.nic.in
National Botanical Research Institute (NBRI)	http://www.nbrienvis.nic.in
National Environmental Engineering Research Institute (NEERI)	http://www.neerienvis.nic.in
National Institute of Occupational Health (NIOH)	http://www.niohenvis.nic.in
Puducherry Pollution Control Committee	http://www. pon@envis.nic.in
Punjab State Council for Science and Technology (PSCST)	http://www.punenvis.nic.in
Rajasthan State Pollution Control Board	http://www.rajenvis.nic.in
Salim Ali Centre for Ornithology and Natural History (SACON)	http://www.saconenvis.nic.in
School of Environmental Sciences Jawaharlal Nehru University (JNU)	http://www.jnuenvis.nic.in
School of Planning and Architecture (SPA)	http://www.spaenvis.nic.in
State Council for Science, Technology and Environment (SCSTE)	http://www.hpenvis.nic.in
State Council of Science and Technology for Sikkim (SCSTS)	http://www.scstsenvis.nic.in
State Environment Department, Maharashtra	http://www.mahenvis.nic.in
The Energy Resources Institute (TERI)	http://www.terienvis.nic.in
Tripura State Pollution Control Board	http://www.trpenvis.nic.in
Uttarakhand Environment Protection & Pollution Control Board (UEPPCB)	http://www.utrenvis.nic.in
Wildlife Institute of India (WII)	http://www.wiienvis.nic.in
World Wide Fund for Nature - India (WWF)	http://www.wwfenvis.nic.in
Zoological Survey of India (ZSI)	http://www.zsienvis.nic.in

___th National Children's Science Congress 20___

REGISTRATION FORM -A

Fill this form in Capital letters and submit to your District Coordinator

1. STATE

2. DISTRICT

3. TALUKA

4. TITLE OF THE PROJECT

5. SUB-THEME CODE

6. LANGUAGE USED

7. AREA [RURAL/URBAN]

8. NAME OF THE INSTITUTION

Address

PIN

9. NAME OF GROUP LEADER

Gender [Male/Female]

Date of Birth / / AGE Whether has disability (Y/N) Type of disability (see code)

Address

PIN Phone E-mail ID

10. NAME OF GROUP MEMBER

Gender [Male/Female]

Date of Birth / / AGE Whether has disability (Y/N) Type of disability (see code)

Address

PIN Phone E-mail ID

11. NAME OF GUIDE

Gender [Male/Female]

Address

PIN Phone E-mail ID

Name & Signature of District Coordinator

Name & Signature of Head of Institution

Date:

Sub Theme Codes : 01-Ecosystem and Ecosystem Services, 02-Health, Hygiene and Sanitation, 03-Waste to Wealth, 04-Society, Culture and Livelihoods, 05-Traditional Knowledge Systems

Types of Disabilities /Codes: Visual Impairment: VI, Low Vision: LV, Totally Blind: TB, Mental Retardation: MR Hearing Impairment: HI, Speech Impairment: SI, Multiple Disability : MI, Learning Disability : LD, Autism: AUT, Orthopedically Impaired: OI, Cerebral Palsy : CP

Age should be between 10-17 years as on 31st December of the current calendar year

District Coordinator to verify the age of all participants with Birth Certificates.

Copy of this form to be enclosed in the Project Written Report

NOTES

NOTES

SCIENCE, TECHNOLOGY AND INNOVATION FOR A
CLEAN, GREEN AND HEALTHY NATION

उत्प्रेरण एवं सहयोग

राविप्रौसंप NCSTC

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार
टेक्नोलॉजी भवन, न्यू मेहरॉली रोड, नई दिल्ली-110 016
टेली० : 011-26535564/226590251

मुद्रण एवं प्रबंधन

ASTEC

असम विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण परिषद् (ASTEC)
विज्ञान भवन, जी० एस० रोड, गुवाहाटी-781 005